पद्मसिंह शर्मा के पत्र

श्री प० पद्मसिंह शर्मा
जन्म-संवत् १९३३ वि०, मृत्यु-संवत् १९८९ वि०

पद्मसिंह शर्मा के पत्र

सम्पादक

बनारसीदास चतुर्वेदी
हरिशंकर शर्मा

१९५६
आत्माराम एण्ड संस
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता
काश्मीरी गेट
दिल्ली-६

प्रकाशक
रामलाल पुरी
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

मूल्य ६)

मुद्रक
उग्रसेन दिगम्बर
इण्डिया प्रिंटर्स
एस्प्लेनेड रोड, दिल्ली-६

गुरु और शिष्य

संस्कृत-सूर्य्य गुरुवर श्री प० काशीनाथजी शास्त्री [कुर्सी पर बैठे हुए]
विद्वद्वर श्री प० भीमसेन शर्मा [खड़े हुए]
[गुरुजी प० पद्मसिंह शर्मा के गुरु और शर्मा जी उनके सतीर्थ थे।
दोनों भारत-प्रसिद्ध विद्वान् थे।]

क्रम-सूची

परिशिष्ट

प्राक्कथन

चिट्ठियों का महत्त्व

कविता के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह हृदय का उद्‌गार होती है, अर्थात् कवि कविता में अपना हृदय उँडेल देता है। परन्तु कविता लिखने के लिए कवि होने की आवश्यकता है—कलाकार बनने की जरूरत है। मेरी राय में चिट्ठियाँ लिखना भी एक प्रकार की कला ही है। औपचारिक पत्रों को, जिनमें नौकरी-चाकरी, व्यापार-व्यवहार, राज-काज आदि की चर्चा होती है, जाने दीजिए; परन्तु निजी पत्र जो इष्ट-मित्रों या सगे-सम्बन्धियों को लिखे जाते हैं, उनमें लेखक के हृदय का वास्तविक चित्र अंकित होता है। ये निजी चिट्ठियाँ ही, जिनमें हृदय खोलकर बातें की जाती हैं, लेखक के वास्तविक व्यक्तित्व की परिचायक हैं। किसी विशेष स्थिति, प्रसंग या घटना के सम्बन्ध में, किसी के हृद्‌गत भाव जानने हों तो उसके निजी पत्रों का अवलोकन करना चाहिए। कवि या साहित्यकार जिन उद्‌गारों को कविताओं और निबन्धों में व्यक्त नहीं करते या कर पाते, उन्हें वे अपनी चिट्ठियों में अवश्य प्रकट करते हैं। कवियों या साहित्यकारों की रचनाएँ समझने के लिए, उनकी चिट्ठियों से बड़ी सहायता मिलती है। अंग्रेज़ी के महाकवि कीट्स की रचनाएँ समझने-समझाने के लिए 'कीट्स की चिट्ठियाँ' (लैटर्स ऑफ़ कीट) शीर्षक एक पृथक् निबन्ध की आवश्यकता हुई। इसी प्रकार 'जीवन और पत्र' (लाइफ़ एण्ड लैटर्स) आदि निबन्ध भी लिखे गये।

कवि या साहित्यकार के दृष्टिकोण या उसकी प्रवृत्ति में कब, किस प्रकार, कितना परिवर्तन हुआ, यह बात उसकी लिखी चिट्ठियों से ही भली प्रकार जानी जा सकती है। अभिप्राय यह है कि किसी का वास्तविक व्यक्तित्व या प्रकृत चरित्र जानने के लिए उसकी चिट्ठियाँ ही सुलभ और सबल साधन हैं। व्यक्तियों की विशेषताएँ और निर्बलताएँ, मित्रों को लिखी उनकी चिट्ठियों से ही प्रकट होती हैं। किसी कवि या लेखक का अपनी और दूसरों की रचनाओं के सम्बन्ध में क्या विचार है, इसकी झलक भी उसके पत्रों की भाषा में ही दिखाई देगी। किस घटना का किसी के हृदय पर क्या प्रभाव पड़ा, उसकी व्यंजक निजी चिट्ठियाँ ही हो सकती हैं। अपने, अपनी रचना या कार्य-शैली के सम्बन्ध में जो संकेत निजी पत्रों में किया जाता है, वह अन्य प्रकार सम्भव नहीं है। चिट्ठियों द्वारा दो भिन्न या अभिन्न रुचियों और प्रवृत्तियों की तुलना करने में भी बड़ी मदद मिलती है।

प्रसन्नता-अप्रसन्नता, आशा-निराशा, स्नेह-सहानुभूति, भय-संकोच, घृणा-आश्चर्य, शान्ति-सन्तोष आदि के भाव किस घटना, प्रसंग या दृश्य द्वारा कब कितनी मात्रा में हृदय पर अंकित हुए, इसका यथार्थ माप भी निजी चिट्ठियों द्वारा ही हो सकता है। किसी का विशेष व्यसन या शौक़ भी चिट्ठियों की पंक्तियों में ही दृष्टिगत होता है। किसी कवि, लेखक या व्यक्ति विशेष की रचनाएँ और वक्तृताएँ, कभी-कभी बड़ी ही भ्रामक होती हैं। रचनाओं में और मंच पर उसका जो रूप दिखाई देता है, प्रायः वह पत्रों की भाषा से भिन्न होता है। एक कवि या कलाकार मंच पर खड़ा होकर, अपनी कविता के कारतूस से पूँजीवाद के पिशाच को नष्ट-भ्रष्ट कर देना चाहता है, परन्तु चिट्ठियों में पूँजीवाद की भावना का समर्थन करता हुआ, स्वयं पूँजीपति बनने की चेष्टा करता रहता है। कुछ वक्ता या लेखक महोदय जनता के सामने वक्तृता या निबन्ध-पाठ में, मदिरा-पान के विरुद्ध, बड़ी कलात्मक शैली में घोषणा करते हैं, परन्तु चिट्ठियों में मित्रों से बढ़िया शराब भेजने की फ़रमायश करना अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझ बैठे हैं। ऐसी अवस्था में उनका व्यक्तित्व पत्रों के अतिरिक्त कविता या कला में कैसे खोजा जा सकता है? वस्तुतः वास्तविक व्यक्तित्व अन्य रचनाओं में नहीं, केवल पत्रों के पृष्ठों पर ही अंकित रहता है। किसी व्यक्ति की क्या हार्दिक अभिलाषा है, वह अपना जीवन-पथ किस दिशा में बनाना चाहता है, इसका आभास भी मित्र-मिलापियों या सगे-सम्बन्धियों को लिखे उसके निजी पत्रों में ही मिलेगा।

यों साधारण साक्षर व्यक्ति भी चिट्ठियाँ लिखते समय उनमें अपना हृदय उँडेल देते हैं। बिना पढ़े-लिखे लोग जो चिट्ठी-पत्री लिखना नहीं जानते, वे दूसरों से उन्हें लिखाते हैं और चाहते हैं कि उनकी उस चिट्ठी में उन्हीं की भाषा तथा भावना, अविकल रूप से, अंकित कर दी जाय। लेखक अपनी ओर से कुछ जोड़े, छोड़े या मोड़े-मरोड़े नहीं। ऐसे लोग अपने इष्ट-मित्रों और सम्बन्धियों तक, अपनी बोली में ही अपने उद्गार पहुँचाना चाहते हैं। जो लोग गाँवों में रहते और इस प्रकार के पत्र लिखते रहते हैं, वे इस भावना को भली प्रकार जानते हैं। कितने ही शिक्षित व्यक्ति चिट्ठी तो अच्छी लिख लेते हैं, परन्तु 'काग़ज़ पर कलेजा' काढ़कर रख देने की कला न जानने के कारण, वे कलात्मक या प्रभावशाली पत्र नहीं लिख पाते। कविता की तरह, पत्रों में भी 'फ़साहत-बलाग़त' यानी प्रसाद-गुण और चमत्कार हो तो वे भी उपयोगी बनने के साथ-साथ कला की दृष्टि से भी बहुत श्रेष्ठ हो सकते हैं। किसी ने कहा है—

"समझ में साफ़ आ जाए, 'फ़साहत' उसको कहते हैं,
असर हो सुननेवाले पर 'बलाग़त' उसको कहते हैं।"

जिस पत्र के सुनने-समझने या पढ़ने-पढ़ाने में आनन्द की गंगा उमड़े, वही

कला का उत्कृष्ट नमूना है। यों सब चिट्ठियाँ, चाहे वे कलात्मक न हों, हृदय की भाषा होने के कारण, महत्त्वपूर्ण और उपयोगी होती हैं। उनसे, निस्सन्देह किसी का भाव, स्वभाव, प्रभाव और व्यक्तित्व जानने में बड़ी सहायता मिलती है।

अंग्रेज़ी आदि विदेशी भाषाओं में चिट्ठियों का बड़ा महत्त्व है। प्रायः सब ही महान् पुरुषों के, जिनमें कवि और साहित्यकार भी हैं, पत्र-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। हमारे देश में, बंगला और उर्दू इस दिशा में सौभाग्यशालिनी हैं। उर्दू में प्रायः सब ही महाकवियों और साहित्यकारों के पत्र-संग्रह मौजूद हैं। 'ग़ालिब', 'आज़ाद', 'न्याज़', 'हाली', 'नज़ीर अहमद', 'सर सय्यद', 'अमीर मीनाई', अकबर 'इलाहाबादी', शिब्ली, अमजद, हाशिमी आदि साहित्यकारों और कवियों के पत्र-संग्रह आपको पुस्तक-विक्रेताओं की दुकानों पर आसानी से मिल सकेंगे। अब तक पचास के लगभग ऐसे संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। प्रसिद्ध विद्वान् और लेखक ख्वाजा हसन निज़ामी ने तो 'अतालीक खतूत नवीसी' नामक एक विस्तृत पुस्तक ही लिखी है, जिसमें पत्र-लेखन-कला-कोविद विद्वानों की चर्चा करके उनकी कला के नमूने भी दिये हैं। इसके अतिरिक्त 'रुक्कात आलमगीर', 'मकातीब शिब्ली' आदि पुस्तकें भी पत्र-लेखन-कला से सम्बन्ध रखती हैं। उर्दू ही नहीं, फ़ारसी के विद्वानों की चिट्ठियाँ भी प्रकाशित हो चुकी हैं।

बंगला में गुरुदेव रवीन्द्र और शरत् बाबू के पत्रों के संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। और भी कई संग्रह निकले हैं।

भारत के शिक्षामन्त्री मौलाना आज़ाद साहब भी पत्र-कला-कुशल व्यक्ति हैं। आपने अहमदनगर जेल से उर्दू में जो पत्र लिखे थे, वे भी पुस्तकाकार प्रकाशित हुए हैं।

अंग्रेज़ी, फ़ारसी, उर्दू की चिट्ठियों के सम्बन्ध में तो ऊपर संकेत किया गया, परन्तु इस दृष्टि से हिन्दी को देखते हैं तो बड़ी निराशा होती है। वह इस क्षेत्र में बहुत पिछड़ी हुई है। जहाँ तक हमें ज्ञात है, पचास वर्ष पूर्व स्व० महात्मा मुंशीरामजी (श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी) ने सबसे पहले हिन्दी में श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती के सम्बन्ध की चिट्ठियों का एक संग्रह प्रकाशित किया था। इस संग्रह में स्वामी दयानन्दजी की लिखी चिट्ठियाँ कम थीं, उनके नाम दूसरों की चिट्ठियाँ अधिक थीं। इसके पश्चात् श्री प० भगवद्दत्तजी ने बड़े परिश्रम और प्रयत्न से खोज-खोजकर श्री स्वा० दयानन्द सरस्वती के लिखे पत्रों का एक वृहत् संग्रह प्रकाशित किया। जैसा कि ऊपर कहा गया है, मनुष्य का पूर्ण और विस्तृत व्यक्तित्व उसकी चिट्ठियों में छिपा रहता है, इसी आधार पर स्वामीजी का व्यापक स्वरूप देखने के लिए, उनके इस 'पत्र-संग्रह' से बड़ी सहायता मिलेगी।

स्वामी दयानन्दजी के ग्रन्थों को पढ़ने से यही जाना जाता है कि वे वेद-शास्त्रों के उद्भट विद्वान्, निर्भय आलोचक, देश-भक्त और बाल ब्रह्मचारी थे। साथ ही वे त्यागी, तपस्वी, निरीह संन्यासी भी थे। परन्तु जब हम उनके उक्त 'पत्र-संग्रह' को पढ़ते हैं, तो यह भी विदित होता है कि स्वामीजी में व्यावहारिक बुद्धि भी अच्छी थी। वे प्रबन्ध या व्यवस्था करने-कराने में भी बड़े कुशल थे। पाई-पाई पर उनका ध्यान रहता था। वे हिसाब-किताब सम्बन्धी रसीदें लेने, प्राप्तिकर्त्ता से नियमानुसार हस्ताक्षर कराने, अच्छे-बुरे कर्मचारी को परखने, उसे नियुक्त एवं वियुक्त करने आदि का भी अच्छा अनुभव और ज्ञान रखते थे। टाइप, काग़ज़ और छपाई सम्बन्धी बातों की भी उन्हें ख़ूब जानकारी थी। वे यह भी प्रयत्न करते थे कि उनके आन्दोलन की प्रगति-सूचनाएँ तत्कालीन अंग्रेज़ी और हिन्दी-उर्दू के पत्रों में प्रकाशित होती रहें। 'ट्रिब्यून' में यह सूचना अवश्य छपे, 'भारतमित्र' में उस बात का संशोधन छपा दो, इत्यादि प्रचार-सम्बन्धी बातों पर भी वे पूरा ध्यान देते थे। उन्हें अपने प्रचारकों के स्वागत-सत्कार पर भी नज़र रखनी पड़ती थी। वे लाहौर में अपने एक भक्त को लिखते हैं—"वे . पहुँचें तो अपने लोग स्टेशन पर मौजूद रहें, और उनको अच्छी प्रकार ख़ातिर के साथ लेकर अपनी बैठक या किसी अच्छे मकान में ठहरावें।" यही नहीं, इससे भी बढ़कर, उन्हें विदेशों में धर्म-प्रचार कराने और वहाँ भारत-गौरव बढ़ाने का भी ध्यान था। वे अपने शिष्य प्रसिद्ध क्रान्तिकारी विद्वान् श्यामजी कृष्ण वर्मा को विदेश भेजते समय एक चिट्ठी में आदेश देते हैं—

"देखो, तुम विदेश में जाकर अपने को भारत का बहुत छोटा विद्यार्थी बताना और कोई ऐसा काम न करना जिससे अपने देश का ह्रास होवे। जो कुछ कहो समझकर कहना।"—(१५ जुलाई, १८७२)

इन पत्रों को पढ़कर साश्चर्य कहना पड़ता है कि स्वामीजी वेदवेत्ता ही नहीं, व्यवहार में भी बड़े कुशल थे। यदि ये पत्र सामने नहीं आते तो लोगों की यही धारणा बनी रहती कि वेदज्ञ स्वामीजी को इन व्यावहारिक झगड़े-बखेड़ों से कोई सरोकार न रहा होगा। महात्मा गांधी के जो पत्र प्रकाशित हो चुके हैं उनमें कितने ही अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। पर अभी उनके सहस्रों पत्र अप्रकाशित पड़े हुए हैं।

हाँ, स्वामी दयानन्दजी के उपर्युक्त पत्र-संग्रह से यह भी जाना गया कि वे संस्कृत और हिन्दी के प्रबल प्रचारक और समर्थक होते हुए भी अंग्रेज़ी और उर्दू से घृणा न करते थे। उनके हस्ताक्षरों से अंग्रेज़ी और उर्दू में कितनी ही चिट्ठियाँ भेजी गई हैं। एक चिट्ठी में वे लिखते हैं—"हम बमुक़ाम छलेसर, परगना मोरथल, ज़िला अलीगढ़ में क़यामपज़ीर हैं। जुलाब जो लिया था उससे फ़ारिग़ हो गये। मगर कमज़ोरी किस क़दर है।" २३-६-७६। स्वामीजी के इस भाषा में लिखे अनेक पत्र

हैं। उनके ग्रन्थ पढ़ने वाले कल्पना भी नहीं कर सकते कि कभी स्वामीजी ने अपने व्यवहार में ऐसी भाषा का भी प्रयोग किया होगा ? गत सौ-सवा-सौ वर्षों में, हमारे देश में अनेक विभूतियाँ हो गईं, परन्तु उनके पत्र-प्रकाशन की ओर बहुत ही कम ध्यान दिया गया है। हिन्दी साहित्य-महारथियों के 'पत्र-संग्रह' भी प्रायः न प्रकाशित होने के बराबर हैं। निश्चय ही यह हमारे लिए दुःख और लज्जा की बात है।

जहाँ चिट्ठियाँ लिखना एक कला है, वहाँ उनको संग्रह कर सुरक्षित रखना और सम्यक् सम्पादन के पश्चात् उचित रीति से प्रकाशित कराना भी एक कला है। इस प्रकार के कलाकारों में रायकृष्णदासजी और श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के नाम विशेष रूप से उल्लेख योग्य हैं। इन दोनों महानुभावों से हमारा आग्रहपूर्ण निवेदन है कि वे इन पत्र-रत्नों को हिन्दी जगत् के सामने लाने का शीघ्र उद्योग करें।

जहाँ तक अपनी जानकारी है, हिन्दी में आचार्य पद्मसिंह शर्मा पत्र-लेखन-कला में पारंगत थे। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के पत्र वास्तविक स्थिति के पोषक एवं परिचायक हैं। श्री भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, श्री प्रतापनारायण मिश्र और श्री बालमुकुन्द गुप्त की चिट्ठियों में भी अच्छी चुलबुलाहट पाई जाती है। श्री प्रेमचन्दजी के पत्र भी बड़े मार्के के हैं। काश इन तथा अन्य साहित्य-महारथियों के पत्र-संग्रह प्रकाशित हो सकें तो हिन्दी की बड़ी सेवा हो।

ऊपर अधिकतर निजी पत्रों की ही चर्चा की गई है, उन्हीं की उपयोगिता पर ध्यान रहा है। परन्तु हम समझते हैं, उन पत्रों का भी महत्त्व कम नहीं है, जो राजनीतिक या अन्य किसी दृष्टि से उपयोगी हो सकते हैं, या जिनके आधार पर बड़े-बड़े समझौते हुए अथवा कोई विशेष घटना घटी है। महात्मा गांधी को अपने जीवन में—निजी नहीं—राजनीतिक दृष्टि से कितने ही ऐतिहासिक पत्र लिखने पड़े। देश के अन्य महापुरुषों के भी ऐसे पत्र हैं और हो सकते हैं, वे सब ही राष्ट्र और साहित्य की अमूल्य निधि हैं। क्यों न वे सब पुस्तकों के रूप में प्रकाशित किये जायं। वैयक्तिक जीवन न सही, राष्ट्रिय जीवन पर तो उनसे प्रकाश पड़ेगा ही। चिट्ठियों के सहारे ही व्यापार, राज-काज और संसार का सारा व्यवहार चल रहा है। अतएव उनकी प्रत्येक दृष्टि से बहुत बड़ी उपयोगिता तथा महत्ता है।

साहित्यिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, सामाजिक इत्यादि सभी प्रकार के पत्र संगृहीत होने चाहिएँ। इस कार्य के लिए एक सुदृढ़ संस्था या विभाग का निर्माण हो। यह विभाग चिट्ठियों के संग्रह, सम्पादन और प्रकाशन में सतत संलग्न रहे। जिस पत्र या पत्र की जिन पंक्तियों से देश या समाज का कुछ भी हित हो सकता हो वे प्रकाश में अवश्य आवें, सार्वजनिक हित की भावना ही सच्चे साहित्य में परिणत होती है। अभिप्राय यह है कि महापुरुषों और कवि-साहित्यकारों के पत्र भी साहित्य सीमा में

प्रविष्ट किये जायँ। वे साहित्य-शरीर की सुदृढ़ रीढ़ का काम देंगे। उनसे पाठकों की जानकारी बढ़ेगी और वे अनुप्राणित भी होंगे। हिन्दी वालों के लिए यह कार्य अनिवार्य होना चाहिए।

एक बात और है, लोगों में पत्रों की उपयोगिता के अनुसार उन्हें संवारकर रखने की प्रवृत्ति जागरूक होनी चाहिए। साधारणतः पत्र पढ़कर, उन्हें रद्दी खाते में फेंक देने की हमारी आदत है। यह ठीक नहीं है। यथासम्भव, स्थायी उपयोगिता के पत्रों को सुरक्षित रखना ज़रूरी है। कोई उदीयमान नवयुवक या विद्यार्थी कब कितना महान् पुरुष बन जायगा, इसे कौन जानता है। बड़े आदमियों के बाल्य-काल के लिखे पत्र भी बहुत महत्त्वपूर्ण बन जाते हैं। कविरत्न सत्यनारायण के स्वर्गवास के पश्चात् बालक या विद्यार्थी सत्यनारायण की लिखी चिट्ठियों का मूल्य या महत्त्व बढ़ जाना स्वाभाविक था। क्योंकि उनकी जीवनी के लिए वे अति आवश्यक समझी गईं। आज तुलसीदास, सूरदास, कबीर, नज़ीर आदि के पत्र किसी के पास हों तो वे लाखों की सम्पत्ति से कम न समझे जायँगे।

चिट्ठियों में लेखक की हस्तलिपि और उसके व्यक्तित्व के दर्शन तो हो जाते हैं परन्तु साक्षात् शरीर-पिण्ड के दर्शन नहीं होते। इसलिए जिस व्यक्ति के पत्रों का संग्रह प्रकाशित हो उसके सभी उपलब्ध चित्र भी प्रकाशित किये जायँ। सन्, संवत् का भी उल्लेख रहे। यदि किसी पत्र के सम्बन्ध में कोई घटना व्याख्या की अपेक्षा रखती हो तो वह भी कर दी जाय। हाँ, पत्रों की जिन बातों से कटुता, अश्रद्धा या अरुचि उत्पन्न होने की आशंका हो, उनके न प्रकाशित करने में ही हित है।

चिट्ठियों की उपयोगिता और महत्ता के सम्बन्ध में ऊपर कुछ पंक्तियाँ लिखी गई हैं। आशा है, हिन्दी संसार उन पर विचार करेगा।

शंकर-सदन
लोहामण्डी, आगरा

हरिशंकर शर्मा

भूमिका

पत्र-लेखन कला

सन् १८८७—

२१ वर्ष का एक फरांसीसी युवक पेरिस की एक मामूली गली में अपने छोटे-से कमरे में बैठा हुआ है। वह कला और गान-विद्या का प्रेमी है। अभी हाल ही में टालसटाय की पुस्तक 'What is to be done ?' (हमारा कर्तव्य क्या है?) छपी है। इस पुस्तक में टालसटाय ने कला-सम्बन्धी प्रचलित विचारों पर काफ़ी ज़ोरदार आक्षेप किये हैं। इस पुस्तक को पढ़कर उस युवक की मानसिक स्थिति डाँवाँडोल हो गई, क्योंकि अब तक वह टालसटाय को अपना आदर्श मानता रहा है। उसने मन में सोचा कि चलो, टालसटाय को एक चिट्ठी ही लिख दूँ, वह महान् लेखक मेरे जैसे मामूली युवक के पत्र का उत्तर तो भला क्यों देने लगा ! उसने टालसटाय को एक पत्र भेज दिया, जिसमें उसने अपनी शंकाएँ लिखी थीं, और कुछ दिनों तक उत्तर की प्रतीक्षा भी की, फिर इस बात को भूल ही गया। कुछ सप्ताह इसी प्रकार बीत गये। एक दिन शाम के वक़्त वह अपने कमरे पर लौटा, तो देखता क्या है कि फरांसीसी भाषा में एक लम्बी चिट्ठी कहीं से आई है। उसको खोलने पर मालूम हुआ कि यह तो टालसटाय का पत्र है ! वह पत्र ३८ पृष्ठ का था, या यों कहिये कि एक छोटा-सा ट्रेक्ट ही था। उस अपरिचित साधारण युवक को टालसटाय ने 'प्रिय बन्धु' लिखा था। पत्र के प्रारम्भिक शब्द थे—"तुम्हारी पहली चिट्ठी मुझे मिली। उससे मेरा हृदय द्रवित हो गया। पढ़ते-पढ़ते आँखों में आँसू आ गये।" इसके बाद टालसटाय ने अपने कला-सम्बन्धी विचार उस पत्र में प्रकट किये थे—"दुनिया में वही चीज़ क़ीमती है, जो मनुष्यों के पारस्परिक सम्बन्ध को दृढ़ करे, जो उनमें भ्रातृ-भाव स्थापित करे, और सच्चा कलाकार वही है, जो अपने सिद्धान्तों तथा विश्वासों के लिए त्याग और बलिदान करने के लिए तैयार हो। सच्चे पेशे की पहली शर्त कला का प्रेम नहीं, बल्कि मानव-जाति से प्रेम है ! जिनके हृदय में मनुष्य-जाति के प्रति प्रेम है, वे ही कभी कलाकार की हैसियत से उपयोगी कार्य करने की आशा कर सकते हैं।" टालसटाय के विस्तृत पत्र का सारांश यही था।

इस पत्र ने उस युवक के हृदय पर बड़ा भारी प्रभाव डाला। सबसे महत्त्वपूर्ण बात उसे यह जँची कि इस विश्व-विख्यात महापुरुष ने मेरे जैसे एक अपरिचित युवक को इतनी लम्बी और सहृदयतापूर्ण चिट्ठी भेजी है, और तब से उस युवक ने यह निश्चित कर लिया कि यदि कोई आदमी संकट के समय में अन्तरात्मा से कोई पत्र

भेजेगा तो मैं अवश्य ही उसका उत्तर दूँगा, क्योंकि संकटग्रस्त मनुष्य की सेवा ही कलाकार का सर्वोत्तम गुण है।

वह युवक था रोमाँ रोलाँ, जिसने आगे चलकर विश्व-साहित्य में अपना एक विशेष स्थान बना लिया, जिसे नोबिल प्राइज़ मिली और जिसने अनेक अमर ग्रन्थों की रचना की। पर रोमाँ रोलाँ के ग्रन्थों के समान उनके सहस्रों पत्रों का भी महत्त्व है, जिनके द्वारा उन्होंने सैकड़ों लेखकों का पथ-प्रदर्शन किया था और असंख्य दुःखितों तथा पीड़ितों के हृदय को सान्त्वना प्रदान की थी। टाल्सटाय की उस एक चिट्ठी ने जो बीज बोया था, वह वट-वृक्ष के रूप में पल्लवित हुआ। रोमाँ रोलाँ के लिखे हज़ारों ही पत्र आज विद्यमान हैं और सुना है कि वे कितनी ही जिल्दों में फरांसीसी भाषा में छप भी गये हैं। जिस दिन टाल्सटाय ने उस पत्र के लिए कुछ घंटे व्यय किये थे, उन्होंने स्वप्न में भी यह ख़याल न किया होगा कि आगे चलकर मेरा यह पत्र इतना सफल होगा।

इस घटना से पत्र-लेखन-कला का महत्त्व प्रकट होता है। खेद की बात है कि हिन्दी जगत् ने इस महत्त्व को अभी तक भली भाँति नहीं समझा। जहाँ तक हम जानते हैं हिन्दी में कुल जमा दो-तीन पत्र संग्रह हैं—एक तो ऋषि दयानन्द के पत्रों का संग्रह और दूसरा स्व० प० महावीरप्रसादजी द्विवेदी की चिट्ठियों का। आवश्यकता इस बात की है कि हम लोग सर्वोत्तम पत्रों को एक जगह संग्रह करके उन्हें कई जिल्दों में छपा दें। सुना है कि उर्दू में चालीस से अधिक पत्र संग्रह विद्यमान हैं और एक उर्दू विद्वान् मि० फरूखी ने उनका अन्वेषण करके उन पर एक निबन्ध लिखा है और पी-एच० डी० की उपाधि भी प्राप्त की है।

'प्राचीन पत्र-लेखन' नामक एक निबन्ध से, जो स्व० डॉक्टर हीरानन्द शास्त्री एम० ए०, डी०लिट० ने जनवरी सन् १६३८ के 'विशाल भारत' में लिखा था, इस कला की प्राचीनता का कुछ परिचय मिलता है। उसी प्रकार मार्च सन् १६४० के 'विशाल भारत' में श्री हजारीप्रसादजी द्विवेदी द्वारा लिखित २०० वर्ष पुरानी खड़ीबोली के पत्रों के नमूने छपे थे। इस विषय का ऐतिहासिक अनुसन्धान करने वाले विद्यार्थियों को ये दोनों लेख अवश्य पढ़ लेने चाहिएँ। यही नहीं अन्य भाषाओं के पत्र संग्रहों को पढ़े बिना हम हिन्दी पत्रों का उचित मूल्याङ्कन करने में समर्थ न होंगे।

१८ सितम्बर सन् १६५३ के Times Literary Supplement (विलायत के 'टाइम्स' पत्र के साहित्यिक विशेषांक) में डॉक्टर जॉनसन के पत्र-संग्रह की आलोचना छपी थी। तीन जिल्दों का यह संग्रह R. W. Chapman द्वारा सम्पादित है और ६ पौंड ६ शिलिंग में प्राप्य है। चैपमैन साहब ने इस पुण्य कार्य में अपने जीवन के पच्चीस वर्ष लगा दिये थे!

पत्र-व्यवहार एक व्यसन

कोई भाँग पीता है, कोई तमाखू खाता है, किसी को अफीम की लत है, तो किसी को गाँजे का शौक। सुरों की प्रिय सुरा पीने वालों का क्या कहना! और चाय के पियक्कड़ों की संख्या तो दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ रही है। 'वह और उसका भाई पीता है चाय' यह सचित्र विज्ञापन टीन पर छपा हुआ, किसी भी नगर में आपको दीख पड़ेगा। पर इन सब नशों की तरह का, उतना ही उन्मादक एक नशा और भी है और वह है चिट्ठियाँ भेजने का।

स्वर्गीय पण्डित पद्मसिंहजी शर्मा ने अपने ग्रन्थ 'पद्म-पराग' में पण्डित भीमसेन शर्मा के संस्मरणों में एक जगह लिखा है—"पत्र-व्यवहार का मुझे एक व्यसन-सा रहा है। पत्र लिखते-लिखते ही मैंने कुछ लिखना सीखा है। पण्डित भीमसेनजी मुझे दाद दे-देकर पत्र लिखने के लिए उत्साहित करते रहते थे। उस समय के उस संस्कृतमय पत्र-व्यवहार का अधिकांश अब भी मेरे पास सुरक्षित है। उस सिलसिले के जो पत्र नष्ट हो गये हैं, उनका अफ़सोस साहित्य की बहुत-सी पोथियाँ जमा कर लेने पर भी अब तक बाक़ी है। अब भी जब कभी उन पत्रों को पढ़ता हूँ तो वही आनन्द पाता हूँ। किसी सुलेखक और सहृदय विद्वान् के साथ इस प्रकार का पत्र-व्यवहार भी शिक्षा का एक साधन है।"

यदि धृष्टता क्षन्तव्य समझी जाय तो मैं भी यही कहूँगा कि आचार्यजी की तरह मुझे भी पिछले चालीस वर्षों से पत्र-व्यवहार का व्यसन रहा है और इसमें मेरे समय और शक्ति का बहुत कुछ अपव्यय भी हुआ है। मेरा ख़याल है कि शराब को छोड़कर शायद ही कोई दूसरा व्यसन इतना अधिक ख़र्चीला हो।

हमने कहीं पढ़ा था कि जर्मनी के महान् कवि गेटे ने पत्रों के विषय में एक नियम बना लिया था। वे उन्हीं पत्रों का उत्तर देते थे, जिनमें उन्हें कोई कुछ देने का वचन देता था और शेष पत्रों को, जिनमें कुछ माँगने की बात होती, फाड़ फेंकते थे! सुना है कि आस्कर वाइल्ड बहुत ही कम चिट्ठियों का जवाब देता था और उसने एक जगह कहा था कि पत्रों का उत्तर देना अपने साहित्यिक जीवन को नष्ट करना है! अमरीका के सुप्रसिद्ध लेखक थोरो पत्रों को बिल्कुल ही महत्त्व नहीं देते थे। एक पत्र के उत्तर में उन्होंने लिखा था, "मैंने कभी आपको पत्रोत्तर देने का वचन नहीं दिया था, इसलिए यह पत्रोत्तर भेजकर मैं अपनी प्रतिज्ञा से ऊपर का काम कर रहा हूँ।" उन्होंने एक जगह यह भी लिखा था, "जो आदमी भाग-भागकर डाकखाने जाते हैं और वहाँ से अपने नाम आये हुए पत्रों का पुलन्दा लाते हैं—ऐसा प्रतीत होता है, उन्हें बहुत दिनों से अपने भीतर वाले से कोई ख़बर नहीं मिली?" पर जिन्हें पत्र-व्यवहार का व्यसन लग गया

है वे न तो महाकवि गेटे के उदाहरण से निरुत्साहित हो सकते हैं और न आस्कर वाइल्ड का उपदेश उन पर कुछ असर कर सकता है; फिर भला फक्कड़ शिरोमणि थोरो की बात क्यों सुनने लगे ?

जैसे शराब के पीने वाले अपने बचाव के लिए कभी-कभी कह देते हैं—'अजी साहब ! बलराम पीते थे और सुकरात भी पीते थे, हमीं ने क्या गुनाह किया है ?" और एक बार तो स्वर्गीय प्रतापनारायण मिश्र ने नाटक के बीच में कह दिया था—

"बामन पीवैं, खत्री पीवैं, पीवैं अग्गरवाला।
हम ऐडीटर पी लई तो करेगा क्या कोई साला ?"

उसी प्रकार जिन्हें चिट्ठी-पत्री का चस्का लग चुका है वे रोमाँ रोलाँ और दीनबन्धु ऐण्ड्रूज़, महात्मा गान्धी तथा आचार्य पद्मसिंहजी के नाम ले सकते हैं !

पत्र-व्यवहार और मछली का शिकार

पत्र-व्यवहार मछली के शिकार जैसा व्यसन है ! दोनों में अनन्त धैर्य की आवश्यकता है। मछुए को उतना आनन्द किसी भारी-भरकम मछली के काँटा निगलने पर भी न आता होगा जो किसी महापुरुष से पत्र पाने पर पत्र-व्यवहार के शिकारी को आता है !

आज से छत्तीस वर्ष पहले की बात है, मैंने 'फिजी द्वीप में इक्कीस वर्ष' नामक पुस्तक (जो स्व० पण्डित तोतारामजी सनाढ्य की सहायता से और उन्हीं के नाम से लिखी गई थी) कवीन्द्र, श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की सेवा में भेज दी। मैं जानता था कि गुरुदेव प्रवासी भारतीयों के शुभचिन्तक हैं और दीनबन्धु ऐण्ड्रूज़ तथा मि० पियर्सन के कारण उनके प्रश्नों में रुचि भी रखते हैं, इसलिए पत्रोत्तर की कुछ आशा थी, वैसे उन जैसे विश्व-विख्यात महापुरुष से पत्र पा लेना आसान नहीं था। मेरी वह आशा पूर्ण हुई। गुरुदेव ने निम्नलिखित पत्र भेजकर मुझे कृतार्थ किया; वैसे यह एक साधारण पत्र है, पर मेरे लिए स्वभावतः यह महत्त्वपूर्ण था—

Calcutta
Nov. 8, 1915

Dear Sir,

Please accept my thanks for your remarkable Hindi book dealing with the Indian emigrants in Fiji Islands. It is a valuable document and I hope it will lead to beneficial results in the hands of our friends, who are working in the interest of Indian Emigrants.

Yours sincerely
Rabindranath Tagore

इसके बाद गुरुदेव से चार पत्र मुझे और भी मिले, जिनमें दो बँगला में हैं। एक बार मैंने देवनागरी लिपि में एक बँगला चिट्ठी गुरुदेव की सेवा में भेजने की धृष्टता की थी। बँगला में लिखने का वह प्रथम प्रयत्न ही था, इसलिए स्वभावत: उसमें अनेक भूलें रह गई थीं। पर गुरुदेव ने लिखा—

"आपनार बांला चिठि खानि सुन्दर हइयाछे। दुई एकटि या भूल आछे ताहा यत्सामान्य।"

गुरुदेव के अतिरिक्त रोमाँ रोलाँ के भी फरांसीसी भाषा में लिखित तीन पत्र प्राप्त करने का मुझे सौभाग्य मिला और भारतवर्ष के सर्वश्रेष्ठ पत्र-लेखक महामाननीय श्रीनिवास शास्त्री ने हमें चालीस से ऊपर पत्र भेजकर कृतार्थ किया। बापू के तो एक सौ पत्र मेरे पास इकट्ठे हो गये। स्वर्गीय प्रेमचन्दजी के अठारह तथा स्व० श्रीधर पाठक के ३०-३५ पत्र मुझे मिले और सम्पादकाचार्य द्विवेदीजी के ६० पत्र। आचार्य प० पद्मसिंहजी की तो मुझ पर विशेष कृपा रहती ही थी और उनके सवा सौ पत्र मुझे मिले। और दीनबन्धु ऐण्ड्रूज़ के पत्रों की मैं अभी तक गिनती भी नहीं कर पाया!

१५ जुलाई सन् १९२१ को कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने दीनबन्धु सी. एफ़. ऐण्ड्रूज़ को लिखा था—

"As a letter-writer you are incomparable! Your letters come down like showers of rain upon the thirsty land. Writing letters is as easy to you as it is easy for our Sal Avenue to put forth its leaves in the beginning of the spring month."

अर्थात् "पत्र-लेखक की हैसियत से आप अनुपम हैं। आपके पत्र धारा रूप में उसी प्रकार बरसते हैं जिस प्रकार प्यासी भूमि पर वर्षा की धाराएँ, और आपके लिए पत्र लिखना उतना ही आसान है जितना वसन्त ऋतु के प्रारम्भ में हमारी शाल कुंज के लिए नवीन पत्र धारण करना।"

मि० ऐण्ड्रूज़ की जो प्रशंसा कवीन्द्र ने की थी, उसमें अत्युक्ति नहीं पर स्वयं कविवर पत्र लेखकों में शिरोमणि थे। जो महानुभाव उनके अंग्रेज़ी पत्रों को पढ़ना चाहें वे George Allen and Unwin लन्दन से Letters to a friend मँगा सकते हैं। एक पत्र में गुरुदेव ने पत्र-लेखन कला की खूबी को बड़ी मनोहर भाषा में प्रकट किया है—

"आपकी चिट्ठियाँ इसलिए आनन्दप्रद होती हैं कि आप छोटी-छोटी बातों में

जिनकी प्रायः उपेक्षा की जाती है, रुचि रखते हैं । इस दुनिया को वे चीज़ें ही सुन्दर बनाती हैं जिन्हें महत्त्वहीन समझा जाता है। वे छोटी-छोटी बातें ही संसार रूपी चित्र में छाया और रंग भरने का काम करती हैं। महत्त्वपूर्ण चीज़ें तो सूर्य की रोशनी के समान हैं। उनका उद्गम महान् है, लेकिन छोटी-छोटी चीज़ें हमारे जीवन के लिए वातावरण का काम देती हैं । वे सूर्य की किरणों का प्रसार करती है और वायुमण्डल में रंग का संचार और वे ही सूर्य की रश्मियों में कोमलता का समावेश कर देती हैं।"

वस्तुतः पत्रों में छोटी-छोटी बातों का ही महत्त्व है। ए. जी. गार्डनर ने अपने एक निबन्ध में लिखा था—

"The secret of letter writing is intimate triviality."

घरेलूपन से भरी छोटी-छोटी बातों में ही पत्र-लेखन कला की सफलता का रहस्य छिपा हुआ है । काउपर ने, जो अंग्रेज़ी पत्र-लेखकों में शिरोमणि माने जाते हैं, घर से अपने एक खरगोश के निकल भागने और फिर पकड़े जाने का समाचार बड़े उत्साह से लिख भेजा था। १७६ वर्ष पुराना वह पत्र आज भी पठनीय है।

काउपर के इस खरगोश वाले पत्र का मुकाबला कीजिये। महात्मा गांधीजी के बिल्ली सम्बन्धी पत्रों से, जो उन्होंने यरवदा मन्दिर से लिखे थे—

यरवदा जेल में जिस 'यार्ड' (जेल का भाग) में महात्माजी रहते थे उसमें एक बिल्ली भी रहती थी। उसकी आदतों पर महात्माजी मुग्ध हो गये। भिन्न-भिन्न अवसरों पर उन्होंने उसके बारे में लिखा था—

"बिल्ली की सफ़ाई के बारे में तो मैं लिख ही चुका हूँ । अब उसका और अधिक अवलोकन हुआ है। उसने डेढ़-दो महीने हुए दो बच्चे जने। उसकी रहन-सहन अलौकिक लगती है। वे तीनों शायद ही कभी अलग दीख पड़ते हों। जब बच्चे माँगते हैं तब उन्हें उनकी माँ दूध पिलाती है। दोनों बच्चे साथ ही लगकर पीते हैं । यह दृश्य भव्य होता है। माँ को उसमें ज़रा भी शर्म नहीं लगती। बिल्ली ऐसी सलीकेदार है कि वह हर एक काम सबके सामने या जहाँ पाया तहाँ नहीं करती—जैसे ही बच्चे चलने-फिरने के योग्य हुए वैसे ही माँ ने उन्हें शौच के नियम सिखाये । वह खुद एकान्त वाले स्थान में चली गई और नरम ज़मीन ढूंढ़कर वहाँ गढ़हा बनाया, उस पर बच्चों को बिठलाया, उनके पाखाना कर चुकने पर उसने उस गढ़हे को मिट्टी से तोप कर ज्यों का त्यों बना दिया । आजकल ये बच्चे इसी प्रकार शौच फिरते हैं। ये भाई-बहन हैं। चार दिन हुए इनमें से एक ने एक ज़मीन ढूंढ़ी—गढ़हा करना चाहा लेकिन वह निकली ज़रा सख्त; दूसरा बच्चा उसकी मदद के वास्ते पहुँचा। दोनों ने मिलकर आवश्यकतानुसार गड्ढा तैयार कर लिया और शौच हो चुकने पर उसे अच्छी तरह मिट्टी से ढँका और चलते बने। (९-५-३२)

"....इस बिल्ली के इन बच्चों को देखते हुए कहना पड़ता है कि यह एक आदर्श शिक्षिका है। जो कुछ अपने बच्चों को सिखाती है या जो उन्हें सीखने की आवश्यकता है, उसे चुपचाप सिखाती है, गड़बड़ नहीं मचाती। बच्चे जो कुछ सीखना चाहते हैं। उसे वह ख़ुद कर दिखाती है। बच्चे तुरन्त वैसा ही करने लग जाते हैं। इसी प्रकार वे बच्चे दौड़ते-फाँदते पेड़ों पर चढ़ते, सावधानी से उतरते, खाते-पीते, शिकार करते हैं, और जीभ से चाट-चूटकर शरीर को स्वच्छ रखते हैं। माँ के सब लक्षण बच्चों में उतर आये हैं, जो कुछ वह जानती है—उस सबको बच्चे सीख गये हैं—इस बिल्ली का उनके प्रति प्रेम मनुष्यों-जैसा है। ठीक वैसा ही लगता है। बच्चों को बगल में लिटाकर सोती है, दूध पिलाने के वक़्त ख़ुद लेट जाती है और मज़े में दूध पीने देती है। अगर कहीं शिकार किया है तो बच्चों के पास ले आती है। बल्लभभाई इन तीनों को नित्य दूध देते हैं। तीनों चैन से एक रकाबी में पीते हैं। कभी-कभी ख़ुद अलग खड़ी रहती है। बच्चों को पेट भर पी लेने देती है। उनसे प्यार की कुश्ती भी लड़ती है।"

२२-५-३२ बापू

× × ×

यरवदा जेल की बिल्ली की इतनी तारीफ़ सुनकर श्री परशुराम मेहरोत्रा ने एक पत्र में बापू से उस बिल्ली का समाचार पूछा। बापू ने उत्तर में लिखा—

"बिल्ली बहन और उसके बच्चे-कच्चे खेलते-कूदते हैं और भोजन के समय अपना भाग लेने के वास्ते बिला नामा आ डटते हैं। न देने पर कुछ गड़बड़ नहीं करते।"

जब आचार्य प० पद्मसिंह शर्मा ने २१-९-१९५५ को श्री मास्टर रामस्वरूपजी गर्ग को निम्नलिखित पत्र भेजा था तो मानों इसी सिद्धान्त का पालन किया था—

"आपकी इस तफ़वील अलालत का हाल मालूम करके मुझे अफ़सोस और तआज्जुब है। आप-सा मोहतात मेहनती वर्ज़िशी तफ़रीह-पसन्द हट्टा-कट्टा हैडमास्टर इस तरह बुख़ार की जद में कैसे आ गया? पढ़ने से जी चुराने वाले शरीर लड़कों की बददुआ का असर तो नहीं? इत्यादि।"

फिर एक अन्य पत्र में आचार्यजी ने उन्हीं से पूछा था—

"वह मौलवीनुमा आतिशफिशां जो चाँदपुर में आग और लावा उगल रहा था, ठंडा पड़ा कि नहीं? 'ख़ुदा महफ़ूज़ रक्खे इस बला से' कहीं कमबख़्त खरमने अमन को न फूंकदे।"

प० ज्वालादत्त शर्मा मुरादाबादी को एक पत्र में उन्होंने लिखा था—

"प० ...शास्त्री अलौकिक जीव हैं। संस्कृत से निराश होकर पराङ्मुख हो बैठे हैं। उस दिन गौड़जी से मैंने कहा कि इनका संस्कृत विद्वेष का भूत निकाल

दीजिये तो मैं भी कायल हो जाऊँ। आदमी सज्जन और सहृदय हैं, यह और बात है कि......"

यहाँ यह लिखना अप्रासङ्गिक न होगा कि महात्मा गांधीजी इस इलाज को नापसन्द करते थे। उन्होंने २०-६-३१ के पत्र में श्री सुमंगलप्रकाश को लिखा था—यदि तुम्हारा शरीर अच्छा हो रहा है तो दूसरी झंझट में क्यों पड़ना ? रामदासजी से लिखो भूत-प्रेतादि के इलाज से यदि शरीर अच्छा भी हो तो भी त्याज्य है, क्योंकि उससे ईश्वर में विश्वास कम होता है।"

श्री प्रतापनारायणजी मिश्र ने ७ जनवरी १८६२ को श्री बालमुकुन्द गुप्त को लिखा था—

"राहुजी पाजी हैं। वह रुपया बीसियों का गपक बैठे हैं। नालिश कर दो न ? गवाही हम भी दे देंगे। नगर के मित्रों का हाल 'वही अतवारे सदरंगी जो आगे थे सो अब भी हैं।' आपके भी ताबदार है—आमार नामई प्रेमदास। जोदी आपनार मोने आमार प्रेम, तबे आमी आपनार क्रीतदास......अवकाश दिनरात है। गुज़ारे का बन्दोबस्त पिताजी खुद ही कर गये हैं। ऊपर से दो घण्टे मात्र की मेहनत पर एक अंग्रेज़ बहादुर पन्द्रह रुपया महीना भी देते हैं। निदान सब मज़ा है, केवल शरीर गड़बड़ रहता है सो उसका नाम ही शरीर (फारसीवाला) है किन्तु डाक्टर भोलानाथ की जै हो। उनकी दया से उसकी भी शरारत दबी ही रहती है....."

इन्हीं मिश्रजी ने प्रेमघनजी को भारत-सौभाग्य नाटक के सम्बन्ध में सन् १८८६ में लिखा था—

"हमरी मुच्छै कैयो दाँय घोटी गई हैं, जौ हम मेहरिया मंसवा दूनौ के नकल करै जानति है। तेहिते ऐसी पोथिन माँ हमहूँ ते पूछि लीन करौ तो क्रिटिक हुन का ब्बाले का बीचु न रहैं। अबै ३३ कैयो दाँय दोखु लगाय सकत हैं।......हम बैसवारे में रहित हैं। दुसरेन का चराइ आइत है। भला हमका कोहू का रंग का लागी ?"

एक अंग्रेज़ लेखक ने लिखा था—"दरअसल सिर्फ़ वे ही पत्र सुरक्षित रहने योग्य हैं, जो कभी न लिखे जाने चाहिए थे और जिन्हें तुरन्त नष्ट कर देना चाहिए।"[1]

एक ऐसा ही मज़ेदार पत्र महाकवि शङ्करजी ने २६-१२-१६२२ को प० पद्मसिंहजी शर्मा को भेजा था उसमें एक घनाक्षरी कवित्त था, जो शङ्करजी के किसी संग्रह में अब तक प्रकाशित नहीं हुआ।

---

1. Letters that should never have been written and ought immediately to be destroyed are the only ones worth keeping." —Sydney Tremayne

नई अज्ञात यौवना

घनाक्षरी कवित्त

"देख-देख दादी रात काट खाई माछरन
कैसे कढ़ि आये मेरी छाती पै ददोरा दो।
पारसाल ऐसे ही दिखावत ही छोरी एक
छेड़त हे ताहि घेर-घेर मिटे छोरा दो॥
आगे बढ़ने पै कहूँ बाँधने परें न हाथ,
उलटें मर्ज रन की भाँति फूले फोरा दो।
आँकन को शंकर अँकैया को बुलाय वेग
लाद न सकूंगी भारी तेरे से भटोरा दो॥"

इसके बाद शङ्करजी ने लिखा था—"यह कवित्त संजीवन भाष्य में ठिकाना माँगता है।"

आचार्यजी ने ऐसे महत्त्वपूर्ण पत्र को अपने संग्रह में रख लेना ही मुनासिब समझा। संजीवन भाष्य में इसे ठिकाना मिला या नहीं, हम नहीं जानते पर आचार्यजी के पत्रों के संग्रह में इसे स्थान मिल ही गया है।

कविवर रत्नाकरजी ने अपनी एक कविता हमें इस शर्त पर लिखाई थी कि हम उसे कहीं छपावें नहीं! हमने 'विशाल भारत' में उसके तीन चरण छपा दिये और पाठकों के मन की जिज्ञासा बढ़ाने के लिए चौथा यों ही छोड़ दिया! आचार्यजी का पत्र आया "आखिर वह चौथा चरण क्या है? हम भी जानना चाहते हैं।"

गोपनीय चीज़ें अपना अलग ही आकर्षण रखती हैं, इसी कारण ज़ब्त किताबों की बिक्री कई गुनी बढ़ जाती है!

कभी-कभी मामूली आदमियों के हाथ के लिखे हुए पत्र ऐतिहासिक महत्त्व धारण कर लेते हैं। आज से ६५ वर्ष पूर्व रामलाल मिश्र नामक एक सज्जन ने, जो कालाकार के 'हिन्दोस्थान' ऑफिस में काम करते थे, बाबू बालमुकुन्द गुप्त को अपने २ फरवरी सन् १८९१ के पत्र में लिखा था—

"प्रिय मित्र,

धन्य है उस परमेश्वर की माया को कि नाना प्रकार के रङ्ग देखने में आता है। जहाँ मैं पत्र लिखने में आनन्दित होता था तहाँ आज दुख होता है। कल्ह तिथि १ के मध्याह्न काल में राजा साहब ने आज्ञा-पत्र मँगा के लिख दिया कि आज मुं० जी को आना चाहिए था सो अपने नियत समय पर नहीं आये इसलिए और हमारे चले जाने पर हिन्दोस्थान में उनका लेख जाने योग्य न होगा, कारण गवर्नमेण्ट के विरुद्ध

बहुत कड़ा लिखते हैं, अतएव इस स्थान के योग्य नहीं हैं, च्युत कर दिये जायँ। अधिक कारण, तिथि पर न आये। ····

रामलाल मिश्र"

हिन्दी पत्रकार-कला के इतिहास में शायद यह पहला ही मौक़ा था जब कि किसी सम्पादक को "गवर्नमेण्ट के विरुद्ध बहुत कड़ा लेख" लिखने के लिए 'च्युत' किया गया था। श्री रामलाल मिश्र के नाम का उल्लेख केवल अपने इस पत्र के कारण ही हिन्दी पत्रकार-कला के इतिहास में हो जायगा।

दैवी दुर्घटनाओं और आकस्मिक विपत्तियों के आने पर संसार के महान् से महान् पुरुषों के चित्त विचलित हो जाते हैं और उस समय के उनके लिखे हुए पत्रों में उनकी आत्मा प्रतिविम्बित हो जाती है। मार्च सन् १८९५ में टाल्सटाय के सात वर्ष के एक बच्चे का स्वर्गवास हो गया था। उस समय टाल्सटाय की पत्नी ने उनकी एक चचेरी बहन को लिखा था—

"अपने इस महान् दुख में हम लोगों को प्रायः आपकी याद आई है, क्योंकि हम दोनों आपके प्रेमपूर्ण हृदय को भली भाँति जानते हैं। हम लोगों की वेदना कल्पनातीत है। यद्यपि जॉन के प्रति हमारे हृदय में असीम प्रेम था, तथापि हम यह नहीं जानते थे कि सात वर्ष के इस मनोहर बालक ने सारे कुटुम्ब के जीवन में कितना बड़ा स्थान बना रखा है। केवल दो दिन के ज्वर में ही वह चल बसा। प्रान्तों की तकलीफ़ ने और भी गड़बड़ी पैदा कर दी थी। उसे बेहोशी हो गई थी, इसलिए उसे ज्यादा कष्ट नहीं सहना पड़ा।" अत्यधिक वेदना और बीमारी के कारण श्रीमती काउण्टैस टाल्सटाय ने इस चिट्टी को अधूरा ही छोड़ दिया था। इसे पूरा करते हुए टाल्सटाय ने लिखा था—"अनेक बार मेरे मन में यह प्रश्न उठा था—आखिर बच्चे मरते क्यों हैं? इस सवाल का कोई भी जवाब मुझे नहीं मिला था। पिछले दिनों में मैं अपने और मानव-समाज के जीवन पर ही विचार करता रहा हूँ—बच्चों के बारे में कोई विचार नहीं किया और मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि हमारा एक-मात्र कर्तव्य यह है कि अपने हृदय में प्रेम की वृद्धि करें और अपने उदाहरण द्वारा साथी-संगियों में भी प्रेम को बढ़ा लें। अब तो स्वयं यह सवाल मेरे सामने आ खड़ा हुआ है। मेरा यह बच्चा क्यों इस संसार में आया और क्यों अपने जीवन के दशांश को भी बिताये बिना ही वह यहाँ से विदा हो गया? इस दुर्घटना का जो प्रभाव हम लोगों पर पड़ा है उससे मेरे सिद्धान्त की पुष्टि हो जाती है। मेरा बच्चा जॉन संसार में इसीलिए आया था कि संसार में प्रेम की वृद्धि हो, वह स्वयं प्रेम में बढ़ा। ईश्वर ने उसे यहाँ इसीलिए भेजा था कि वह यहाँ प्रेम को बढ़ावे और इस संसार से विदा होकर प्रेमपूर्ण ईश्वर से मिलने से पूर्व हम दोनों को प्रेम के बन्धन में बाँध दे। इतना अधिक हम कभी एक-दूसरे के

निकट न आ पाये थे—मैं और मेरी पत्नी सोफिया। जितना प्रेम अब मैं सोफिया से करता हूँ, उतना मैंने पहले कभी नहीं किया था।"

यद्यपि टालसटाय ने अपने मन को सान्त्वना देने के लिए ये दार्शनिक बातें लिखी थीं पर आखिर वे पिता थे और इसी पत्र में उन्हें लिखना पड़ा था—"मेरे लिए यह दुर्घटना बड़ी दुःखप्रद है पर मुझे दुःख का उतना अनुभव नहीं होता, जितना सोफिया को। मैं उसके दुःख से इतना अभिभूत हो जाता हूँ कि अपने दुःख को भूल जाता हूँ। सोफिया इस दुःख के बोझ के मारे दब गई है। जब कभी उसे कोई पीड़ा होती थी या कोई समझ में न आने वाली वेदना या कोई अटपटी चिन्ता, तो वह अपने इस बच्चे के प्रेम का सहारा ढूंढ़ लेती थी और यह बच्चा भी असाधारण गुणों वाला था। ईश्वर ऐसे बच्चों को दुनिया में जल्दी भेज देता है, जब कि दुनिया उनका स्वागत करने के लिए तैयार नहीं होती। अब जब कि यह बच्चा मेरी पत्नी से छिन गया है उसे इस दुनिया में अपना कुछ नहीं दीख पड़ता···वह सर्वथा वंचित हो गई है।"

दैव दुर्विपाक से संसार में ऐसी घटनाएँ घटती हैं और घटती रहेंगी। टाल्स-टाय की पत्नी का मातृ-हृदय इसी बात से कुछ सन्तोष पा रहा था कि अन्तिम समय में बेहोश हो जाने के कारण उनके बच्चे को ज्यादा कष्ट नहीं हुआ और टाल्सटाय अपनी पत्नी के महान् दुःख के सामने अपना दुःख भूल जाते थे। पुत्र-वियोग के वज्र-पात से पीड़ित इस दम्पति के ६१ वर्ष पहले के ये उद्गार आज भी हमारे हृदय के वेदनामय तारों को झंकृत कर देते हैं।

१७ मार्च सन् १७५२ की रात को अंग्रेज़ी के महान् लेखक डाक्टर जानसन की पत्नी का स्वर्गवास हो गया और उसी वक़्त उन्होंने अपने मित्र रैवरैण्ड डाक्टर टेलर को एक अत्यन्त मर्मभेदी पत्र भेजा। टेलर साहब भी उसी समय उठकर उनकी सेवा में पहुँचे। दोनों मित्रों ने तभी स्वर्गीय आत्मा की सद्गति के लिए प्रार्थना की। दुर्भाग्यवश डाक्टर जानसन का वह पत्र सुरक्षित नहीं रह सका, पर वह चिट्ठी जो उन्होंने दूसरे दिन लिखी थी वह सुरक्षित है। डाक्टर जानसन ने उसमें लिखा था—

प्रियवर,

पधारिये और मुझे कुछ नसीहत दीजिये। मुझ से दूर न रहिये। मैं बहुत दुःखी हूँ। कृपाकर अपनी पत्नी श्रीमती टेलर से पूछकर यह लिखते लाइये कि मैं अपनी माता तथा पुत्री के लिए शोकसूचक क्या-क्या चीजें खरीदूं। अपनी ईश्वर प्रार्थना के समय मुझे याद कर लिया कीजिये, क्योंकि मनुष्य द्वारा दी हुई मदद बेकार है।

विनीत

सैम जानसन

१८ मार्च १७५२

"Do not live away from me, my distress is great."
इन दो वाक्यों में कितनी मार्मिक वेदना छिपी हुई है। दो सौ वर्ष बाद भी ये वाक्य विशेषतः उन व्यक्तियों के हृदय को, जिनके जीवन में ऐसी दुर्घटना घट चुकी है, झकझोर सकते हैं। अगर हमारी धृष्टता क्षन्तव्य समझी जाय तो हम अपने पूज्य पिताजी का एक पत्र उन्हीं के अक्षरों में उद्धृत कर दें, जो उन्होंने मेरे छोटे भाई के स्वर्गवास की ख़बर पाने पर लिखा था। उस समय पूज्य कक्का की उम्र ८४ वर्ष की थी और रामनारायण कुलजमा २८ वर्ष का था। वह आगरा कालेज में इतिहास का अध्यापक था।

श्रीराम

ता० ८-१०-३६

यहाँ सब कुशल है।

श्रीपत्री चि. बनारसी चिट्ठी मेरी बहुत पहुँची। तुमने इस मुसीबत की हालत में कुछ नसीहत सीखी होगी आसा है कि, तुम मेरी बातों से अक्सर सीखा करते हो और अमल भी करते हो और हम अपने निश्चय से दृढ़ विश्वास से हटते नहीं हैं कि उसके उपकारों का अन्त नहीं है। कहा है अखीर वक्त पर औषधी जानवी तोयं वैद्यो नारायणों हरी पर विश्वास रखना हर हालत में उसी को पहले सुमिर कर काम करना चाहिए। वह अंतरयामी है। अपना किया कुछ नहीं होता है। देख लिया आँखों से। किसी ने कहा कि खुदा खैर करे अब भी छिन में कुछ से कुछ होता है। अपना तो खाली विचार है। तभी तो कहा है। 'अपनी बनाई कछू न बनै बनिहै प्रभु मेरे तुमारी बनाई।' बस यही निश्चय रखो, कोई अखबार सहज भाषा का छोटा-सा ज्ञान देने वाला हो तो अच्छा हो। रामायण अच्छे छापे की अर्थ समेत तुम्हारी मा के पास थी। ब्रजविलाश खासकर बच्चों को लाना। मानी बहुत अच्छा लगाती थी। समय-समय का। रामायण घर में मौजूद है माता की। लिखो तो तुम्हारे ही कहने से देखा करे, अच्छा है। दुनिया उमीद पर कायम है। निराशा बुरी होती है। कहा है 'रीते भरै, भरे ढरकावै महर करें तो फेरि भरें।' वह सर्वशक्तिमान है।

आरम्भ से अन्त तक यह सारा पत्र आस्तिकता तथा ईश्वर विश्वास और असाधारण दृढ़ता से परिपूर्ण है और साथ ही उसमें आशा का एक सन्देश भी है। मेरे अनुज का देहान्त ६ अक्टूबर १९३६ को हुआ था और यह पत्र ८ अक्टूबर का लिखा हुआ है। ८४ वर्ष के एक वृद्ध के लिए अपने २८ वर्षीय युवा पुत्र के चले जाने पर ऐसा पत्र लिखना कोई आसान काम न था। उस समय स्वयं मेरे हाथ में कम्पन हो गया था। पर कक्का मर्द आदमी थे। उन्हें हज़ारों दोहे, कवित्त और लोकोक्तियाँ कण्ठस्थ थीं। वे प्रायः कहा करते थे "हारियै न हिम्मत बिसारियै न हरि नाम, जाहि विधि राखै

राम ताही विधि रहिये"। इस दुर्घटना के ८ वर्ष बाद तक कक्का और जीवित रहे और अपने जीवन के अन्तिम दिनों तक निरन्तर परिश्रमपूर्ण जीवन व्यतीत करते रहे।

महापुरुषों के पत्र

नवम्बर सन् १९१३ में लैनिन ने गोर्की को एक मज़ेदार पत्र लिखा था—

आपकी यह खबर पढ़कर कि आप एक बोलशेविक डाक्टर से इलाज करा रहे हैं—किसी नये तरीके से—मुझे दरअसल बहुत फ़िक्र हो गई है। खुदा इन 'कामरेड' डाक्टरों से—खास तौर पर बोलशेविक डाक्टरों से—हमारी रक्षा करे। मैं सच कहता हूँ—मज़ाक़ नहीं करता—इन कामरेड डाक्टरों में ९९ फ़ीसदी गधे होते हैं। एक अत्यन्त कुशल डाक्टर ने मुझे यह बात बतलाई थी। मैं दृढ़तापूर्वक आप से यही कहूँगा कि मामूली बीमारियों को छोड़कर सभी बीमारियों में हमें विदेशी-विशेषज्ञों से ही इलाज कराना चाहिए। अगर आप जाड़े के दिनों में यात्रा कर सकें तो स्विटज़रलैण्ड और वियेना के सर्वोत्तम डाक्टरों के पास जावें। अगर आपने ऐसा नहीं किया तो यह अक्षम्य अपराध होगा। तबीयत अब कैसी है ?"

अक्टूबर सन् १९२१ की बात है। मास्को में सफ़ाई सप्ताह मनाया जा रहा था। सोवियत सरकार ने उसके लिए लाखों रूबल मंज़ूर कर दिये थे। लैनिन ने उस वक़्त अपने २४ अक्टूबर के पत्र में शासन के प्रधान की हैसियत से स्वास्थ्य-विभाग के मन्त्री को लिखा था।

"इज़वैस्टिआ अखबार में सफ़ाई सप्ताह के समाचार पढ़कर मेरी यह आशङ्का और भी दृढ़ हो गई है कि यह सफ़ाई का काम बिल्कुल रद्दी फालतू तरीकों से हो रहा है। सरकार के लाखों रूबल खर्च होंगे, लोग अपनी जेब भरेंगे और काम कुछ नहीं होगा। मास्को के बड़े-से-बड़े घरों में जो "सोवियत गन्दगी" पाई जाती है उनसे ज्यादा शर्मनाक चीज़ दूसरी कोई हो ही नहीं सकती। मुझे संक्षेप में, पर बिल्कुल व्यावहारिक ढंग पर और ठीक-ठीक लिखिये कि सफ़ाई सप्ताह में क्या काम हुआ ? और इस काम को करा कौन रहा है ? क्या वह ऐसे क्लार्कों के ज़िम्मे है, जिन्हें बड़ी-बड़ी सोवियत उपाधियाँ मिली हुई हैं पर जो अपने काम के बारे में ख़ाक नहीं समझते और जो सिर्फ़ कागज़ों पर दस्तख़त करना जानते हैं ? या फिर कोई योग्य आदमी इस काम को सँभाल रहे हैं ? और कौन हैं वे ? क्या वे विश्वसनीय भी हैं, जो अपनी जिम्मेवारी समझ सकें ? व्यक्तिगत उत्तरदायित्व की भावना को उत्साहित करने के लिए क्या किया जा रहा है ? कार्य का निरीक्षण कौन कर रहा है ? इन्सपैक्टर लोग ? उनकी संख्या कितनी है ? कौन-कौन हैं वे ? युवक मण्डल ? कोई है क्या ? कितने ? और उनकी योग्यता कहाँ पर प्रमाणित हुई थी ? दरअसल कण्ट्रोल कौन कर रहा है ?

जरूरी चीज़ें खरीदने पर क्या कुछ पैसा ख़र्च हो रहा है ? कारबोलिक पर ? सफ़ाई के औज़ारों पर ? कितनी चीज़ें ख़रीदी गई हैं ? या सारा रुपया बेकार आफिसरों पर ही ख़र्च हो रहा है ।

प्रेसीडेण्ट सोवनारकम} वी. उलिया नौव (लैनिन)"

पत्रों से मनुष्य के चरित्र पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है, लैनिन के उपर्युक्त दोनों पत्र इस तथ्य के जीते-जागते प्रमाण हैं । इनका महत्त्व इसलिए और भी ज्यादा है कि ये निजी थे और इनके प्रकाश का ख़याल स्वप्न में भी लैनिन को न आया होगा ।

महात्मा गांधी—पत्र-लेखक के रूप में—

ज़िन्दगी में जितना पत्र-व्यवहार महात्मा गांधी को करना पड़ा उतना शायद ही किसी को करना पड़ा होगा। दुर्भाग्य की बात यही है कि जो सहस्रों पत्र महात्माजी के पास आये, उनमें बहुत ही कम सुरक्षित रह पाये हैं । हाँ, महात्माजी के द्वारा भेजी गई सहस्रों चिट्ठियाँ सुरक्षित हैं। यद्यपि अभी तक उन सब का संग्रह गांधी स्मारक संग्रहालय नहीं कर पाया है। सहस्रों ही व्यक्ति बापूजी से प्रेरणा पाते थे । बापू जी उनकी शङ्काओं का समाधान करते थे, उनके घरेलू जीवन की ग्रन्थियाँ सुलझाते थे, दुःख में उन्हें सान्त्वना देते थे और उनका पथ-प्रदर्शन करते थे। नित्य प्रति तीन-चार घण्टे बापूजी को पत्र-व्यवहार करने में बीतता था और कभी-कभी तो उससे भी ज़्यादा। उनके अनेक पत्रों में ऐसे वाक्य हैं जो मन्त्र जैसे प्रभावशाली हैं । मेरी पत्नी की मृत्यु के बाद उन्होंने मुझे लिखा था—

"इस दुःख में से शक्ति उत्पन्न कर लो ।" और पूज्य पिताजी के स्वर्गवास पर लिखा था—"और मरता है कौन ? जीव तो हर्गिज़ नहीं, जिसके साथ हमारा सम्बन्ध था और है और रहेगा ।"

महात्माजी के दो महत्त्वपूर्ण पत्र, जो उन्होंने पण्डित तोतारामजी सनाढ्य को लिखे थे यहाँ उद्धृत किये जाते हैं—

पहला पत्र रात को दो बजे के पाँच मिनट पर लिखा हुआ ! उसका इतिहास प० तोतारामजी सनाढ्य के शब्दों में उसके साथ ही सम्बद्ध है । यह बात ध्यान देने योग्य है कि प० तोतारामजी की पत्नी बीमार तो अवश्य थीं और बापू उनका इलाज कर रहे थे लेकिन वे इतनी बीमार नहीं थीं कि उनके लिए बापू का दो बजे उठना अनिवार्य हो जाता । पर कर्तव्य के विषय में बापू अपने पर काफ़ी कठोर बन जाते थे। इस पुर्जे का महत्त्व इसलिए और भी बढ़ जाता है कि उसके छपने की कल्पना उन्होंने कभी न की होगी ।

दूसरा पत्र कृषि सम्बन्धी है और उसमें हम लोगों के लिए एक सन्देश है।

भाई तोतारामजी,

तुम्हारा विवरण अच्छा
लगा। महादेव को मगन
लगा बहुत अच्छा। और
हाथों का मेल भी तुम्हें
बहुत प्रिय लगा। तुम्हारा
कृषिकार्य पूना का
नमूना ही होना चाहिए
विवरण हमारा पढ़कर
मेरी आकांक्षा तो यह है
कि हम इतने फल और
इतनी भाजी पैदा करें
जो हमारे लिये बस हो।
यदि गायों का लालन भी
घास आदि पैदा करें और

[illegible]

महात्माजी के पत्रों पर तो एक विस्तृत ग्रन्थ ही लिखा जा सकता है।

कुछ अन्य पत्र

यहाँ हम पाठकों के मनोरंजनार्थ कुछ पत्रों के चित्र प्रकाशित कर रहे हैं। पहला पत्र है माननीय श्रीनिवास शास्त्री का, जो उन्होंने सन् १९२४ में मुझे लिखा था। यह पोशाक के बारे में है। मैंने शास्त्रीजी की सेवा में एक चिट्ठी भेजी

Govind Bhavan, Shankarpur
Basavangudi P.O., Bangalore City
10 December 1924

My dear Benarsi Das,

Don't break your heart over your conventional dress. If you live long enough and become famous enough and make yourself indispensable, you can dress some day as scantily and as originally as ever you please. Look at Mr. Gandhi, his dress is evolving in proportion to his fame — only: as the latter increases the former decreases. But no smaller man dares keep step with him in

थी जिसमें मैंने विलायती ढङ्ग की पोशाक पहनने में अपनी असमर्थता प्रकट की थी। उन दिनों मेरे मारीशस जाने की बात चल रही थी और अपना कुछ-कुछ मजाक उड़ाते हुए मैंने शास्त्रीजी को सारा वृत्तान्त लिख भेजा। उस दिल्लगी के परिणाम-स्वरूप मुझे यह चिट्ठी मिली जो कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है—

that respect. Even Das & Nehru still covers a great part of their bodies. When you go out of India, you cannot afford to defy convention at all, unless you don't care for your specific mission and consider it sufficient just to defy convention & earn what notice that brings. It is a funny world, Benarsi Das, we have to live in; bend first to it & become great, then you can make it bend to you. Did Gandhi always dress like this? If he had begun so, he would have ended differently. Forgive a little lecture from one who loves you—

V. S. Srinivasan

प्रेमचन्दजी का पत्र

दूसरा पत्र है स्वर्गीय प्रेमचन्दजी का, जो उन्होंने १ दिसम्बर, १९३५, को मुझे लिखा था। इस पत्र का एक अंश काफ़ी उद्धृत हुआ है। एक रूसी लेखक ने भी

THE MAGAZINE WORKING FORA COMMONWEALTH OF LITERATURES IN INDIA

Proprietors: THE HANS LIMITED.
Editors: PREMCHAND & KANAIYALAL MUNSHI

Bombay, 111, Esplanade Road,
Benares, "Hans" Karyalaya

1st Dec. 1935

My dear Banarsidasji

I read your [illegible] & thank you for it. How I wish I could attend [illegible] lectures but can't help. How to leave the family is the problem. The boys are at Allahabad and when I go my better half must feel so lonely and helpless. If I take her with me, I must have a decent amount to spend. So it is better to be tied down to home, than feel the pinch of money. And to keep young is a question of temperament. There are youths older than myself and elderly people younger than myself. But I hope I am growing younger every day. I have no faith in the other world and so the idea of otherworldliness which is the greatest killer of youth does not approach me. Of course there is a healthy youth and a mad youth. Healthy youth,

अपने लेख में उसे उद्धृत किया था, यद्यपि उन्होंने यह नहीं बतलाया था कि पत्र कहाँ से लिया गया था और किसे लिखा गया था।

तृतीय और चतुर्थ पत्र क्रमशः मौलाना हाली और महाकवि अकबर के हैं, जो उन्होंने आचार्य पद्मसिंहजी को लिखे थे।

मौलाना हाली साहब का पत्र 'परोपकारी'-सम्पादक प० पद्मसिंहजी के नाम

हिन्दी अनुवाद

पानीपत

१८ अगस्त, १६०८

जनाब एडीटर साहब,

रिसाला 'परोपकारी' की एक कापी मरसल[1] जनाब पहुँची। यादआवरी का शुक्रिया अदा करता हूँ। मुझे इस बात के दरियाफ्त होने से बे-इंतहा खुशी हुई कि प० भीमसेनजी ने मनाजात बेवा को बहुत पसन्द किया और उसको इस क़ाबिल समझा कि संस्कृत में उसका मनज़ूम तरजुमा[2] किया जाय। जो कुछ आपने अपने रिसाले में नज़म मज़कूर[3] पर उमदा रीमार्क्स फ़रमाये हैं, इसका भी मैं दिल से शुक्रिया अदा करता हूँ। मैं निहायत ममनून[4] हूँगा अगर आप मेहरबानी फरमाकर रिसाला 'परोपकारी' के पर्चे जब तक कि उसमें संस्कृत का मनज़ूम तरजुमा छपता रहे मेरे पास भेजते रहेंगे। मैं इन तमाम पर्चों को जमा करके पानीपत की पब्लिक लायब्रेरी में, जहाँ संस्कृत की किताबें भी दाखिल की गई हैं, दाखिल करूँगा।

मैंने कई साल हुए एक नज़म खास औरतों के मुतल्लिक लिखी थी, जिसका नाम "चप की दाद" है और (जिसको अलीगढ़ की कमेटी तालीमे-नुसवाँ[5] ने रिसाला 'खातून' के अलावा किताब की सूरत में भी अलहैदा छपवा दिया है।) उसकी कोई कापी इस वक़्त मेरे पास मौजूद नहीं है। अगर वह नज़म आपकी नज़र से न गुज़री हो तो आप मुझे मतला[6] फरमायें ताकि उसको कहीं से बहम पहुँचाकर आपको भेज दूँ। ज़्यादा नयाज़।

खाकसार

हाली

---

१. भेजी हुई। २. कविता में अनुवाद। ३. उक्त। ४. कृतज्ञ। ५. नारी शिक्षा समिति। ६. सूचित।

پانی پت - ۱۸ اگست ۱۹۰۹

جناب ایڈیٹر صاحب

رسالہ پروپکاری کی ایک جلد کی جو جناب نے بھیجی یاد آوری کا شکریہ ادا کرتا ہوں - مجھے اس سعادت پر

دریافت ہونے سے بے انتہا خوشی ہوئی کہ پنڈت بھیم سین جی نے مناجات بیوہ کو

پسند کیا اور اسکو اس قابل سمجھا کہ سنسکرت میں اسکا منظوم ترجمہ کیا جائے - جو کچھ

آپ نے اپنے رسالہ میں نظم مذکور پر عمدہ ریمارکس فرمائے ہیں اسکا بھی میں دل سے شکریہ

ادا کرتا ہوں - میں نہایت ممنون ہونگا اگر آپ مہربانی فرما کر رسالہ پروپکاری

کے پرچے جنکہ انمیں سنسکرت کا منظوم ترجمہ چھپا ہے میرے پاس بھیجدیں میں

میں ان تمام پرچوں کو جمع کرکے ایک جلد میں پانی پت کی پبلک لائبریری

میں جہاں سنسکرت کی کتابیں بھی داخل کیگئی ہیں داخل کردونگا -

میں نے کئی سال ہوئے ایک نظم خاص عورتوں کے متعلق لکھی تھی جس کا نام (چپ کی داد) ہے

اور جسکو علیگڈھ کی کمیٹی تعلیم نسواں نے رسالہ (خاتون) کے علاوہ کتابی صورت میں

بھی علیحدہ چھپوا دیا ہے) اسکی کوئی کاپی میرے پاس اسوقت موجود نہیں ہے اگر وہ

نظم آپکی نظر سے نہ گذری ہو تو آپ مجھے مطلع فرمائیں تاکہ میں اسکو کہیں سے بہم

پہنچا کر آپکی خدمت میں بھیجدوں - زیادہ نیاز

خاکسار

حالی

महाकवि अकबर का पत्र प० पद्मसिंह शर्मा के नाम

हिन्दी अनुवाद

मेरे प्यारे पण्डित साहब खुश रहिये, तन्दरुस्त रहिये।

आपके खत को आँखें ढूँढ़ती थीं। मुद्दत के बाद अनायतनामा आया। बहुत मसर्रत[1] हुई। खुदा करे आपके दर्शन भी मयस्सर हों। आप लिखते हैं कि आपने अलाहाबाद होकर सफ़र किया, मैं प्रतापगढ़ में था। आपका खत वहीं मिला। निहायत अफ़सोस हुआ। कुछ न समझ सका कि कहाँ जवाब लिखूं।

अव्वल हिस्सा बिल्कुल खत्म हो गया। पाँचवाँ एडीशन छप रहा है। शायद इसी महीने में मिल जाय। उसी वक़्त वह भेजा जायगा। दूसरे हिस्से की कुछ जिल्दें बाक़ी हैं। उसकी एक कापी आपके दोस्त को रवाना हो रही है। तीसरा हिस्सा हनूज़[2] मुरत्तब[3] नहीं हुआ। ज़माने के हालात और तबीयत की नादरुस्ती ने बहुत कुछ अफ़सुरदा किया। बहरकैफ़ अब फ़िक्र कर रहा हूँ। जिंदगी है और कोई अमर माना न हुआ[4] तो इंशाअल्लाह सन् '१८ में तबा[5] हो जायगा। आपकी काबलीयत और सुख़न फहमी ने मुझको आपका आशक़ बना दिया है। मेरे लिए दुआ फ़रमाया कीजिए। अब बजुज़ यादे खुदा और जिक्रे आख़रित के कुछ जी नहीं चाहता लेकिन इसी रंग के सच्चे साथी नहीं मिलते। आप बहुत दूर है।

अकबर हुसैन

---

१. प्रसन्नता। २. अभी। ३. तरतीब देना। ४. अमर माना न हुआ=कोई बाधा न आ पड़ी। ५. प्रकाशित।

कविरत्नजी का यह चौथा पत्र किसी महिला को लिखा गया था।

कली सी अब तू फूल भई
मन मधुकर बहु आस लगाये तोसो प्रेम भई
विकसत सुमन अंग दल प्रतिपल शिशुता [illegible]
रह्यो कछु अज्ञात तोहि जो अब ऐसी हठ ठानी
चार दिना की लहरि बहार है प्रीति रीत के रीते
ऐसो करहु न जो पछितावौ पाछे अवसर बीते
सो निज मन के कीजै कारज जग [illegible] को
जिये लोक परलोक सुधरै तो सत्य लिखावट चेरो
मेरो

आचार्यजी के तीन पत्र—

प० पद्मसिंहजी स्वयं बहुत अच्छे पत्र-लेखक थे जैसा कि इस संग्रह से पाठकों को ज्ञात हो ही जायगा। इस विषय पर तो एक निबन्ध ही लिखा जा सकता है।

ॐ १२, आशुतोष देलेन,
[illegible]
कलकत्ता.
२०/१०/२८

[illegible]

[illegible]

फिर भी उनके तीन पत्र यहाँ उद्धृत किये जाते हैं, जिनसे उनके स्वभाव पर प्रकाश पड़ता है। प्रथम पत्र सन् १९२९ का है, और दूसरा मृत्यु के पन्द्रह दिन पहले का, और तीसरा मृत्यु के तीन दिन पूर्व का ही ! प्लेग के दिनों में रोगियों की सेवा-सुश्रूषा करते हुए आचार्यजी ने अपने प्राण गँवाये। समाज-सेवा का यह अद्भुत उदाहरण अत्यन्त प्रशंसनीय है, यद्यपि उसका अनुकरण करने वाले बहुत थोड़े ही निकलेंगे।

ॐ

पद्मसिंह शर्म्मा

काव्य-कुटीर
नायक नगला,
डा० चांदपुर (बिजनौर).
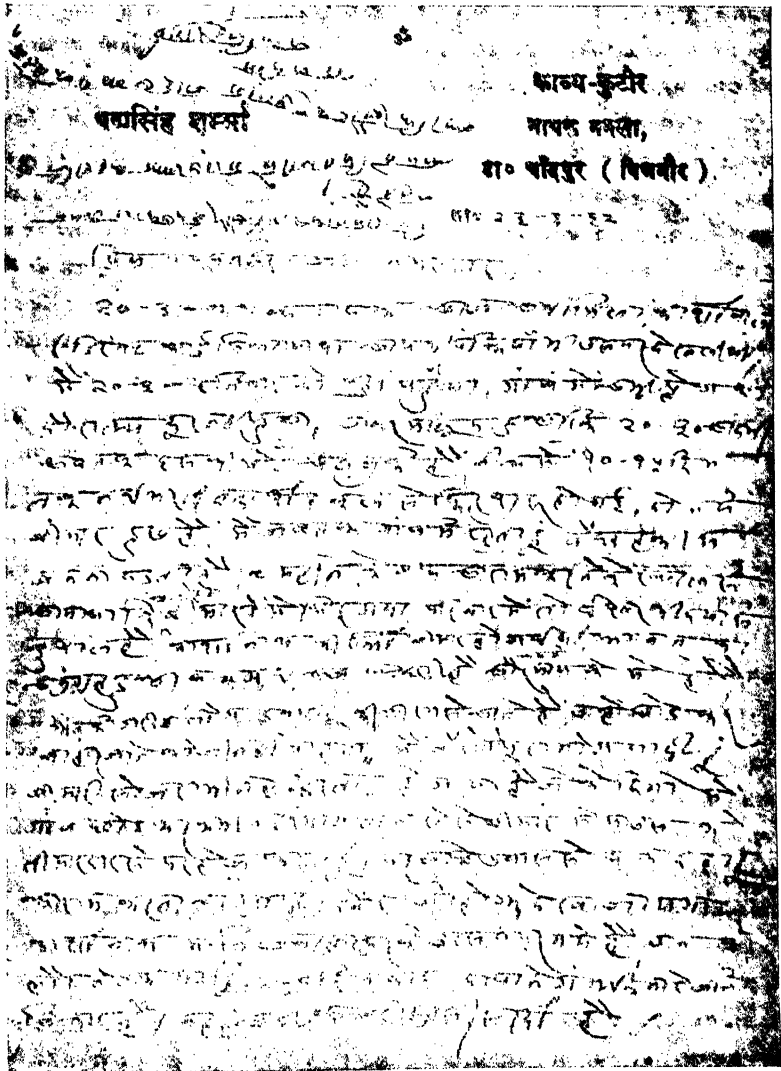
बात यह थी कि 'लोकमान्य'-सम्पादक बन्धुवर मदनलालजी चतुर्वेदी ने बिहारी के एक दोहे की व्याख्या पर कुछ लिखा-पढ़ी प्रारम्भ कर दी थी । २६ मार्च से प्लेग में ग्रस्त होते हुए भी ४ अप्रैल को आचार्यजी ने उनके पत्र का उत्तर भिजवाना ज़रूरी समझा । दस दिन से पीड़ित प्लेग का कोई मरीज़ भला इस बात की क्या चर्चा कर सकता है कि अमुक दोहे का पाठ शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' ने क्या लिखा है ? अगर
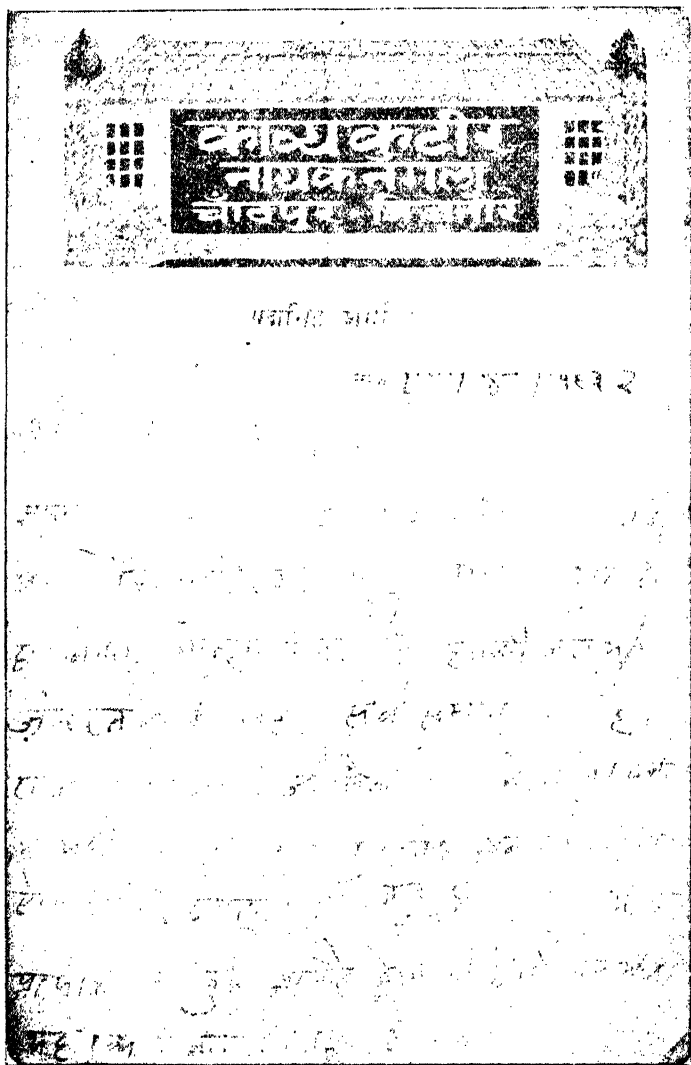
आचार्यजी उत्तर न भी देते तो भाई मदनलालजी कभी भी इसका बुरा मानने वाले न थे, पर किसी साहित्यिक जिज्ञासु की उपेक्षा करना वे अक्षम्य अपराध मानते थे, इसलिए उस भयंकर बीमारी में भी उन्होंने उत्तर लिखाया ! मातास रस्वती के लिए इस प्रकार का अर्घ्य-दान किसी भी साहित्य के इतिहास में एक चिरस्मरणीय घटना मानी जायगी ।
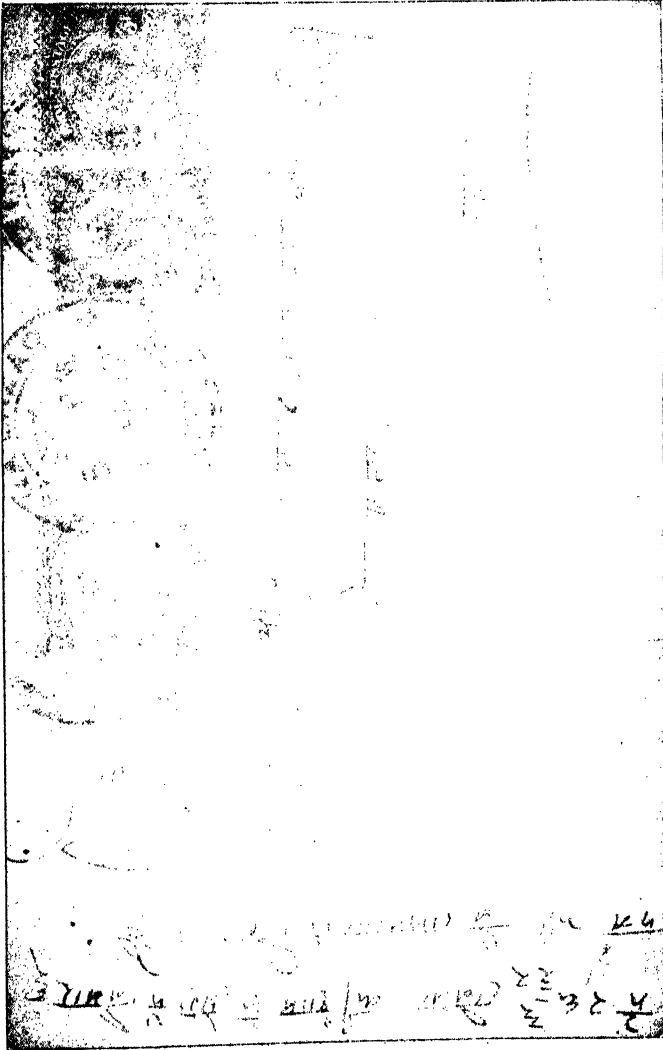
स्टीफ़न ज़्विग का अन्तिम पत्र

अन्त में हम विश्वविख्यात लेखक स्टीफ़न ज़्विग के उस पत्र को उद्धृत करते हैं, जो उन्होंने अपनी पत्नी के साथ विष-पान करने के पहले २२ फ़रवरी, सन् १९४२. को लिखा था—

Declaração

Ehe ich aus freiem Willen und mit klaren Sinnen aus dem Leben scheide, drängt es mich eine letzte Pflicht zu erfüllen: diesem wundervollen Lande Brasilien innig zu danken, das mir und meiner Arbeit so gute und gastliche Rast gegeben. Mit jedem Tage habe ich dies Land mehr lieben gelernt und nirgends hätte ich mir mein Leben lieber vom Grunde aus neu aufgebaut, nachdem die Welt meiner eigenen Sprache für mich untergegangen ist und meine geistige Heimat Europa sich selber vernichtet.

Aber nach dem sechzigsten Jahre bedürfte es besonderer Kräfte um noch einmal völlig neu zu beginnen. Und die meinen sind durch die langen Jahre heimatlosen Wanderns erschöpft. So halte ich es für besser, rechtzeitig und in aufrechter Haltung ein Leben abzuschliessen, dem geistige Arbeit immer die lauterste Freude und persönliche Freiheit das höchste Gut dieser Erde gewesen.

Ich grüsse alle meine Freunde! Mögen sie die Morgenröte noch sehen nach der langen Nacht! Ich, allzu Ungeduldiger, gehe ihnen voraus.

Stefan Zweig

Petropolis 22. II 1942

निवेदन

"स्वेच्छा से और अपने होश-हवास की दुरुस्तगी में अपने प्राण-त्याग करने के पहले मैं अपना अन्तिम कर्तव्य-पालन करना चाहता हूँ। मैं ब्रेजिल देश की आश्चर्य-जनक भूमि को, जिसने मुझे प्रेमपूर्ण आश्रय दिया, हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। इस भूमि-खण्ड के प्रति मेरे हृदय में श्रद्धा दिनोंदिन बढ़ती ही गई है और यदि कोई ऐसा देश है, जहाँ मैं अपना जीवन पुनः प्रारम्भ कर सकता था तो वह ब्रेजिल ही है; क्योंकि मेरी मातृ-भाषा की भूमि मेरे लिए समाप्त हो चुकी है और मेरी आध्यात्मिक मातृ-भूमि को यूरोप ने आत्मघात कर लिया है।

"लेकिन अब मैं साठ वर्ष से ऊपर का हो चुका और अब बिल्कुल नवीन जीवन प्रारम्भ करने के लिए असाधारण शक्ति की आवश्यकता है। जो शक्ति मुझ में थी, वह वर्षों तक लामकान होकर इधर-से-उधर भागे फिरने में खर्च हो चुकी है। इसलिए मैं यही ठीक समझता हूँ कि इस ज़िन्दगी का खातमा कर दिया जाय। जिस जीवन में मुझे बौद्धिक परिश्रम से सबसे अधिक आनन्द मिला और जिसमें मैंने व्यक्तिगत स्वाधीनता को ही संसार की सर्वोच्च वस्तु समझा, उसकी समाप्ति ठीक समय पर, जब कि मैं तनकर खड़ा हो सकता हूँ, हो जानी चाहिए। सम्पूर्ण मित्रमण्डल को मैं नमस्कार करता हूँ। ईश्वर करे कि दीर्घरात्रि के बाद उषा के दर्शन करने का सौभाग्य उन्हें प्राप्त हो। मैं तो अपना धैर्य खो चुका हूँ, इसलिए उसके पहले ही विदा होता हूँ।

पैट्रोपोलिस
२२-२-४२

स्टीफन ज़्विग

ज़्विग की रचनाओं का अनुवाद संसार की ३३ भाषाओं में हो चुका था पर अत्याचारी हिटलर के यहूदी-विरोधी अनाचारों के कारण उन्हें अपने देश आस्ट्रिया को छोड़कर विदेशों में मारा-मारा फिरना पड़ा था।

वे जर्मन भाषा के लेखक थे और जर्मनी में उनके ग्रन्थ जला दिये गये थे! हिटलरशाही और नाज़ीवाद कभी के नष्ट हो चुके, पर ज़्विग का यह पत्र अमर है।

पत्रकार-कला विश्व साहित्य का एक विषय है। वह अन्तर्राष्ट्रीय है। हिन्दी पत्रों की खूबी समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम संसार की अन्य भाषाओं के पत्र-लेखकों के पत्र भी पढ़ लें। इसलिए यह सर्वथा स्वाभाविक है कि इस लेख का प्रारम्भ

टालसटाय के द्वारा रोमाँ रोलाँ को भेजे गये पत्र से हुआ है और अन्त रोमाँ रोलाँ के एक अनन्य मित्र स्टीफ़न ज़्विग के पत्र से ! यह बात ध्यान देने योग्य है कि यूरोपीय लेखकों को प्रोत्साहन प्रदान करने में स्टीफ़न ज़्विग वैसे ही अग्रगण्य थे जैसे भारतीय लेखकों को 'दाद' देने में आचार्य पण्डित पद्मसिंहजी शर्मा !

३-७-५६

बनारसीदास चतुर्वेदी

९९, नार्थ ऐवन्यू, नई दिल्ली

पद्मसिंह शर्मा के पत्र

१

श्री पारसनाथसिंह को लिखे गये पत्र

१

C/O आर्यमित्र-सम्पादक, आगरा

श्रा० सुदि १४, सोमवार, १९८२

प्रिय महोदय, प्रणाम ।

२९ जुलाई का कृपा-पत्र यथासमय मिला । अनुगृहीत हुआ । यह आपकी कृपा है—क़द्रदानी है, जो मुझे ज़िन्दा समझते हैं । मुझे तो अकबर के ये शेर अक्सर याद आते हैं ।

"कल मदह वो मेरी करते थे और बज़्म में मैं शरमिन्दा था,
मैं कुछ भी न था और था भी अगर उस वक़्त में था जब ज़िन्दा था ।"

× × ×

"अफ़सोस है कि ज़िन्दा हूँ, लिखना पड़ा है हाल,
क्या मुख़्तसिर जवाब यह होता कि मर गया ।"

अस्तु, ज़िन्दगी-मौत का सवाल बड़ा पेचीदा है । इसे ऐसे ही रहने दें ।

सतसई की भूमिका का भाग छप चुकने पर अपना लेख-संग्रह[१], जिसमें बहुत-सी समालोचनाएँ और फुटकर लेख हैं, भेजूँगा । "शंकर-सूक्ति-संग्रह" के सम्बन्ध में जो सूचनाएँ आपने दी हैं, उनका ध्यान रखूँगा । ऐसा ही होगा । प० हरिशंकरजी से कहा था, (अभी श्रावणी पर घर गये थे) कि सब सामग्री ले आओ । यहाँ सम्पादन कर डालेंगे । पर शंकरजी वहीं बुला रहे हैं । कहते हैं कि १५-२० दिन हरदुआगंज आकर बैठो तो संग्रह हो सकेगा । यहाँ से निपटकर जाने का विचार है । प० बनारसीदासजी को मिलने पर उस मोटे-ताज़े शरीर की याद दिलाऊँगा । और आपकी भेजी बधाइयाँ उन्हें दूँगा । बाक़ी बातें मिलने पर होंगी ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

---

१. महाकवि नाथूराम शंकर शर्मा की सर्वश्रेष्ठ कविताओं का संग्रह-सम्पादन आचार्यजी 'शंकर-सूक्ति-संग्रह' नाम से करना चाहते थे । लेकिन दुर्भाग्यवश वे ऐसा

२

आगरा, २१-६-१६२५

प्रिय महोदय, प्रणाम।

आपका ६-६ का कृपा-पत्र यथासमय मिल गया था। उत्तर में इस कारण विलम्ब हुआ कि तगा बिरादरी की संख्या आदि के बारे में मैंने एक 'कौमी लीडर' से पूछा था। (मैं भी आपकी तरह कौमी झगड़ों से सदा उदासीन और तटस्थ रहता आया हूँ। इस विषय का विशेषज्ञ नहीं हूं।) कल ही उनका उत्तर आया है। लिखा है, तगा बिरादरी की आबादी यू० पी० और पंजाब के निम्नलिखित जिलों में दो लाख के लगभग है। पंजाब के अम्बाला, करनाल, रोहतक, हिसार, गुड़गांवा और दिल्ली में और यू० पी० के सहारनपुर, मुज़फ़्फ़रनगर, मेरठ, बुलन्दशहर, बिजनौर, मुरादाबाद, अलीगढ़, मथुरा, आगरे में है। इनके अतिरिक्त रियासत ग्वालियर, धौलपुर और करौली में ये लोग हैं। वहाँ ये लोग 'गोला पूरब' नाम से प्रसिद्ध हैं। पर वे अपने को तगा ही समझते और कहते हैं। यह उनकी रिपोर्ट का सार है। श्री स्वा० सहजानन्दजी महाराज की पुस्तक 'ब्रह्मर्षि वंश-परिचय' में भी तगों के सम्बन्ध में लिखा है। उसे भी देख लीजिए। आपका यह विचार तो अच्छा है। मैंने भी एक बार बीस वर्ष पहले भूमिहार-सभा, काशी के एक अधिवेशन में यह प्रस्ताव रखना चाहा था, पर कुछ 'पोप' लोगों के विरोध से पेश न हो सका था। अब भी सफलता की आशा तो कम है। लोग 'रूढ़ियों के ग़ुलाम' और अहम्मन्यता की मूर्ति हैं। बात-बात पर 'सनातन धर्म' बिगड़ने का डर है। फिर भी महाशय, मैं कहूँगा—आपका यह विचार सुधार की दृष्टि से जाति-हित के विचारकोण से परम प्रशंसनीय एवं आदरणीय है। मारवाड़ी बोली में 'घणो चोखो छै' ईश्वर का नाम लेकर रूढ़ि के बन्दों से पहलू बचाते हुए, धर्म-प्राण मूर्तियों का अदब मलहूज़ रखते हुए प्रस्ताव पेश कर दीजिए। प्रस्ताव पेश करते समय तीन बार 'हरये नमः' का उच्चारण अवश्य कर लीजिए। श्रीमद्भागवत के सिद्धान्त और पूज्य श्री मालवीयजी के विश्वासानुसार यह 'विघ्ननिवारण' का अमोघ मन्त्र है। काशी के हिन्दू सभा वाले पहले अधिवेशन में इसी मन्त्र के प्रताप से मालवीयजी महाराज ने धर्म-प्राण पण्डितों के आक्रमण से अपनी जान बचाई थी। सो आप भी इस रक्षा-कवच को न भूलें। अधिवेशन के समय जिस दिन आप यह प्रस्ताव पेश करने वाले हों, उस दिन की मुझे ठीक सूचना दीजिए। मैं आपकी रक्षा के लिए अनुष्ठान करूँगा। महाभारत में से उस स्तोत्र का पाठ करूँगा जो जयद्रथ-वध

न कर सके। शंकरजी की कविताओं का संग्रह 'शङ्कर-सर्वस्व' नाम से १६५१ ई० में प्रकाशित हुआ है।

के दिन श्रीकृष्णजी के परामर्शानुसार अर्जुन ने पढ़ा था। पर हाँ, उसका पाठ तो स्वयं आपको ही करना चाहिए। उसे याद कर रखिये। प्रतिनिधित्व का विधान होगा तो किसी मन्त्र-शास्त्री से पूछकर मैं भी करूँगा। प्रस्ताव-प्रकरण समाप्त हुआ।

आपने अपने 'मौजी' जी का भौंड़ा और भद्दा मज़ाक़ मुलाहज़ा फ़रमाया। १८-६ के 'स्वतन्त्र' का विचार-वैचित्र्य देखा—"मालूम होता है पण्डित पद्मसिंह शर्मा सम्मेलन के साथ खिंचे फिरते हैं क्योंकि (कुर्बान जाइए इस 'क्योंकि' के) गत वर्ष देहरादूनी सम्मेलन के समय वह ज्वालापुर में जमकर बैठे थे और अब के आगरे में आसन जमा है।" इसका क्या अर्थ है। यही न कि मैं सभापतित्व की प्राप्ति के लिए मारा-मारा फिरता हूँ! दुहाई है वाजपेयीजी की और पारसनाथजी की! जगदन्तरात्मा साक्षी है और मेरे अनेक अन्तरंग मित्र हलफ़िया बयान दे सकते हैं कि मैं इस विषय में सर्वथा निर्दोष हूँ। मैं इस प्रकार की धृष्टतापूर्ण चेष्टा को नीति-विरुद्ध पाप समझता हूँ। मैंने कभी स्वप्न में भी ऐसी दुश्चेष्टा नहीं की। मैं तो ऐसे प्रसंग से बहुत बचता हूँ। मैं 'मौजी' जी को भरतजी की तरह प्रतिज्ञा करके विश्वास दिला सकता हूँ कि मैं जन्म-भर कहीं भी सभापति नहीं बनूँगा। आप 'मौजी' जी से पूछिए तो कि उन्होंने यह कृपा इस निरीह प्राणी पर क्यों की है? मैंने तो कभी उनका कोई अपराध नहीं किया। मैं तो उनके 'नियाज़मन्दों' में हूँ। मुझे उनकी इस भौंड़ी करतूत पर दुःख है। परमात्मा ऐसे 'दोस्तों' से बचावे। क्या यही 'हास्य रस' है, इसी पर उन्हें नाज़ है। यह तो साफ़ और बिला वजह दिलाज़ारी है। मैं इसका इन्साफ़ आप ही पर छोड़ता हूँ।

आशा है, आप सपरिवार सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२

नायक नगला, चाँदपुर (बिजनौर)
वैशाख सुदि ६, १९८३

प्रिय पारसनाथसिंहजी, नमस्कार।

पत्र यथासमय मिल गया था। पर मैं इस बीच में बराबर बीमार रहा। इसलिए न पत्र का उत्तर दे सका और न आपको उस सहृदयता, वीरता और तत्परता के लिए धन्यवाद-साधुवाद दे सका, जो हिन्दू-मुस्लिम-इत्तहाद की बाढ़ में आपने दिखाई। समाचारपत्रों में हिन्दुओं की वीरता, बिड़ला-बन्धुओं की धीरता और उदारता के कारनामे पढ़ता था और खुश होता था। कलकत्तेवालों को यह पुंस्त्व और पराक्रम चिरस्मरणीय रहेगा। सदियों बाद यह बासी कढ़ी में उबाल आया और राख की

चिनगारी चमकी। कलकत्ते का यह उदाहरण हिन्दुओं के मुर्दा दिलों में जान डाल दे तो ऐसे उपद्रव वांछनीय हैं और आवश्यक हैं। रोज़-रोज़ हों और सब जगह हों। हर हिन्दू यह कहकर कलकत्ते को मुबारकबाद दे रहा है।

"इंकार अज़ तो आय दो परदा चुनी कुनन्द।"

अब क्या दशा है? हिन्दू कहीं ढीले तो नहीं पड़ गये? बाढ़ पीड़ितों की सहायता का काम जारी है न? परमात्मा मालवीयजी और बिड़ला-बन्धुओं का-सा विशाल और दयार्द्र हृदय सब किसी को दे। मुरसन्द्र वाले बन्धु मामला जीत गये। यह जानकर परम प्रसन्नता हुई। आजकल वे लोग कहाँ हैं? मेरी ओर से उन्हें बधाई दीजिये। श्री कार्थीजी आजकल क्या कार्य कर रहे हैं? कहाँ हैं? आपने उस विषय में कुछ योजना तैयार की? कलकत्ते की बाढ़ में शायद अवकाश ही नहीं मिला। कुशल समाचार लिखते रहिये।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चाँदपुर (बिजनौर)
४-८-२६

प्रिय महोदय, प्रणाम।

३०-१ का कृपा कार्ड मिला। 'मिश्रजी' ने सूचना दी थी कि आप काशी में विराजमान हैं, और मेरा कार्ड वहाँ भेज दिया गया है। यह भी मालूम हो गया था कि बिड़लाजी कौंसिल के लिए कमर कस रहे हैं। मेरी सम्मति में बिड़लाजी को व्यर्थ ही कष्ट दिया जा रहा है। कौन्सिलें तो निठल्ले और लीडरत्व-लोलुप लोगों के लिए हैं। बिड़लाजी का एक-एक मिनट क़ीमती है। उनके अमूल्य समय का दुरुपयोग होगा और मानसिक कष्ट होगा। संसार-भर के दुर्व्यसनों में, मैं कौन्सिलों को प्रधान समझता हूँ। भारत की सामाजिकता के लिए यह क्षय रोग है। कौन्सिलों के बायकाट पर लिखने को तो जी चाहता है, बहुत-सी बातें सूझती हैं। पर वहाँ किसी को भेजने का समर्थन करने के लिए क़लम चलाना नहीं चाहता। पर अब जब कि बिड़लाजी का जाना निश्चित हो चुका है, और हमारे 'पीरे-मुग़ाँ (मालवीयजी महाराज) आज्ञा दे रहे हैं तो ख़ैर यों ही सही।

ब मै सज्जादा रंगी कुन गरत पीरे मुग़ाँ गोयद्,
कि सालिक बेख़बर न बुवद् ज़े राहोरस्मे मंज़िल हो।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५

महाविद्यालय, ज्वालापुर
२३ ४-२७

प्रिय पारसनाथसिंहजी, नमस्कार ।

२८-३-२७ का आपका कृपा-पत्र घर से लौटकर मुझे यहाँ यथासमय मिला था । मेले के झमेले में उत्तर देने का अवकाश न मिला । अब तो आप विलायत जाने की तैयारी में लगे होंगे । सुना है, प० राधाकृष्णजी भी साथ जा रहे हैं । आपका क़ाफ़ला किस तारीख़ को कहाँ से रवाना होगा ? आपकी यात्रा शुभ हो । वरुण देवता अनुकूल रहें । बिरादरी के पंच शान्त रहें । कोई नया बखेड़ा न करें । आप लोगों के मनोरथ सिद्ध हों । यात्रा के मिशन में कामयाबी हो, यही परमात्मा से प्रार्थना है ।

कभी-कभी वहाँ से पत्र लिखा कीजिए । अपनी यात्रा का विवरण भी पुस्तक-रूप में प्रकाशित करने के लिए लिखना न भूलिये । काम की चीज़ होगी । जहाज़ पर चढ़ते ही लिखना प्रारम्भ कर दीजिए और वापसी में उतरने तक बराबर लिखते रहिये । पहले यात्रियों ने भी ऐसी पुस्तकें लिखी हैं । आपकी यात्रा का विवरण उनसे बढ़-चढ़कर रहे । यह ध्यान रहे ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६

'सुधा'-आफ़िस, लखनऊ
चैत्र सुदि ८, गुरुवार, १९८५

प्रिय पारसनाथसिंहजी, प्रणाम ।

पहले पद्यमय पत्रोत्तर[1] और आज पुनश्च कार्ड मिला । अनेक धन्यवाद । बहुत-बहुत, मैनी थैंक्स । हज़ार-हज़ार शुक्रिया कि आख़िर आपका पता चला और पत्रोत्तर मिला । आपने पत्रोत्तर बड़े मज़े का दिया है और अपने कवि-कौशल की छोटी-सी

---

१. इस पत्र में जिस 'पद्यमय पत्रोत्तर' का उल्लेख है, वह श्री पारसनाथसिंहजी की एक कविता थी । आचार्यजी उन दिनों 'सुधा' के साहित्यांक का सम्पादन करने के लिए लखनऊ ठहरे हुए थे । कविता हिन्दी-साहित्य की वर्तमान दशा से सम्बन्ध रखती थी । उसकी अन्तिम पंक्तियाँ थीं—

"क्षमा चाहता निकल गई हो,
जो प्रसंगवश बात कठोर ।
आप बैठ साहित्य सम्हालें,
मैं जाता जीवन की ओर ।"

छटा दिखा दी है । छायावाद और प्रकाशवाद पर जो लिखा-पढ़ी हो रही है, मैं उसे यों ही कभी-कभी सरसरी तौर पर पढ़ लेता हूँ । दिलचस्पी से नहीं । मैं न छायावाद का विरोधी हूँ न खड़ीबोली का । पर दुर्भाग्य से छायावाद के नाम से जो कुछ आज-कल निकल रहा है, वह मेरी समझ से बाहर है । अज्ञेय मीमांसा है । इसलिए मजबूर हूँ । दाद नहीं दे सकता । समझूँ तो दाद दूँ । छायावाद के रहस्य पर आप कुछ प्रकाश डालिए तो शायद कुछ तत्व समझ में आ जाए । खैर, साहित्य-संख्या में आपका पत्रोत्तर ज्यों का त्यों छाप दूँगा । यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप जीवन की ओर जा रहे हैं और अफ़सोस कि मैं मौत की ओर जा रहा हूँ ।

सुना है, अखिल भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन जेठ में हो रहा है । ऐसी दशा में अग्नि-परीक्षा देने का मेरा साहस तो होता नहीं । मैं तो वहाँ पहुँचते-पहुँचते ही मूर्च्छित नहीं अधमरा हो जाऊँगा । आप इस वर्ष गर्मियों में हरद्वार आइए, आपका स्वास्थ्य बिलकुल ठीक हो जायगा । मैं यहाँ से वहीं जा रहा हूँ ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७

गुरुकुल, कांगड़ी
१०-३-२८

प्रिय पारसनाथजी, सप्रेम नमस्कार ।

आपने असौड़े[1] दर्शन न दिये । बड़ी आशा थी, बहुत उत्कण्ठा रही । अनेक सज्जन दर्शनार्थी थे । कई व्यक्ति ऐसे थे जिनसे मिलकर आप प्रसन्न होते । कवि शंकरजी भी आये थे । उनके सुपुत्र पं० हरिशंकर शर्मा 'आर्यमित्र'-सम्पादक भी थे । अपने दण्डी स्वामियों की जुगल जोड़ी, श्री स्वामी सहजानन्दजी और स्वामी सोमतीर्थजी भी विराजमान थे । सभी आपसे मिलना चाहते थे । एक बड़े ही गुणी पुरुष और आये थे—मुन्शी अजमेरी । यह सज्जन जन्म के तो मुसलमान हैं, पर वैसे सोलह आना वैष्णव हिन्दू हैं । उनका आचार-व्यवहार देखकर अनुमान भी नहीं होता कि यह किसी पहले जन्म में भी मुसलमान रहे होंगे । बड़े ही अच्छे कवि, पक्के कोकिल-कण्ठ गायक और अनुकरण-कला का आश्चर्यजनक उदाहरण । उनके कमाल को देखकर सब लोग दंग रह गये । आप बार-बार याद आते थे । कभी उन्हें ज़रूर सुनिए । चिरगाँव,

१. असौड़ा मेरठ ज़िले में एक छोटा क़स्बा है । वहाँ के प्रतिष्ठित रईस श्री रघुवीरनारायणसिंह आचार्यजी के मित्र हैं । उनकी पौत्री के विवाहोत्सव में श्री पारसनाथसिंहजी सम्मिलित न हो सके थे, उसी की शिकायत इस पत्र में है ।

बाबू मैथिलीशरणगुप्त के गाँव, में रहते हैं। चि० रामनाथ के विवाह में उन्हें फिर बुलाने का प्रयत्न करूँगा। आपको अभी से निमन्त्रण है। विवाह ज्येष्ठ के अन्त में होगा। बारात असौड़े ही जायगी। 'सरमद शहीद' का परिशिष्ट भेजता हूँ। सरमद के सम्बन्ध में कुछ और बातों का पता चला है, एक पुर्ज़े पर उन पुस्तकों का पता लिखा है। ये पुस्तकें वहाँ मिल जायँ तो उनसे सरमद का समाचार संकलित करके लेख में जोड़ दीजिए, तो लेख सर्वांगपूर्ण हो जाय। मन्सूर के बारे में अकबर का एक पद्य और मिला है। भेजता हूँ। इसे भी परिशिष्ट में जोड़ दीजिए। एक लेख और मिला है, 'कविता के सम्बन्ध में आज़ाद के विचार' वह भी भेजता हूँ। 'सरमद शहीद' के सम्बन्ध में 'सरस्वती'-सम्पादक ने लिखा है। प्रयाग के 'लीडर' ने 'सरस्वती' (जनवरी) की समालोचना में एकमात्र आपके ही लेख (सरमद शहीद) की प्रशंसा की है। यदि इस लेख में पुर्ज़े वाले ग्रन्थ से संकलन करके कुछ बातें और जोड़ दी जायँगी तो लेख बेजोड़ हो जायगा। बाण के सम्बन्ध में कुछ और भेजिए। लेख-संग्रह प्रेस में देने लायक़ कब तक हो जायगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८

गुरुकुल, कांगड़ी
ता० ११-५-१९२८

प्रिय पारसनाथजी, प्रणाम।

४-५-२८ का कार्ड यथासमय मिला। हाँ, सम्मेलन के सभापतित्व का पगहा मेरे गले में पड़ गया है। ताज्जुब है कि मुझ गोशानशीन ग़रीब को यों क्यों गिरफ़्तार कर लिया! इस पद को गौरवान्वित करने के लिए बड़े-बड़े महारथी मौजूद थे। मुझे तो स्वप्न में भी इसकी आशा न थी कि यह बलाये नागहानी मुझ पर नाज़िल होगी। मेरी अयोग्यता, अस्वास्थ्य, सम्मेलन की संकटमयी वर्तमान परिस्थिति और स्वागत-समिति वालों का गृह-कलह इन सब बातों को देखते हुए हिम्मत टूट जाती है; दिल बैठ जाता है। कई हितैषी मित्रों के आग्रह से विवश होकर मैंने स्वीकृति तो दे दी है। पर भ्रमतीव च मोमनः। आपने इस दुर्घटना पर मुझे बधाई नहीं दी; एक प्रकार से दबी हुई सहानुभूति ही प्रगट की है। इसके लिए कृतज्ञ हूँ, पर हिन्दी भाषा-भाषियों को आप किस बात पर बधाई दे रहे हैं? क्या भयानक भूल पर भी बधाई दी जाती है? सम्मेलन के इस भावी संग्राम में आप भी सम्मिलित होंगे? मेरी कुछ सहायता करेंगे? यह गले पड़ा ढोल बजाना ही पड़ेगा। पर यह तो

बतलाइए मुझे वहाँ कहना क्या चाहिए ? बिहार की दशा से मैं अच्छी तरह परिचित नहीं हूँ। और वैसे भी मैं तो गिरफ़्तारों में हूँ—

"किस तरह फ़र्याद करते हैं, बता दो क़ायदा,
ऐ असीराने क़फ़स, मैं नौ गिरफ़्तारों में हूँ।"

एड्रस के लिए कुछ हिंट्स दीजिए। आपका स्वास्थ्य अच्छा नहीं, यह जानकर चिन्ता है। आप यहाँ हरद्वार (कनखल) आ जाइए। आजकल यहाँ बड़ा अच्छा मौसम है। मैं तो यही उचित समझता हूँ। घर पर रहकर या कलकत्ते में स्वास्थ्य ठीक न हो सकेगा। मैं तो समझता हूँ जलवायु के परिवर्तन से ही आप भले-चंगे हो जायँगे। चिकित्सा की ज़रूरत ही न पड़ेगी। एक बार यहाँ आकर तो देखिए। हरद्वार में गंगा के किनारे सुरम्य बिड़ला-भवन में ठहरिए और स्वास्थ्य-सम्पादन कीजिए। बस, यही कीजिए। इससे अच्छा उपाय नहीं। लौटती डाक से सूचना दीजिए, कब आते हैं। आप कलकत्ते गये होंगे, इस विचार से यह पत्र वहाँ ही के पते पर लिख रहा हूँ। परमात्मा करे, आप तक पहुँच जाय। कहीं गुम न हो जाय। वाजपेयीजी महाराज का स्वास्थ्य आज-कल कैसा है ? हो सके तो उन्हें भी हरद्वार अपने साथ लाइए। 'स्वतन्त्र' के सम्पादन को छोड़कर कुछ दिन गंगा-तट पर बैठकर स्वास्थ्य-सम्पादन करें। आपके साथ आने में उन्हें कुछ कष्ट भी न होगा।

आप पर कुछ लिखने को तबीयत चाहती है। आपको बदनाम किए बिना न मानूँगा। आपका जड़ भरत का-सा मूक जीवन मुझे पसन्द है। आपने तो आत्म-गोपन की हद कर दी—

"निगाहें कामिलों पर पड़ ही जाती हैं ज़माने की,
कहीं छिपता है 'अकबर' फूल पत्तों में निहाँ होकर।"

मुझे आपके सम्बन्ध में जो कुछ लिखना है, अपनी ज़िम्मेदारी पर लिखूँगा। आपको दिखाने की जरूरत न पड़ेगी। उसमें आपको अपने स्वरूप का आभास दिखाई देगा। आप अपने असली स्वरूप को भूले हुए हैं। यदि आपको कुछ भी स्वरूप-ज्ञान हो गया, तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूँगा।

दर्शनाभिलाषी—
पद्मसिंह शर्मा

९

गुरुकुल, काँगड़ी
१८-८-२८

प्रिय पारसनाथजी, नमस्कार।

लेख के प्राप्ति स्वीकार में एक पत्र आज ही भेज चुका हूँ। वह पत्र जल्दी में लिखा था। इसलिए उसका परिशिष्ट कल की डाक से भेजने के लिए लिख

रहा हूँ। भगवान् करे पटना छोड़ने से पहले यह पत्र आपको मिल जाय और अपने 'मिशन' में आप से टिप्पनी लिखाने में कामयाब हो जाय।

सम्पादकीय टिप्पनियों का जो मतालबा 'सुधा' वालों ने मुझ से किया है, उसकी लिस्ट भेजता हूँ। इनमें से कुछ आप चुन लीजिए। २-४ उन पर या इनके अतिरिक्त किन्हीं दूसरे विषयों पर कम से कम 'सुधा' के ५-६ पेज का मैटर आप लिख दीजिए। इससे ज़्यादा हो तो क्या कहना है। अधिकस्याधिकं फलम्।

'सुधा'[1] के संकट में अपने को फँसाकर मैं इस वक़्त पछता रहा हूँ। इस संकट से मेरा उद्धार कीजिए। 'यह वक़्त है इम्दाद का।' 'सुधा' का यह अंक अच्छा न निकला तो मुझे भी बदनामी मिलेगी। सम्पादकीय टिप्पनियाँ महत्त्व की न हुईं तो मामला फीका रहेगा। इसीलिए आपको तकलीफ़ दे रहा हूँ। मुझे आशा है, आप जो भी लिखेंगे अच्छा लिखेंगे। क़लम उठाने की देर है। मैं अपनी पूरी शक्ति से अनुरोध कर रहा हूँ। राजेश्वर बाबू तक़ाज़ा करने को मौजूद हैं ही। क्या फिर भी आप न लिखेंगे ? राजेश्वर बाबू के तक़ाज़े से जब वैशाली का मैदान मार लिया तो क्या टिप्पनियों का कूचा सर न होगा। मुझे इस समय कुछ नहीं सूझ रहा। तबीयत राह न देती कि क्या लिखूँ ? इस हफ़्ते में आप टिप्पनियाँ लिखकर भेज दीजिए। बस यही प्रार्थना है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०

ज्वालापुर-महाविद्यालय,
सहारनपुर
२-६-२८

प्रिय पारसनाथजी, नमस्कार।

कलकत्ते का पत्र मिला था। आशा है, आप शिमला पहुँच गये होंगे। अपना चित्र 'सुधा' वालों के पास भिजवा सकें तो अच्छा है। अब आप छिपे नहीं रह सकेंगे, छपना ही पड़ेगा। 'हर्ष' के सम्बन्ध में जिस पुस्तक का पता आपने लिखा है, मँगवा लूँगा। पर अंग्रेज़ी या बंगला में जो पुस्तकें इस विषय पर हों उनका सार-संकलन आपको करना पड़ेगा। इस बारे में आप मेरा हाथ बटाएँगे तो मैं अकबर पर एक संग्रह समालोचनात्मक पुस्तक तैयार करके दे दूँगा, जैसा

---

१. आचार्यजी ने लखनऊ से प्रकाशित मासिक 'सुधा' के 'साहित्यांक' का सम्पादन-भार अपने ऊपर लिया था। उपर्युक्त पत्र उसी समय लिखा गया है।

कि आप चाहते हैं। बाण या हर्ष पर जो पुस्तकें मालूम हो सकें सूचना देते रहिए या मँगाते रहिए। इस विषय में आपका साहाय्य नितान्त प्रार्थनीय है। आशा है, आप शिमला-शैल-प्रेक्षण कर रहे हैं और प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

११

ज्वालापुर-महाविद्यालय, सहारनपुर
७-६-२८

प्रिय श्री प० पारसनाथजी, नमस्कार।

मैं अभी यहीं हूँ। आपका १५-६-२८ का कृपा-पत्र आज यहीं मिल गया। श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकरजी' हरद्वार से शिमले गये हुए हैं। वह आप से मिलना चाहते हैं। मिलें तो मिल लीजिए। 'हर्ष' और 'बाण' दोनों ही मेरा विषय है। क्योंकि हर्ष-चरित की समालोचना करनी है। 'हर्ष-चरित' में हर्ष के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है उसकी पुष्टि इतिहास से कहाँ तक हो सकती है, होती है? उस प्रसिद्ध चीनी यात्री ने किन बातों का विशेषता से उल्लेख किया है? यह सब कुछ दिखाना होगा। अंग्रेज़ी और बंगला आदि में 'हर्ष' या 'बाण' पर जो कुछ लिखा गया हो, उसका सार-संकलन आप कर दीजिए तो मेरा आधा काम हो जाय। यह काम आप ही के करने का है। अंग्रेज़ी जानने वालों की कांगडी में कमी नहीं है। पर उनसे सहायता न मिलेगी। मतलब की बात समझा न सकेंगे। जिस प्रकार उस दिन आईने-अकबरी का अर्थ आपने सुनाया था, इस प्रकार अनुवाद करते मैंने किसी को नहीं देखा। यदि आपका वह जल्दी का अनुवाद अक्षरशः लिख लिया जाता तो उसमें कहीं भी करैक्शन की ज़रूरत न पड़ती। सुन्दर गद्य-काव्य था। अभी जल्दी नहीं है। अक्टूबर के अन्त तक, जब अवकाश मिले, लिख डालिए। क्या 'हर्ष-चरित' का अंग्रेज़ी में अनुवाद हुआ है? इसका पता ज़रूर-ज़रूर लगाइये। राधाकुमुदजी ने हर्ष में 'हर्ष-चरित' से कुछ सहायता ली है अथवा उसकी प्रामाणिकता या अप्रामाणिकता के बारे में कुछ लिखा है? हर्ष के सम्बन्ध में जायसवालजी (श्रीकाशीप्रसादजी जायसवाल) ने एक अंग्रेज़ी ग्रन्थ का पता दिया था, वह पर्चा मुझ से खो गया। फिर पूछूँगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२

गुरुकुल, कांगड़ी
४-११-२८

प्रिय पारसनाथजी, नमस्कार।

आपका २८, १० का कृपा-पत्र मिला। आपने बहुत ज्यादा दाद दे डाली। इतनी आज तक किसी ने न दी थी। बक़ौल अकबर आप 'साहिबे दिल' मालूम होते हैं। सचमुच मैं इस सहृदयता के हाथों तंग हूँ। मुझे इसने बिल्कुल निकम्मा कर दिया। आजकल के निष्ठुर समाज में सहृदयता एक उपहासनीय रोग है। दिल की कमजोरी है। खैर, 'विशाल भारत' वाला लेख आपको पसन्द आ गया तो जरूर अच्छा है। उस लेख के लिखने में मुझे बड़ा कष्ट हुआ है। बार-बार रुकना पड़ता था। दिल उमड़ता था। आँसू बहते थे। ऐनक उतारकर साफ़ करता था। उधर भावों का प्रवाह-सा आता था। इस छोटे-से लेख ने मुझे थका दिया। पूरे 'सतसई-संहार' के लिखने में इतना कष्ट प्रतीत न हुआ था। आपका पत्र पढ़कर सन्तोष हुआ कि उस दर्द ने आपके दिल में भी असर किया। बात यह है कि किसी प्रियवत मित्र की याद दिल को बेचैन कर देती है और किसी हृदय-हीन पाखण्डी का अत्याचार सहन नहीं होता। कभी आपके साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त हो तो आप तो क्या सीखें मैं अलबत्ता आपसे बहुत कुछ सीख जाऊँ। लेख-संग्रह के सम्पादन का काम आपने स्वीकार कर लिया, बड़ी कृपा की।

श्री राधाकुमुद मुकुर्जी के ग्रन्थ की विषय-सूची तथा भूमिका का सारांश जो आपने भेजा है, वह संक्षिप्त होने पर भी काम का है। रा० कु० जी के ग्रन्थ में 'हर्ष-चरित' के अवतरणों का, यदि कहीं हो, पूरा अनुवाद भेजिए। यदि कुछ ऐसी घटनाएँ हों, जिनका उल्लेख बाण ने और चीनी यात्री ने भिन्न-भिन्न प्रकार से किया हो तो उनका अनुवाद भी कीजिए। बाण के विषय में जो लिखा हो, उसका पूरा अनुवाद चाहिए। बाण की जन्म-भूमि, वंश, बाण जब हर्ष के दरबार में पहुँचा है, तब हर्ष की राजधानी थानेश्वर में थी या कन्नौज में? बाण ने जो 'हर्ष-चरित' में अपने पहुँचने का हाल लिखा है, उससे तो यह मालूम होता है कि वह कहीं छावनी में जाकर मिला है। सम्भव है, उस समय हर्ष दौरे में हों। बाण के लेख से कुछ ऐसा ही प्रतीत होता है। आप 'हर्ष-चरित' का अंग्रेज़ी अनुवाद by E. W. Cawall पढ़ जाइये। उसके पहले उच्छ्वास में बाण ने आत्मचरित लिखा है और दूसरे उच्छ्वास में हर्ष के दरबार में पहुँचने का हाल है। बाण हर्ष के दरबार में 'कृष्ण' के द्वारा पहुँचे हैं। यह 'कृष्ण' कौन थे? मुकुर्जी के ग्रन्थ में इसका कुछ उल्लेख है। हर्ष के

प्रसिद्ध हाथी दर्पशात का बाण ने बड़ा विस्तृत वर्णन किया है। क्या इसका उल्लेख चीनी यात्री ग्रन्थ में है ? चीनी यात्री के ग्रन्थ का अनुवाद यदि हिन्दी में हुआ हो तो पता दीजिए। बाण ने हर्ष-चरित में जिन घटनाओं का उल्लेख किया है उनकी पुष्टि दूसरे ऐतिहासिक ग्रन्थों से कितने अंश में होती है। इस पर विशेष रूप से प्रकाश डालिए। बाण के बारे में मुकुर्जी ने या 'हर्ष-चरित' के अनुवादक ने जो कुछ लिखा हो उसका अनुवाद जरूर भेजिए। बाण की 'कादम्बरी' का भी अंग्रेज़ी में अनुवाद हुआ है। सी० एम० रीडिंग ने किया है। उसे भी देखिए। उसकी भूमिका में शायद कुछ लिखा हो। 'हर्ष-चरित' और 'कादम्बरी' का अंग्रेज़ी अनुवाद कलकत्ते में मिल सकेगा। चिन्तामणि वैद्य की पुस्तक भी देखिए। हर्ष के तमाम पत्रों की नकल किसी पुस्तक में छपी हो तो वह भी चाहिए। पहले बाण के सम्बन्ध का मसाला भेजिए। बाण ने हर्ष के दरबार में पहुँचने के मार्ग का वर्णन 'हर्ष-चरित' के दूसरे उच्छ्वास में किया है। कई गाँवों और चण्डी के मंदिर का उल्लेख भी किया है। वह कहाँ थे ? बाण का घर किस जगह था ? वह हर्ष के दरबार में किस जगह पहुँचा ? थानेश्वर में, कन्नौज में या दौरे की छावनी में ? बाण के सम्बन्ध की कोई उपलब्ध बात छूट न जाय। चीनी यात्री के ग्रन्थ के हिन्दी अनुवाद का पता भी दीजिए। हर्ष-चरित का अंग्रेज़ी अनुवाद जरूर देख जाइए।

पहले पत्र में मैंने जायसवालजी की लिखी एक पुस्तक के पते की एक चिट भेजी थी। उसे भी देख लीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३

गुरुकुल, कांगड़ी
२-१२-२८

प्रिय पारसनाथजी, नमस्कार।

लालाजी के स्मारक-दिन वाला पत्र आज मिला। अकबर के संस्मरण आपको पसन्द आ गये, मेहनत ठिकाने लगी। उधर आपका अनुरोध है तो दो-एक संस्मरण और भी लिखूंगा, पर इन संस्मरणों का लिखना मेरे लिए है बड़ा दु:खद व्यापार। भूली-बिसरी बातें कुरेद-कुरेदकर उखाड़नी पड़ती हैं। तबियत बेचैन हो जाती है। इस बारे में मैंने एक पत्र चतुर्वेदीजी (प० बनारसीदास चतुर्वेदी) को कई दिन हुए लिखा है। कलकत्ता पहुँचकर आप उसे लेकर देखिये तो कैफ़ियत-

मालूम हो कि इन संस्मरणों से मैं क्यों पहलू बचाता हूँ। पर आपका अनुरोध है तो कुछ और भी गड़े मुर्दे उखाड़ूँगा। इस वक़्त बड़ी उलझन में हूँ। बाण की मुहिम सिर पर सवार है और अभी उस ओर चलना भी शुरू नहीं किया। होली तक पुस्तक तैयार करके देनी है। समझ में नहीं आता किस तरह पूरा पड़ेगा। क्या 'माधुरी' में 'तैल माहात्म्य' पर आपका लेख है? अकबर के काव्य का संग्रह दिक्क़त-तलब है। उसके लिए वक़्त चाहिए। जल्दी में न हो सकेगा। बाण से छुट्टी पाकर उसमें लगूँगा। उसके लिए कापी करने वाला कोई लेखक भी दरकार होगा। मुझ से अपने लेख की कापी नहीं होती। कापी करने लगता हूँ तो लेख बहुत बढ़ जाता है। कभी-कभी बिलकुल नया ही रूप धारण कर लेता है। यह काम सहाय-सापेक्ष है। अकेले के वश का नहीं। दाद देने वाले तो बहुत मिल जाते हैं। तकाज़ा करने वालों की भी कमी नहीं। पर हाथ बँटाने वाला कोई नहीं मिलता। अकबर ने कहा है—

"खुला दीवाँ मेरा तो शोरे तहसीं बज़्म में उट्ठा
मगर सब होगये खामोश जब मतबे का बिल आया।"

खैर, मतबे के बिल की तो फ़िक्र नहीं है, किसी तरह लिखा भी जा सके। ये लिखने-पढ़ने के झंझट तो थे ही एक और समस्या उपस्थित हो गई है। छोटे लड़के चि० रामनाथ का विवाह इसी पौष में होने की चर्चा चल रही है। मैं बैशाख तक टालना चाहता था। पर घरवाले और बेटीवाले नहीं मानते। वह कहते हैं अभी हो। यदि ऐसा हुआ तो और परेशानी होगी। ऐसी हालत में समझ में नहीं आता, क्या करूँ? बाण को निपटाऊँ, संस्मरण[1] लिखूँ या अकबर का संकलन करूँ या विवाह की तैयारी में लगूँ—

"यक दिल ब खैले आरज़ू दिल ब कुजा कुजा निहम।
क्या हँसे इन्सान और क्या रो सके,
दिल ठिकाने हो तो सब कुछ हो सके।"

जो कुछ होगा, हो रहेगा। आप जब कलकत्ते पहुँचें तो सूचना दें। हाँ, बिड़ला-मैगज़ीन प्रकाशित होगया या नहीं? मेरे पास तो वह अभी पहुँचा नहीं। छप गया हो तो भिजवाइए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

---

१. उर्दू के महाकवि अकबर के संस्मरण आचार्यजी ने 'विशाल भारत' में लिखे थे।

१४

गुरुकुल, कांगड़ी
१२-१२-२८

प्रियवर, नमस्कार।

वर्धा का पत्र और 'हर्ष-चरित' की भूमिका का अनुवाद मिल गया। धन्यवाद। आशा है, अब आप कलकत्ते आ गये होंगे। लेख-संग्रह के सम्बन्ध में निवेदन है कि जब लेखों को खूब ध्यानपूर्वक पढ़कर सुसम्पादन करलें तभी प्रेस में दें। उनके पाप-पुण्य की सारी ज़िम्मेदारी आप ही पर है। उनमें बहुत-से लेख व्यक्तिगत झगड़ों से भरे पड़े हैं। उन्हें अब उसी रूप में देना उचित न होगा। उनके अंश विशेषों का, जिनमें कुछ साहित्य का चमत्कार दीख पड़े, संकलन कर लिया जाय। जो लेख कुछ परिवर्तन से काम के बन सकें, उन्हें वैसा कर दिया जाय। जो सर्वथा अनुपयुक्त समझे जायँ, उन्हें छोड़ दिया जाय। मतलब यह कि कहीं भी किसी प्रकार का अनौचित्य न रह जाय। किसी मृत या जीवित व्यक्ति को इन लेखों के प्रचार से किसी प्रकार का कष्ट न पहुँचे। यद्यपि किसी को कष्ट पहुँचाने के विचार से तो कोई भी लेख कभी नहीं लिखा गया था। परिस्थिति से विवश होकर ही व्यक्तिगत झगड़ों के लेख भ लिखने पड़े थे। पर अब वे बातें आई-गई हुईं। "न वैरमुद्दीपयति प्रशान्तम्।" गड़े मुरदे उखाड़ने में कोई लाभ नहीं। "सर्वतः सारमादद्यात्पुष्पेभ्य इव षट्पदः" के अनुसार लेखों के संकलन में मधुकरी वृत्ति से काम लीजिए तो अच्छा होगा। किसी लेखक के सम्बन्ध में कहीं कोई बात मुझ से पूछनी हो तो पूछ लीजिए। राजेश्वर बाबू का आज पत्र आया है। उन्होंने क्रिसमस में कलकत्ते जाने को लिखा है। उनसे भी परामर्श कर लीजिए और लेखों के सम्बन्ध की चर्चा अपने तक और राजेश्वर बाबू तक ही रहने दीजिए। किसी 'बहिरंग सज्जन को राज़दां' न बनाइए। मेरा विचार था कि एक बार आपसे मिल लेता तो सब बातें सोच-समझ ली जातीं। पर ऐसा मौक़ा मिलना मुश्किल ही है। हाँ, लेखों में जो गु० कु० कांगड़ी या स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्दजी से सम्बन्ध रखते हैं, उन्हें विशेष ध्यान से देखिए। उनमें कोई बात ऐसी न रह जाय, जो नये सिरे से मनोमालिन्य का कारण बन जाय। उनमें से जो कुछ उपादेय समझिए, ले लीजिए। इतने पर भी यदि कोई बात ऐसी रह जाय जो किसी को खटकने वाली हो, उसका समाधान अपने तौर पर अपनी भूमिका में कर दीजिए। तीन-चार लेख और हैं, जो ५-७ दिन में नज़रसानी करके भेजूंगा। हुएनसांग की अंग्रेज़ी पुस्तक से हर्ष या बाण के सम्बन्ध में कुछ मसाला मिल सके, तो उसे भी देख डालिए। सुना है, उसका हिन्दी अनुवाद भी हो गया है। आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५

गुरुकुल, कांगड़ी
२२-६-२६

प्रिय बा० पारसनाथसिंहजी, नमस्ते।

आपने इतना परिश्रम करके लेखों का संकलन और सम्पादन किया, इसके लिए मैं चिर-कृतज्ञ रहूँगा। वास्तव में यह काम आप ही के करने का था। भूसे के ढेर में से दाने बीनना था। बड़े धैर्य का काम था। इससे पार पाने पर आपको बधाई देता हूँ। लेखों में काट-छाँट का, छोड़ने और रखने का आपको पूरा अधिकार है। किसी लेख से या उसके किसी अंश से यदि किसी प्रकार के अनिष्ट की आशंका हो, किसी व्यक्ति, संस्था या समाज से वैमनस्य की सम्भावना हो तो उसे निर्दयता-पूर्वक दूर कर दीजिए। ममता के मारे मैं कुछ कहूँ तो भी न सुनिए। वही रखिए जिसमें कुछ सार हो, स्थायित्व हो। पर काट-छाँट में अनवधानतावश कहीं रग पर नश्तर न चल जाय, इसका ध्यान रखिए। जो लेख अधूरे हैं, बस वह अधूरे ही हैं। कभी पूरे नहीं हुए। स्वामी दर्शनानन्दजी की जीवनी भी नहीं लिखी गई थी। "वर्कर की मैं मैं" एक लेख का उत्तर था। उस पर से परिशिष्ट शब्द उड़ाकर वैसे ही रहने दीजिए। वह मुझे पसन्द है। 'परीक्षार्थियों की राम-कहानी' लेख मुझे और कई साहित्यिक मित्रों को, साहित्याचार्य प० शालग्रामजी शास्त्री तथा प्रो० रामदासजी गौड इत्यदि को बहुत पसन्द आया था। उसे पृथक् पुस्तकाकार छपाने के लिए अनुरोध भी हुआ था। कम से कम उसके लिखने का ढंग, उसकी भाषा मुझे अच्छी मालूम हुई थी। दिली जोश से लिखी गई थी। इसलिए उसे तो रखिए ही। भले ही उसमें स्थायित्व न रहा हो पर भाषागत चमत्कार उसमें है। प्रश्न-पत्रों के उद्धरण का अनावश्यक अंश चाहें तो कम कर दीजिए। समालोचना-भाग में अनधिकार चर्चा और लेखों में आक्षेप योग्य अंश न रहें तो अच्छा। उसमें ऐसा संशोधन कर दीजिए, जिससे कोई खुली चोट किसी पर न रह जाय। संस्था या व्यक्ति विशेष का नाम जहाँ हो, वह निकाल दिया जाय ऐसे (++) चिन्ह रहने दिए जायें। 'ज्ञान-मंडल के स्वार्थ' में भी कोई ऐसी बात हो तो दुरुस्त कर दी जाय। 'मनोरमा' और 'हर्ष-चरित' वाले लेखों में भी तीव्र वाक्य धीमे कर दिये जायँ या छोड़ दिए जायँ। यदि आक्षेप योग्य हों। प० भीमसेनजी वाले संस्मरण में जो अंश एक जगह मैंने बढ़ाया है, "दोनों मित्रों का मातम अकेले मुझे ही करना पड़ेगा" इत्यादि वह सन्दर्भ-पूर्ति के लिए जरूरी जान पड़ता है। उसके बिना वाक्य कुछ अधूरा-सा रह जाता है। इसलिए

उतना तो रहने ही दीजिए, बाकी न बढ़ाइए, छोड़ दीजिए। संस्मरणात्मक लेख, लेख-नायकों की मृत्यु के क्रमानुसार रहें। और जीवनी-सम्बन्धी लेख पात्रों के काल-क्रमानुसार हों तो कैसा? गौड़जी (श्री रामदास गौड़) की ऐसी ही सम्मति है। मैं आपकी राय पर छोड़ता हूँ। सभापति के दोनों भाषण 'साहित्य-दिग्दर्शन' या ऐसे ही किसी हैडिंग के नीचे दिये जायँ। "स्त्री शिक्षा के सम्बन्ध में महाकवि अकबर के विचार" शीर्षक लेख अकबर के संस्मरण के अन्त में रहे तो कैसा? राजेश्वर बाबू पुस्तक-प्रकाशन की एक संस्था खोलना चाहते थे, क्या उनका वह विचार शिथिल हो गया? जैसा वह उस समय कहते थे, यदि उनका विचार अब भी वैसा ही हो तो मैं उस कार्य में सहयोग कर सकता हूँ। यह बात अभी अपने तक ही रखिए। मैं यह स्थान छोड़ना चाहता हूँ। सम्भवतः अब यहाँ न लौटूँ। दो-एक पुस्तकें और लिख सकूँ तो अच्छा है। यहाँ महाकवि अकबर की कविता का संग्रह करूँगा या कुछ और लिखूँगा। पर दिक्कत यह है कि मकान पर बैठकर यह काम हो नहीं सकता। वहाँ और झंझट घेर लेते हैं। कहाँ बैठूँ? क्या करूँ? यह अभी निश्चित नहीं कर सका। आप कोई तरकीब सोचिए। क्या किया जाय? लेख-संग्रह प्रेस में देने से पहले मैं चाहता था कि उसे आपके पास बैठकर मैं एक बार देख लूँ। मैं डरता हूँ कि कहीं कोई बात ऐसी-वैसी न रह जाय। प्रेस में कब तक देने की सम्भावना है? आप अब कलकत्ता छोड़कर जाने वाले तो नहीं? लेख-संग्रह पूरा कितने दिन में छापकर प्रेस दे सकेगा? काम जल्दी और वक्त पर हो जाय तो मैं उतने समय के लिए कलकत्ते आ जाऊँ, जिससे प्रूफ स्वयं देख सकूँगा। सोच-समझ कर उत्तर घर के पते पर दीजिए।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१६

नायक नगला,

चाँदपुर (बिजनौर) २-७-२६

प्रियवर, नमस्कार।

असोड़े से कल ही लौटा हूँ। बरात वापस आई है। २८, ६ का कृपा-पत्र मिला। मैं सटाऊ-सिद्धान्त का मानने वाला तो हूँ; पर एकान्त भक्त नहीं। पर यही ठीक है कि विभक्ति मिलाकर छपाया जाय। इसी में लाभ है। यही नियम रहना चाहिए। 'गयी', 'गई' इनमें से जो आप पसन्द करें। ऐसी बातों में मैं 'टॉलरेशन' से काम लेता हूँ। सिद्धान्त रूप से तो 'गयी' ही ठीक है। पर मैं लिखता

अक्सर 'गई' ही हूँ। स्वामी दयानन्द विषयक लेख अधूरा ही है। उसका अन्तिम अंश कुछ कम करके पूरा कर दीजिए। यानी जिससे अपूर्णता असंगत न जान पड़े। 'नामानन्द' एक छपा हुआ लेख संग्रह में था। वह आपकी सूचियों में नहीं है। क्या वह बिलकुल ही काट दिया है? लेख तो अच्छा था। 'विनयांजलि' एक पुस्तक की भूमिका थी। पर वह पुस्तक लेखक के नाम ही से छपी है। इसलिए उसे अब लेख-संग्रह में शामिल करना ठीक न होगा। छपने से पहले में एक बार सब लेखों को देखना चाहता हूँ। अब जब कि में कलकत्ते आने का विचार कर ही रहा हूँ तो क्या यह सम्भव नहीं है कि मेरे आने तक पुस्तक छपाई का काम स्थगित रहे। मैं १० ता० के बाद चल सकूँगा। चौ० रघुवीरनारायणसिंहजी के साथ मुझे एक काम से अजमेर जाना है। ५ ता० को शायद वहाँ जाना हो। वहाँ से लौटकर ही आ सकूँगा। वह यात्रा रुक गई या मुझे उससे छुट्टी मिल गई तो पहले भी चल सकूँगा। पर अभी १०-१२ दिन की देर है। इस समय बहुत व्यग्रता में हूँ। मैं यथाशक्ति शीघ्र ही आपके पास पहुँचने का प्रयत्न कर रहा हूँ। राजेश्वर बाबू से क्या निश्चय हुआ?

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१७

मध्यभारत हिन्दी साहित्य-समिति

इन्दौर, १-६-३०

प्रियवर, नमस्कार।

२७, ५ का पत्र आज मिला। समाचार जानकर चिन्ता मिटी। आप पटने से अंग्रेज़ी दैनिक निकालने का प्रयत्न कर रहे हैं, यह जानकर चिन्ता हुई। आजकल तो पत्र बन्द हो रहे हैं। घोर संकट का समय है, कहीं पूंजी न डूब जाय। जो पत्र राष्ट्रिय न होगा, उसका बायकाट कांग्रेस वाले करा देंगे, फिर आपका पत्र कैसे चलेगा?

आपको यह सुनकर हर्ष या खेद होगा कि (……) पचास हज़ार के चारे की लीद करके बन्द हो रही है। वाजपेयीजी (श्री पं० अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी) की क़तई राय नहीं है कि पारसनाथजी नौकरी छोड़कर इस नये झंझट में पड़ें। वाजपेयीजी की सम्मति में पारसनाथजी की 'विश्वविश्रुत मुस्ती' इस नये व्यवसाय में आड़े आयगी। उनकी यह आशंका निर्मूल नहीं है। बात विचारणीय ज़रूर है।

में यहाँ से सम्भवत: मंदसौर (कालिदास की जन्मभूमि), चित्तौर और उदयपुर की सैर करता हुआ आगरे होकर घर लौटूंगा। 'पद्म-पराग' के दूसरे भाग के

लिए कुछ सामग्री (लेख-संस्मरण) इसी यात्रा में मिल जायगी। ऐतिहासिक तीर्थों के दर्शन के अतिरिक्त यह लाभ हो जायगा। भारत के वे ऐतिहासिक स्थान, ख़ासकर, कालिदास, भोजदेव और विक्रम की जन्मभूमि देखने की बड़ी लालसा थी, यही यहाँ इस मौसम में खींच लाई थी। मौसम तो प्रतिकूल है। गरमी यहाँ काफ़ी पड़ती है। रातें तो यहाँ ठंडी हैं। हवा बहुत चलती है, इतनी कि असह्य हो जाती है। महँगी यहाँ कलकत्ते से कम नहीं। किसी अंश में ज्यादती है। कुल मिलाकर जगह इतनी बुरी नहीं।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

१८

मुज़फ़्फ़रपुर

प्रिय पारसनाथसिंहजी, नमस्कार।

मैं सम्मेलन के बन्धन से छूटकर अब श्री पुरुषोत्तमदासजी टंडन के चक्कर में पड़ गया हूँ। टंडनजी बिहार में ५-६ दिन सम्मेलन के लिए घूमना चाहते हैं। मुझे भी रोक लिया है। साथी तो आज चले गये। वैशाली देखने की इच्छा तो बहुत हुई पर अब प्रोग्राम टंडनजी के हाथ में है। आपसे तो अभी बातें हुई ही नहीं। मौक़ा मिला तो मैं अभी घंटे-भर के भीतर आता हूँ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२

४ वियोगी हरिजी को लिखे गये पत्र

१६

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)

प्रिय वियोगी हरिजी, सप्रेम प्रणाम।

आपका ३-१२-२७ का कृपा-पत्र यथासमय पहुँचा था, पर उसका उत्तर में बहुत विलम्ब से दे रहा हूँ। इस अपराध के लिए लज्जित हूँ और क्षमा चाहता हूँ।

बहुत दिनों में आपका पता चला। इस बीच में कई सज्जनों से पूछा, पर किसी ने न बतलाया कि आप कहाँ हैं? अन्त में श्री गुरुप्रसाद टंडन ने मेरे पत्र का उत्तर दिया, फिर आपका कृपा-पत्र आया। यह जानकर खुशी हुई कि आप 'वीर भवन' में बैठकर वीर रस की सामग्री जुटा रहे हैं, ब्रजभाषा का एक कलंक मिटा रहे हैं। 'वीर सतसई' में आपने खूब बाँकपन दिखलाया है। मैं उस पर एक छोटी-सी समालोचना लिख रहा हूँ। आज ही प्रारम्भ की है। ब्रजभाषा में भी वीर रस की सुन्दर कविता हो सकती है, यही उद्देश्य सामने रखकर लिख रहा हूँ। 'विशाल भारत' में भेजूंगा। 'विशाल भारत' को आप भी अपना कुछ प्रसाद भेजिये तो अच्छा हो। श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखा है कि इसके लिए मैं आपसे प्रार्थना करूँ।

ब्रजभाषा के प्राचीन कवियों के काव्यों से वीर रस की कविता का एक संग्रह आप कर दें, तो बहुत बड़ा काम हो। इस ओर अवश्य ध्यान दीजिये।

हाँ, खूब याद आया। कवीन्द्र रवीन्द्र बुन्देलखण्ड के एक कवि की बहुत प्रशंसा किया करते हैं। नाम इस समय विस्मृत हो गया है, आप शायद जानते हों। क्या रवीन्द्र-प्रशंसित उस कवि की कविता प्राप्य है? कहीं मुद्रित हुई है? उसे प्रकाशित कराने का प्रयत्न आप उचित समझते हैं? रवीन्द्र तो उसके सर्वाधिक प्रशंसक हैं। भरतपुर-सम्मेलन में रवीन्द्र ने अपने भाषण में हिन्दी वालों को उपालम्भ दिया था कि अपने ऐसे सर्वोत्तम कवि का हिन्दी वाले नाम भी नहीं जानते! उक्त विस्मृत कवि के कुछ पद्य आप मुझे भिजवा सकेंगे?

बहुत दिन हुए आपने भक्ति रस के ऊपर एक बड़ा ग्रन्थ लिखने का विचार किया था, उसका क्या हुआ ?

'बिहारी सतसई' वहीं है जहाँ छोड़ी थी, आगे कुछ नहीं हुआ। आशा भी नहीं। मैं इस समय कुछ ऐसी परिस्थिति में आ पड़ा हूँ। चिन्ताओं ने चित्त को इस तरह बेचैन कर रक्खा है कि लिखने-पढ़ने का उत्साह दरिद्र के मनोरथ की तरह नष्ट हो गया। मेरी दशा ज़ौक़ के इस पद्य के सर्वथा अनुरूप है—

"किताबे-मुहब्बत से ऐ हज़रते दिल !
बताओ कि तुम लेते कितना सबक़ हो?
कि जब आनकर तुमको देखा तो वो ही
लिये दस्ते-अफ़सोस के वो वरक़ हो।"

आपसे मिले बहुत दिन हो गये हैं, देखिए कब दर्शन होते हैं। कृपा-दृष्टि रखिये। कभी-कभी कुशल-समाचार लिखते रहिये।

आपका
पद्मसिंह शर्मा

पुनश्च :

उक्त कवि का नाम शायद ज्ञानचन्द है, जो कुछ भी हो, आप उस पर एक निबन्ध 'विशाल भारत' में लिखें तो अच्छा हो। प्रयत्न कीजिये।

२०

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)
माघ कृ० १०, १९८४

प्रिय वियोगी हरिजी, सप्रेम प्रणाम।

९-१-२८ का कृपा-पत्र पाकर कृतार्थ हुआ। आपके पहले पत्र का उत्तर मा० कृ० १ को भेज चुका हूँ। आशा है, पहुँचा होगा। उसमें पत्रोत्तर के विलम्ब का कारण लिख चुका हूँ। वही 'प्रमादालस्यनिद्राभिः'।

पत्र लिखने के पश्चात मैं कई दिनों तक 'वीर सतसई' को थोड़ा-थोड़ा देखता रहा। जिस दिन आपका यह दूसरा पत्र मिला है, उससे पहली रात में 'वीर सतसई' पढ़ते-पढ़ते भावोद्रेक से अधीर-सा हो उठा। चित्तौर और गठेरवा आदि का वर्णन बड़ा ही उत्तेजक प्रतीत हुआ। वास्तव में आपने बड़ा सजीव वर्णन किया है। हृदय निकाल कर रख दिया है। 'काग़ज़ पै रख दिया है कलेजा निकाल के।' मैंने पहले पत्र में भी प्रार्थना की थी, अब फिर अनुरोध करता हूँ, वीर रस की जितनी भी कविता मिल

सके, बुन्देलखण्ड से, राजपूताने से, उसका एक संग्रह आप कर दीजिए। इधर हमारे रुहेलखण्ड में आल्हा का बहुत प्रचार है। अब कुछ दिनों से कम है, पहले, बहुत था। बरसात-भर आल्हा की धूम रहती थी। एक बार, कोई ४० वर्ष हुए, मेरे बचपन की बात है, आपके बुन्देलखण्ड से बाज जाति के नट आये थे। उन्होंने जो बुन्देलखण्डी भाषा का आल्हा सुनाया था, वह बहुत ही मधुर, रोचक और उत्तेजक था। वैसा फिर कहीं नहीं सुना। इधर आल्हा-चरित अनेक तुकबन्दों ने अपने-अपने ढंग पर गढ़ रक्खा है। आल्हा-चरित की कोई प्राचीन पुस्तक उधर मिल सके या गाने वालों से संग्रह की जा सके, तो उसका एक संशोधित संक्षिप्त संस्करण प्रकाशित होना चाहिए। आल्हा-चरित में क्षेपकों, अत्युक्तियों और इतिहास-विरुद्ध घटनाओं का समावेश बहुत हो गया है। संग्रह में इसका विशेष रूप से ध्यान रक्खा जाय। इसका कुछ उद्योग आप कीजिए।

'वीर सतसई' का साइज़ मुझे पसन्द नहीं। पॉकिट साइज़ होना चाहिए था या १६ पेजी। आपने सतसई में विरह वीर की नई कल्पना की है। बात अच्छी है, सूझ नई है। पर, उनमें साध्वी, वीर विधवाओं की गणना आपने क्यों नहीं की ? मैं तो समझता हूँ विरहिणी व्रजाङ्गनाओं से हिन्दू विधवाएँ वीरत्व में कुछ कम नहीं हैं।

'वीर सतसई' पर मैं संक्षिप्त समालोचना लिखना चाहता था, जैसा कि पहले पत्र में लिखा था पर, अब देखता हूँ समालोचना लम्बी हो जायेगी। व्रजभाषा में 'वीर रस' शीर्षक रक्खा है। मुख्य उदाहरण 'वीर सतसई' होगी। ब्रजभाषा की पुरानी कविता से कुछ चुने हुए, फड़कते हुए उदाहरण आप और भेज दें, तो बड़ा अच्छा हो। क्या 'छत्रसाल-ग्रन्थावली', जिसका सम्पादन आपने किया है, उसमें कुछ ऐसे उदाहरण मिलेंगे ? उदाहरण ऐसे हों जिनमें कविता भी हो। कोरी काँग्रेसी वीरों की-सी कायँ-कायँ न हो।

'सतसई' के १३वें पृष्ठ पर 'सती प्रताप' शीर्षक दोहे पर जो फ़ुट नोट है, वह समझ में नहीं आया। दोहे में वर्णित घटना और इन्द्रजीत पद तो सुलोचना के चरित की ओर इशारा करते हैं, लक्ष्मीबाई की ओर नहीं। 'दुवन' शब्द जिसका प्रयोग कई बार 'सतसई' में हुआ है, 'द्विषन' शत्रु ही के अर्थ में है न ? ५१ पृष्ठ पर जो १८वाँ दोहा है, उसका तीसरा चरण यदि यों बदल दिया जाय 'वृद्ध रोगि संन्यासि वधि' तो हाल की दिल्ली के भी हस्बहाल हो जाय। खैर, यह तो मज़ाकिया मशवरा है।

रवीन्द्र-प्रशंसित जिस कवि के विषय में मैंने पहले पत्र में लिखा था, पीछे मालूम हुआ, वह बुन्देलखण्डी नहीं, बघेलखण्डी था। नाम ज्ञानदास है। 'संजीवन भाष्य' अब पूरा नहीं होगा। चित्त नितान्त निर्विण्ण हो गया है। उत्साह ही नहीं होता।

हिन्दी में अब बड़े-बड़े महारथी पैदा हो रहे हैं। 'महारथी' के नवीन अंक में, जिसमें आपका कड़खा छपा है, एक महारथी ने बिहारी और दास के एक दोहे की तुलनात्मक समालोचना लिखी है। कितना अत्याचार और अज्ञान है। दास का दोहा बिहारी की बिल्कुल नक़ल है। फिर भी 'भाव-साम्य बिल्कुल नहीं' और दास का दोहा अच्छा है। हिन्दी में तुलनात्मक समालोचना का रोग संक्रामक होकर फैल रहा है। दूसरे महारथी 'समालोचक' के नवीन अंक में फ़र्माते हैं 'मतिराम सतसई' के प्रकाशन से बिहारी का आसन छिन गया।" जहाँ ऐसे विवेचक हों, बस साहित्य का बेड़ा पार है। आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

२१

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चाँदपुर (बिजनौर)
मार्गशीर्ष कृ० ११, १९८४

श्री माननीय प्रिय वियोगी हरिजी महाराज, प्रणाम।

'बिहारी सतसई' (संयुक्त भाग) सेवा में समर्पित कर रहा हूँ। रजिस्टर्ड पार्सल द्वारा भेज रहा हूँ। स्वीकार करके अनुगृहीत कीजिए।

'कवि-कीर्तन' में इसका उल्लेख करके आपने इसे भी अमर कर दिया। अनेक धन्यवाद। 'कवि-कीर्तन' मुझे यथासमय मिल गया था, पर इस बीच में बराबर अस्वस्थ रहा, उस पर कुछ लिख न सका। अब १०-१२ दिन हुए हरदुआगंज गया था, शंकरजी (स्व० नाथूराम शंकर शर्मा) को 'कवि-कीर्तन' सब सुनाया। बहुत पसन्द किया, खूब दाद दी। उसी वक़्त यह पद्य बनाकर सुनाया—

"योगधार तज भोग ताप तप का सहते हैं,
बस तेरा दिन-रात ध्यान धरते रहते हैं।
चल संकोच विसार मुक्ति राधा! अब खिलजा,
'शंकर' प्रेम पसार 'वियोगी हरि' से मिलजा।"

इसी प्रकार कई पद्यों में 'कवि-कीर्तन' की समालोचना में वे अपनी सम्मति प्रकाश करना चाहते थे, पर अस्वस्थता के कारण रह गये। शंकरजी आजकल बहुत रुग्ण हैं। दिन में कई बार दौरा पड़ता है। एक आँख से दीखना भी बन्द हो गया है। शंकरजी की ब्रजभाषा की पुरानी कविता आपके पास भिजवाना चाहता था, पर इस बार न हो सका। हरिशंकरजी से कह आया हूँ। ब्रजभाषा का प्राचीन साहित्य जो

अब दुर्लभ हो चला है, उसका उद्धार कीजिए। सम्मेलन को या किसी समिति को इस काम में लगाइये। आप सम्पादन करें और कोई समिति प्रकाशित करे तो हो सकता है। बड़ा जरूरी काम है।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

२२

'सुधा'
[साहित्य-संख्या]
सम्पादक—पं० पद्मसिंह शर्मा

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर, (बिजनौर)
ता० ३-३-१९२८

श्री वियोगि हरये नमः।

क्यों महाराज, यह आप एकदम चुप क्यों हो गये? "ऐसा गुनाह मुझसे क्या हो गया कबीरा?" पहले पत्र के उत्तर में विलम्ब अवश्य हो गया था सो उसके लिए मैंने क्षमा माँग ली थी, प्रायश्चित्त कर लिया था। आपके दो पत्र आये थे, उनका उत्तर मैंने दे दिया था। उत्तर में दो पत्र भेजे थे। इसकी सूचना अपने पिछले कार्ड में दे चुका हूँ। क्या मेरा कोई भी पत्र आपको नहीं मिला? मैंने अपने पहले पत्रों में कई बातें पूछी थीं। खैर, उनका उत्तर रहने दीजिए, अपने मौन का कारण बतलाने की कृपा कीजिए, यदि नो गोप्यम्। "को लैहै सिर विपत को भूखी बाघिन पालि।" आपकी इस आशंका के विरुद्ध मैंने इस भूखी बाघिन को पालकर सिर पर बिपत ले ली है। लोगों से भी इसके पालने की सिफ़ारिश कर रहा हूँ, देखिए कोई तैयार होता है कि नहीं।

इस काग़ज़ पर छपी पंक्तियों से आप जानेंगे कि मेरे सिर पर यह एक और बिपत आ पड़ी है। यार लोग ठोक-पीट कर वैद्य बना रहे हैं। 'सुधा' की साहित्य-संख्या का मुझ से सम्पादन करा रहे हैं। इसमें हाथ बटाइये। एक छोटी या बड़ी कविता और एक गद्य काव्य इस संख्या के लिए दिलवाइए। कहने का साहस तो नहीं होता पर, कहना ही पड़ता है, आपका चित्र और चित्र के साथ जो होना चाहिए वह भी—थोड़े-से नोट या हिंट्स। भक्त-जनों के अनुरोध से श्री हरि नाना रूप में अवतार ग्रहण करते हैं। आप इतना ही कष्ट स्वीकार कीजिए, भक्तों का मनोरथ पूरा कीजिए। इसका पाप-पुण्य मेरे सिर डालिए। यदि आपने मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली तो साहित्य-संख्या में एक विशेषता आ जायगी। श्री टंडनजी से भी प्रार्थना की है, उनसे भी एक लेख मिलने की आशा है।

मैं ५-७ दिन में लखनऊ पहुँच जाऊँगा। २०-२५ दिन वहाँ रहूँगा। लेख

तैयार रखिए। वहाँ पहुँचते ही आपको सूचना दूँगा। मेरी सूचना पहुँचने पर इस पत्र का उत्तर और लेख भेज दीजिए। आशा है, आप निराश न करेंगे। 'माधुरी' में नेत्रों पर आपके कवित्त पढ़े थे, वीर रस को आपने अपना लिया है।

आज इतना ही। अधिक अगले पत्र में।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२३

गुरुकुल, कांगड़ी
ज्येष्ठ सुदि, ३, १९८५ मंगलवार

प्रिय वियोगी हरिजी, प्रणाम और बधाई।

१६, ५ का पत्र पाकर परम प्रसन्नता हुई। पारितोषिक-समिति का निर्णय बहुत ही उचित हुआ है। इस पर मुझे हार्दिक हर्ष है। इस औचित्यवेदिता पर सम्मेलन को बधाई मिलनी चाहिए। मुझे तो 'डबल' खुशी है। आपको ही नहीं, अपने को भी बधाई दे सकता हूँ—'अहो अहं नमस्तुभ्यम्'। मेरा निर्णय लक्ष्य-वेध करने में सफल हुआ, 'महानयं प्रमोदावसरः'।

ऋषिकुल (हरिद्वार) का बाईसवाँ वार्षिकोत्सव गंगा दशहरे पर हो रहा है। हिन्दी सम्मेलन और कवि-सम्मेलन का भी आयोजन किया है। कवि-सम्मेलन के सभापतित्व के लिए वहाँ से मेरे परामर्शानुसार आपकी सेवा में निमन्त्रण पहुँच रहा है, स्वीकार करके अनुगृहीत कीजिए। दर्शन दीजिए और गंगा-स्नान का पुण्य लूटिए।

कल 'प्रताप' (कानपुर) में यह पढ़कर बड़ी चिन्ता हुई कि श्री टंडनजी (श्री पुरुषोत्तमदास टंडन) को निमोनिया हो गया था। परमात्मा उन्हें शीघ्र ही चंगा करे। इस बीच में वह पूर्ण स्वस्थ हो जायँ तो सम्मेलन पर चलने के लिए उनसे भी प्रार्थना की जाय।

आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२४

गुरुकुल, कांगड़ी (बिजनौर)
अगहन वदि ५, १९८५ रविवार

प्रिय वियोगी हरिजी महाराज, नमोनमस्तेऽस्तु सहस्र कृत्वः ।

आख़िर आपकी निद्रा टूटी, अज्ञातवास से प्रकाश में आना ही पड़ा । में हैरान था कि किस कन्दरा में जा छिपे ! क्या बात हुई जो इस तरह एकदम मौनी बाबा बन गये ! ख़ुशी की बात है, इस चुप का फल मीठा निकला । 'प्रेमयोग' आपने लिख डाला । बड़ा अच्छा किया । १५ जनवरी तक की क़ैद क्यों लगाते हैं, जब तक ठीक हो जाये लिखिए । किसी प्रदर्शनी में थोड़े ही पेश करना है । देर आयद् दुरुस्त आयद् । मेरी क्या पूछते हैं, वही "लिये दस्ते अफ़सोस के दो वरक हूँ", जो पुस्तक लिखनी है, उसकी सामग्री-सम्पादन में ही अभी लगा हूँ । दिल्ली अभी दूर है, फिर भी वक़्त पर पहुँचना ज़रूरी है । जैसे बनेगा पहुँचूंगा ही ।

इस बीच में दो लेख 'विशाल भारत' में छपे हैं । एक जो अभी नवम्बर के अंक में छपा है, (अकबर पर) भेजता हूँ । वीर हम्मीर और नकछेदीजी का वह संग्रह दोनों ही मेरे पास नहीं हैं । 'भारत जीवन' प्रेस में कभी छपे थे, वहीं से शायद मिल सकें । काशी में किसी परिचित को लिखिए । किसी पुरानी दूकान से ढूंढ़-भालकर भेज देगा ।

'विशाल भारत' आपके पास पहुँचता है कि नहीं ?

कभी-कभी पत्र तो देते रहिए । इधर आते-आते तो आप रह गये । टंडनजी (श्री पुरुषोत्तमदास टंडन) को समय-समय पर कई पत्र लिखे, पर उनके दरबार से एक का भी जवाब न मिला । कुछ कारण इस बेरुखी या रुखाई का समझ में न आया । शायद काम-काजी आदमी हैं, व्यर्थ के पत्र-व्यवहार को समय न हो । जो कुछ हो, मुझे उनके इस व्यवहार पर ताज्जुब ज़रूर है । मेरा प्रोत्साहन भी कभी-कभी काम कर जाता है, यह जानकर मुझे प्रसन्नता हुई ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२५

गुरुकुल, कांगड़ी (बिजनौर)
चैत्र व० १३, १९८५, रविवार

प्रिय श्री वियोगी हरिजी, प्रणाम।

कृपा-पत्र मिला। आपकी चिन्ता का कारण जानकर चिन्ता हुई। हिन्दी-संसार में ऐसा प्रकाशक मिलना दुर्लभ है जो अच्छी चीज़ की क़द्र करे और पेशगी पुरस्कार भी दे दे। प्रकाशक प्राय: अर्थ-पिशाच हैं। उनके यहाँ सब धानों का भाव १२ पँसेरी है। लोक-रुचि को भ्रष्ट करने वाले माल के ख़रीदार हैं। हिन्दी में अश्लील किस्से-कहानियों की भरमार है। अच्छे साहित्य को कोई पूछता भी नहीं। "जातेति कन्या महतीह चिन्ता कस्मै प्रदेयेति महान् वितर्क। दत्ता सुखं प्राप्स्यति वा नवेति, कन्या पितृत्वं खलुनाम कष्टम्।" यही बात आजकल अच्छी रचना के विषय में भी लागू हो रही है। एक प्रकाशक मेरे लेख-संग्रह के लिए बहुत लालायित थे, जब पुरस्कार की बात चली तो पहले ॥) पेज कहा, फिर १) पेज पर आकर ठहर गये और वह भी बाद को पुस्तक बिकने पर। मज़फ़्फ़रपुर में जो प्रकाशन का आयोजन हो रहा था, वह लोग भी ढीले पड़ गये। मेरा लेख-संग्रह लिया था, वह भी अभी खटाई में पड़ा है। पूछूंगा। यदि सौदा पट गया, तो लिखूंगा। पुस्तक कितने पृष्ठों की होगी।

इंडियन प्रेस में हिन्दी-विभाग के इंचार्ज प० लल्लीप्रसाद पाण्डेय हैं, जो बनारस ब्रांच में काम करते हैं। आपसे शायद परिचय हो, उनसे भी मालूम करूँगा। और तो कोई नज़र नहीं आता, जिससे बात की जाय। 'कॉपीराइट' देंगे या 'रायल्टी' पर! सब बातें लिखिए, तो लिखा-पढ़ी करूँ। उत्सव पर आप आ जाते तो मिलना-भेंटना हो जाता। मुख्य उद्देश्य यही था, वरना कवि-सम्मेलन में क्या होता है? अब की बार कोई और प्रसंग ऐसा आया तो फिर निवेदन करूँगा। एक बार इधर हो जाइए; अब मौसम अच्छा आ रहा है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

पुनश्च :

पत्र लिख चुकने के बाद मुज़फ़्फ़रपुर वाले सज्जन का पत्र मिला, जिसमें उन्होंने पुस्तक-प्रकाशन की चर्चा चलाई है। मैं आपकी पुस्तक के बारे में उन्हें लिख रहा हूँ। उत्तर आने पर सूचना दूंगा। 'प्रेम-योग' की संक्षिप्त विषय-सूची और पृष्ठ संख्या का अनुमान लिख भेजिए, शायद वह पूछें तो उन्हें लिख सकूं। यह भी सम्भव है वह पुस्तक की पाण्डुलिपि देखने को मँगाएँ। ५००) पेशगी पुरस्कार की बात भी लिख दी है।

पद्मसिंह शर्मा

२६

गुरुकुल, कांगड़ी
आषाढ़ कृ० ७, १९८५

प्रिय वियोगी हरिजी, प्रणाम।

कृपा-पत्र यथासमय पहुँचा। उत्तर में कुछ विलम्ब हो गया। आपने जो लक्ष्य-वेध पर मतवाले निशानेबाज़ की बात कही है, उस पर एक शेर दाग़ का याद आ गया। कितना मौज़ूं है—

"ग़श खाके दाग़ यार के क़दमों पै गिर पड़ा
बेहोशी में भी काम किया होशियार का।"

सो इस तरह कभी-कभी मतवाले भी मतिमत्ता का परिचय दे देते हैं।

अभिभाषण अभी नहीं लिखा जा सका। कल ही से शुरू किया है, पहले कुछ लिखा था, वह २९-५ के आँधी और मेह के तूफ़ान में नष्ट हो गया। मैं ऋषिकुल के उस उत्सव पर हरिद्वार गया था, पीछे आँधी से मकान की टीन उड़ गई। सब सामान भीगकर ख़राब हो गया। उसी में भाषण के पन्ने भी थे। ब्रजभाषा में वीर रस पर कुछ लिखा है। छायावाद पर भी लिखूंगा। भाषण छप नहीं सकेगा। प्रूफ़ कहाँ से भेजूंगा? टंडनजी की तरह लिखकर ही ले जाऊँगा। सम्मेलन में श्री टंडनजी (श्री पुरुषोत्तमदास टंडन) को ज़रूर ले चलियेगा। मैं भी लिखूंगा। यहाँ जो उत्सव होने वाला था, वह सम्मेलन के बाद जुलाई के प्रथम सप्ताह में होगा। सम्मेलन से सीधे आप यहीं आवेंगे, यह प्रोग्राम बना लीजिए।

बाक़ी मिलन पर। आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२७

गुरुकुल, कांगड़ी
१३-१२-१९

प्रिय वियोगी हरिजी महाराज, नमोनमः।

८-१२-२८ का कृपा-पत्र मिला। मेरे "दस्ते-अफ़सोस के दो वरक़" वाले फ़िक़रे से मालूम होता है आप नाराज़ हो गये, पर बात बिलकुल ठीक है। जब 'वही दस्ते अफ़सोस के दो वरक़' हों तो उन्हें मुराद का गुलदस्ता कैसे कहा जाय?

हाँ, कवि हरिनाथजी को उनके अनुरोध पर पदक देने का वादा मैंने ज़रूर

किया था। यहाँ तो पदक का कोई साधन नहीं। इसका भार मैं आप पर छोड़ता हूँ। आप अपने प्रबन्ध से तैयार करा दीजिए। उसके लिए कम-से-कम कितने रुपयों की जरूरत होगी, यह मुझे लिखिए। रुपये आपके पास भेज दूंगा। कविजी से मेरा नमस्कार कह दीजिए।

बहुत अच्छा जनाब, 'प्रेमयोग' को प्रेमियों के दिलों की नुमाइश में भेजिए। मैं कब कहता हूँ कि न भेजिए। मेरे पास भी तो प्रेमी का दिल है, वह भी उस नमाइश में होगा। 'प्रेमयोग' कहाँ छपेगा? आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२८

गुरुकुल, काँगड़ी (बिजनौर)
वैशाखी १३-४-२६ शनिवार

प्रिय वियोगी हरिजी महाराज, प्रणाम।

११, ४ का कृपा-पत्र आज मिला। लक्षण अच्छे हैं। पुस्तक-प्रकाशन के प्रबन्ध की आशा हो चली है। आज आपके पत्र के साथ ही श्रीयुत् बा० राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंह, बी० ए० का पत्र भी आ पहुँचा। उस दिन जब आपको पत्र लिखा था, उन्हें भी लिखा था उसी का उत्तर है और आशाजनक है। वह पत्र आपके पास भेजता हूँ। पढ़कर लौटा दीजिए और पुस्तक उनके पास रजिस्ट्री से भेज दीजिए। वह देख लें तो जल्दी फैसला हो जाय। आदमी सहृदय, सज्जन, कुलीन और विद्वान् हैं। साहित्य-सेवा की सदिच्छा से प्रेरित होकर ही पुस्तक-प्रकाशन के झंझट में पड़ने का साहस कर रहे हैं। अच्छा है दो-चार अच्छी-अच्छी पुस्तकें इनके द्वारा प्रकाशित हो जायँ।

आपका मन भला क्यों दबा जा रहा है? ऐसी तो कोई बात नहीं है। 'मनस्विता' की कमी मुझ में भी नहीं है। इसके पीछे मैंने भी अपने को तबाह कर लिया है, पर किसी मित्र के लिए तो भीख माँगने में भी मुझे संकोच नहीं, फिर यह तो एक व्यवहार की बात है, अपना कर्तव्य है। इसमें सोच-संकोच की क्या बात है? आप उन्हें पुस्तक भेज दीजिए। मैंने अपनी सम्मति उन्हें पहले ही लिख दी है। कुछ पूछेंगे तो फिर लिख दूंगा। मैं उन्हें लिख रहा हूँ कि पुस्तक आ रही है, देखकर शीघ्र निर्णय कीजिए। उधर वह बा० पारसनाथसिंह को भी बुला रहे हैं। उन्हीं की सम्मति से निर्णय होगा। पुस्तक भेजने की सूचना मुझे भी दे दीजिए।

पुस्तक का विषय और आकार-प्रकार जानने के लिए (जैसा कि उन्होंने जानना चाहा है) मैं आपका पत्र ही उनके पास भेज रहा हूँ, और इस अपराध की क्षमा चाहता हूँ। पुस्तक मेरे पास भेजने की ज़रूरत नहीं, (जैसा कि उन्होंने लिखा है) इसमें व्यर्थ का विलम्ब होगा। यह मैं उन्हें लिख रहा हूँ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३

श्री हरिशंकर शर्मा को लिखे गये पत्र

२६

पंजाबी क्षेत्र, कलकत्ता
जेठ सुदि १-१९८२
२३-५-२५

प्रिय हरिशंकरजी, नमस्ते ।

आपका २०, ५ का कृपा-पत्र पाकर जहाँ मुझे अत्यन्त हर्ष हुआ वहाँ साश्चर्य खेद भी हुआ । आप मुझे अपने से अप्रसन्न या नाराज़ समझें, इससे अधिक भयंकर अभियोग मुझ पर नहीं लगाया जा सकता । मैं अपनी ज़िंदगी से बेज़ार हो सकता हूँ, पर आपसे अप्रसन्न नहीं हो सकता । जिस दिन ऐसा विचित्र परिवर्तन मेरे स्वभाव में दिखलाई दे तो समझ जाइए कि "दिन किनारे आ लगे हैं" ।

मुझे स्वयं पत्र लिखने में तो अब प्रायः प्रवृत्ति नहीं होती । आज लिखूँ कल लिखूँ में ही कभी-कभी महीनों हो जाते हैं । पर ऐसा बहुत कम होता है कि मैं किसी के उत्तरणीय पत्र का उत्तर न दूँ । फिर आपके पत्र तो मेरे लिए मसर्रत का बाइस हैं । आपसे 'अपराध' हो सकता है । "कहीं ऐसा भी हो सकता है । ऐसा हो नहीं सकता ।" जिन दो-चार अज़ीज़ दोस्तों की इज़्ज़त मेरे दिल में है उनमें से एक आप भी हैं, यह मैं बड़े दावे और हलफ़ से ईश्वर को हाज़िर-नाज़िर जानकर कह रहा हूँ, इसमें ज़रा भी बनाकर नहीं ! मुझे आपके इस मानसिक कष्ट पर खेद है और 'सहानुभूति' भी है । आप इस वहम को धो डालिए कि मैं आपसे नाराज़ हूँ ।

दो-एक दिन से कुछ गरमी पड़ने लगी है । जी में तो आया था कि आपको यहाँ बुलाऊँ, यह लिखकर कि "मैं आप से नाराज़ हूँ, यहाँ आकर क्षमा-प्रार्थना करने पर राज़ीनामा होगा" । इसी बहाने से आप यहाँ आकर दो-चार दिन आनन्द लूटते । हो सके तो आइए ।

श्री कविजी की दशा सुनकर चिन्ता हुई । मैं बड़ा अपराधी हूँ कि अब तक कविजी की सेवा में हरदुआगंज न जा सका । देखिए, कब जाता हूँ । आजकल हरिद्वार में रत्नाकरजी दल-बल समेत डटे हैं। महाप्रभुजी भी विराजमान हैं । पं० ज्वालादत्तजी मसूरी से आने वाले हैं । मैं इस बार पंजाबी क्षेत्र में ठहरा हूँ । पत्र रसशाला के पते ही भेजिए ।

आपका
पद्मसिंह शर्मा

३०

नायक नगला, बिजनौर
भादों वदि २-१९८३
९-९-२६

प्रिय पं० हरिशंकरजी, नमस्ते।

३, ९ का कृपा-पत्र परसों पहुँचा। पढ़कर हर्ष भी हुआ और विषाद भी। चतुर्वेदीजी भारतीय हृदय हैं, इससे यह हालत होनी ही चाहिए। अकबर ने कहा है—

"शिकम होता तो मैं इस अहद में फूला फला होता,
सरापा दिल बना हूँ इस सबब से कुश्तए ग़म हूँ।"

ज़ौक ने ठीक ही कहा है—

"यों फिरें आशुफ्ता हाल अहले कमाल अफ़सोस है,
ऐ कमाल अफ़सोस है, तुझ पर कमाल अफ़सोस है।"

ढोंगी लीडरों का ज़माना है, मौज है उनकी। चतुर्वेदीजी और कविजी जी की क़द्र करने वाले कहाँ हैं? जिधर देखिए यार लोगों ने अखाड़े बना रक्खे हैं, उनमें ख़ुशामदी, स्वार्थी और मक्कार पड़े डंड पेलते हैं। भले आदमियों को कौन पूछता है। बिहारी ने झूठ नहीं कहा,

"बसे बुराई जासु तन ताही को सनमान।
भलो-भलो कहि छोड़िए खोटे ग्रह जप दान।"

हिन्दी साहित्य-सम्मेलन वालों को मैंने अनेक वार अनुरोध और आग्रहपूर्वक प्रेरणा की कि चतुर्वेदीजी से कुछ काम लो। प० रामजीलाल शर्मा ने वादा भी किया, फिर भी कुछ न किया। इसे सम्मेलन वालों की अज्ञानता और सम्मेलन के दुर्भाग्य के अतिरिक्त क्या कहा जाय।

ये सम्मेलन-वाले भी गुरु लोग हैं! अभी की नई घटना है। प० रामजी-लालजी ने मंसूरी का प्रोग्राम बनाया कि वहाँ सम्मेलन का डैप्यूटेशन चले। मुझे लिखा, प० ज्वालादत्तजी को लिखा, और ज़ोर देकर कई बार लिखा। मैं यहाँ बीमारी और तीमारदारी में उलझा था। प० ज्वालादत्तजी भी काम-काजी आदमी हैं। पर बार-बार के तक़ाज़ों से तंग आकर हम लोग किसी तरह मंसूरी चलने को तैयार हुए। मैं यहाँ से डैप्यूटेशन में योग देने के लिए महाविद्यालय पहुँच गया। प० ज्वालादत्तजी अल्मोड़े से मुरादाबाद उतर आए। प्रस्थान की तिथि नियत हो चुकी थी, पर प्रधान मन्त्रीजी ने झट प्रोग्राम कैंसिल कर दिया और इसकी सूचना कार्ड

द्वारा दी। प० ज्वालादत्तजी को यह व्यवहार बहुत ही दुर्व्यवहार प्रतीत हुआ। कुछ लिखा-पढ़ी भी हुई, पर प्रधान मन्त्रीजी ने अपनी भूल स्वीकार नहीं की। ऐसी दशा में चतुर्वेदीजी के सम्बन्ध में सम्मेलन वालों से क्या कहा जाय और क्या आशा रक्खी जाय।

मेरठ का कवि-सम्मेलन पढ़े-लिखे हुरदंगों का हुल्लड़ था। कविताएँ भी फोर्थ क्लास थीं। ढाल कालिज के एक महाब्राह्मण विद्यार्थी को मिली। उसकी रचना अपेक्षाकृत कुछ अच्छी थी। कविजी (शंकरजी) के न जाने से रंग फीका रहा। दर्शनार्थी बहुत निराश हुए।

राजा लक्ष्मणसिंहजी की जन्म-शताब्दी पर हो सका तो मैं "बिना पाथेय पधारूंगा।" चतुर्वेदीजी सचमुच मुर्दों में जान डालने वाले 'मसीहा' हैं। ऐसा कर्मयोगी किसी सभ्य देश और समुन्नत देश में जन्म लेता तो क़द्र होती। यहाँ तो ढोंगियों और धूर्तों की पूजा होती है। शरद पूनों पर प० रामजीलाल शर्मा को भी बुलाइए।

'कमनीय कीर्ति भूभर में भरने' की खूब रही। अच्छा लतीफ़ा है। कभी-कभी बड़े विचित्र वाक्य देखने में आते हैं। गुदा या 'गोदाम' शब्द पुल्लिग है। पूरब वाले इसका स्त्रीलिंग में प्रयोग करते हैं। ६ सितम्बर के 'स्वतन्त्र' में एक हैडिंग है 'चमड़े की गुदा में'। लिंग प्रत्यय से यहाँ कितना अनर्थ हो गया है। यानी चमड़े के गोदाम। सैयद इन्शा इस प्रयोग को सुनते तो दरियाए लताफ़त का एक अध्याय लिख डालते।

श्री शंकराचार्यजी को उनकी "शिक्षा-मीमांसा" भिजवाई या नहीं। हाँ, रत्नाकरजी का पोथा 'विहारी रत्नाकर' निकल गया। पाठ-भेद की विस्तृत मीमांसा है। प० सत्यपालजी की लिखित 'बिहारी सतसई' मिल जाय तो पाठ-भेदों का मुक़ाबला किया जाय। पर वह शायद उसे देना पसन्द न करें। मालूम तो कीजिए यदि कुछ दिनों के लिए दे दें, आपकी जमानत पर। मुक़ाबला करके पुस्तक लौटा दी जायगी।

आशा है, आप 'गृह की जनता' समेत सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३१

नायक नगला (बिजनौर)
आश्विन सुदि १४, बुधवार १९८३
२०-१०-२६.

प्रिय पं० हरिशंकरजी, नमस्ते।

आपका कार्ड, चतुर्वेदीजी का लिफ़ाफ़ा और कार्ड और महेन्द्रजी का लिफ़ाफ़ा ये सब मुझे कल मंगल की रात में ९ बजे मिले। महेन्द्रजी ने मेघदूत

के दो फ़ार्म भेजे थे, उनके साथ कोई पत्र न था, न भेजने वाले का चिट पर नाम ही था, जिससे कुछ पता चलता कि क्यों आये, कहाँ से आये। आज वह भूमिका लौटती डाक से माँगते हैं। यह तो आप लोगों को मालूम ही है कि गाँव में डाक वक्त पर नहीं पहुँचती, कभी ४-५ दिन तक चिट्ठियाँ डाकखाने में पड़ी रहती हैं। ऐसी हालत में वक्त पर तामील करना मेरे लिए मुश्किल हो जाता है, और उसका सबब मेरे ऐमाल नामे में काहिली लिखा जाता है।

आपका, चतुर्वेदीजी का, महेन्द्रजी का और स्वयं मेरे मन का भी आग्रह और अनुरोध है कि इस अवसर[1] पर मैं आगरे पहुँचूं। मैं अभी तक, बुधवार प्रातःकाल ८ बजे तक, यही सोच रहा हूँ कि चलूं। पर जिस स्थिति में हूँ, आशा नहीं पड़ती कि चल सकूं। स्थिति के उल्लेख का इस पत्र में अवकाश नहीं है, जल्दी-जल्दी पत्र घसीट रहा हूँ कि एक महाशय के हाथ, जो चाँदपुर जा रहे हैं, इसे डाक में भेज दूँ। वहाँ से यह कल २१, १० को पोस्ट होगा। शायद २४, १० तक आपको मिल जाय। और मेरे न पहुँचने का हाल आपको मेरी ज़बानी मालूम हो जाय। श्री चतुर्वेदीजी से और महेन्द्रजी से मेरे न पहुँच सकने के लिए क्षमा माँग कर खेद प्रकट करदें। चतुर्वेदीजी ने जो छपे हुए निवेदन और कीर्ति-रक्षा का उपाय भेजे हैं, उनसे मैं पूरी तरह सहमत हूँ, और यथाशक्ति सहयोग करने के लिए तैयार हूँ चतुर्वेदीजी मेरा नाम सहायकों में नोट करलें। उन पर विस्तृत सम्मति इस समय नहीं दे सकता। यदि इस पत्र से पहले वहाँ आ पहुँचा तो सब बातें हो जायेंगी, अन्यथा आप लोग उदारतापूर्वक मुझे क्षमा करें।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

३२

महाविद्यालय, ज्वालापुर
ज्येष्ठ वदि ७, १९८४

प्रियवर प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

आपका विस्तृत पत्र पाकर हृदय विकसित हो गया। भई ख़ूब लिखते हो, बहुत अच्छा लिखते हो। शाबाश, पढ़कर तबीयत ख़ुश हो जाती है। अनुप्रास में तो पूज्य कविजी को भी पीछे छोड़ जाते हो। पत्र कई बार पढ़ा, फिर काशीनाथ को दिखाया। यह भी आपके लेखों का बहुत प्रेमी है, इसे आपकी शैली बहुत पसन्द

---

१. सन् १९२६ ई० में आगरे में स्व० राजा लक्ष्मणसिंहजी की स्मृति में एक समारोह किया गया था। उसके लिए आचार्यजी को साग्रह निमंत्रण था। उसी अवसर की ओर यहाँ संकेत है। —सम्पादक

है। हाँ, फिर शायद याद न रहे, 'आर्यमित्र' का वह अंक या उसकी कटिंग जरूर भेज दीजिए, जिसमें काशी-यात्रा का वर्णन है। उसे काशीनाथ ने नहीं पढ़ा। काशीनाथ (आचार्यजी के ज्येष्ठ पुत्र शास्त्री, काव्यतीर्थ) मुझ से ज़्यादा खुश हुआ, आपके पद्य उसे बहुत भाए। यानी प्रसन्न करते भये। पद्य बहुत ही उत्तम हैं। "आजकल आगरे में आग बरसत है" बड़ी सुन्दर और सजीव रचना है। आप प्रमाद, संकोच, आलस्य और उपेक्षा छोड़ दें और बराबर कुछ न कुछ लिखते रहें तो कविजी की जगह सम्हाल लें। फिर जो कभी कुछ लिखते हैं तो उसे छपाते नहीं छिपा देते हैं। शिवाजी की प्रशंसा वाले पद्य भी मार्के के हैं। इतने ज़ोर के पद्य मैंने इस विषय पर इस वर्ष नहीं देखे। हाँ, मतवाले में पं० मदनलाल चतुर्वेदी के पद्य भी शिवाजी पर अच्छे हुए हैं; ठेठ ब्रजभाषा का यह उदीयमान कवि अच्छा लिखता है। "स्वजाति को जगायेगी जयन्ती श्री शिवाजी की" इसे पढ़ते हुए कुछ धचका लगता है, ध्वनि-भंग प्रतीत होता है, यानी ठीक नहीं पढ़ा जाता। सम्भव है, आप ठीक ढंग से पढ़ देते हों, पर यह भेद जबानी पढ़ना सुनकर ही खुलेगा, या फिर ग्रामोफ़ोन का रिकार्ड हो।

अस्तु, गरमी यहाँ भी ग़ज़ब ढा रही है। ज्वालापुर की ज्वालाएँ जलाए डालती है। हाँ, यहाँ का 'जीवन' जीवनप्रद है। वहाँ का तो पानी भी जलाता होगा।

दस-पाँच दिन के लिए इधर आजाइए तो बहार रहे। आप आजायँ तो मसूरी चलें। मुरादाबाद वाले बा० रामचन्द्रजी गुप्त कई साल से मंसूरी बुला रहे हैं। प० ज्वालादत्तजी भी जाने वाले हैं। बड़ा लुत्फ़ रहे यदि आप भी आजायँ। हो सके तो आ जाइए। इरादा हो तो पक्की बात लिखिए, प्रोग्राम बनाया जाय। भरतपुर के बारे में जो बातें आपने इस पत्र में लिखी हैं वह इतनी मनोरंजक हैं कि कई बार पढ़ने पर भी जी नहीं भरा। यह तो प्रकाशित होने योग्य पत्र है। 'ठौर-ठौर ठंडक के ताईं तरसत है' का अर्थ मैं पहले नहीं समझा। मैं इस वाक्य के कर्ता को आगे-पीछे देखने लगा। काशीनाथ ने यह ग्रन्थि यह कहकर सुलझाई कि 'ठौर ठौर' ही यहाँ कर्तृ पद है। यही बात है न। अच्छा भाव है।

'भूषण ग्रन्थावली' पर कोई अच्छी टीका कहीं छपी है कि नहीं। दो-एक टीका-टिप्पणी जो मैंने देखी हैं, वह और भी भरमाने वाली हैं। श्री 'अध्यापक रत्न' जी से पूछिये वह भी हिन्दी का एक सूचीपत्र हैं।

"क० स० या भड़ौआ बाजी" अच्छा नोट है।

पत्र का उत्तर शीघ्र भेजिए। काशीनाथ का प्रणाम।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

३३

काव्य-कुटीर, नायक नगला
भादों सुदि ६, १९८४
२-९-२७

प्रियवर हरिशंकरजी, नमस्ते।

२०-८-२७ का कृपा-पत्र कल मिला, आप पत्रोत्तर में बड़ी बेपरवाई करते हैं, इसकी मुझे सदा शिकायत रहती है। माफ़ी, क्षमा की तो कोई बात नहीं, पर आपकी यह आदत अच्छी नहीं। अक्सर जरूरी बातों को भी आप टाल जाते हैं, यह कुछ अच्छी बात नहीं। ख़ैर, चतुर्वेदीजी के आगरा छोड़ने का मुझे इतना दुःख, संताप और क्षोभ है कि लिख नहीं सकता।

अपील[1] का प्रस्ताव सेठजी का है। उन्होंने सब ऊँच-नीच सोच लिया होगा, अपील कुछ कविजी की ओर से तो प्रकाशित नहीं हो रही। प्रायः ऐसी अपीलें और स्कीमें निकलती ही हैं, इसमें अपमान की बात क्या है? सफलता और असफलता की दुविधा तो सभी कामों में रहती है। मैं यदि अच्छी अपील लिख सकता तो फ़ौरन सब काम छोड़कर लिख डालता। आप लोगों को कभी कष्ट न देता, फिर भी आप लोगों ने इस ज़रा-से काम में अक्षन्तव्य उपेक्षा से काम लिया, यह मुझे सचमुच बुरा मालूम हुआ। इसमें सारा अपराध आप ही का है, चतुर्वेदीजी का नहीं। चतुर्वेदीजी तो घर चले गये होंगे, मैंने उन्हें इस बीच में दो लिफ़ाफ़े गोकुलपुरा के पते पर लिखे थे, न मालूम मिले कि नहीं। उत्तर नहीं आया।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

पुनश्च :

दूसरा पत्र श्री महेन्द्रजी को दे दीजिए।

१. आचार्य पद्मसिंह शर्मा ने आर्यसमाज के नेताओं को इस बात के लिए तैयार किया था कि वे कविवर श्री प० नाथूराम शंकर शर्मा को पाँच सहस्र रुपये की एक थैली भेंट करें। इस कार्य के लिए आर्य नेताओं की ओर से धन-संग्रहार्थ एक प्रभावपूर्ण अपील प्रकाशित करने की आवश्यकता हुई। अपील लिखने का कार्य आचार्य श्री पं० पद्मसिंह शर्माजी को सौंपा गया। आचार्यजी ने श्री बनारसीदास चतुर्वेदी और श्री हरिशंकर शर्मा से अपील की पाण्डुलिपि तैयार करने का आदेश दिया। हरिशंकरजी ने शंकरजी के पुत्र होने के कारण इस कार्य के करने में संकोच किया। इसी संकोच के लिए आचार्यजी की यह मीठी फटकार है। अन्ततः अपील न लिखी गई और उक्त कार्य न हो पाया। —सम्पादक

३४

काव्य-कुटीर, नायक नगला
असौज अमावस, १९८४, रविवार

प्रिय प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

२०, ९ का कार्ड और २०, ९ का ही पत्र परसों दोनों एक साथ पहुँचे। बेशक आपने पहले ही कह दिया था कि अपील में भाग न लूँगा, पर अपील में भाग लेने को तो आपसे किसी ने नहीं कहा। आपके नाम से अपील नहीं छपेगी। दस्तख़त करने वालों में भी आपका नाम नहीं होगा। 'आर्यमित्र' में इस बारे में कुछ लिखने को भी आपसे किसी ने नहीं कहा। हाँ, अपील का मसविदा तैयार करने को आपसे ज़रूर कहा गया था, सो इसमें तो कुछ हर्ज न था। ऐसी बेगार तो अक्सर कर दी जाती है। असहयोगी वकीलों को भी ज़रूरत पड़ने पर दूसरों के लिए अर्जी और दरख़्वास्तें तैयार करते देखा गया है, और उसी 'रावणशाही' शैतान 'नौकरशाही' के हुज़ूर में पेश करने के लिए। फिर यदि आप भी अपील लिख देते, प्रस्ताव से लाख असहमत होने पर भी, तो इसमें क्या बुराई थी? इस बारे में सिर्फ़ आपसे यही शिकायत है। यह तो मैं अपना काम आपसे कराना चाहता था। यह बात कई बार खोलकर लिख भी दी गई थी। आपने ही या शायद चौबेजी ने लिखा था कि चौबेजी आपके मत से असहमत होकर ही इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि इस प्रकार की अपील बेकार है। इसी से मैंने चतुर्वेदीजी में शिथिलता लाने का अभियोग आप पर लगाया था। अब आप उन पर अपनी बला टाल रहे हैं। ख़ैर, यह भी सही। वह भी इस 'जुर्म में शरीक' सही। चौबेजी को तो मैं ढिल्लड़ न समझता था। यदि सच-मुच वे ऐसे ही ढिल्लड़ हैं जैसा आप लिखते हैं तो मुझे उन पर भी उतना ही अफ़सोस है, जितना आप पर। अगर्चे मैं खुद भी कम ढिल्लड़ नहीं हूँ, पर मैं आप लोगों को इतना बेपरवा, इतना ढिल्लड़ कभी न समझता था। मुझे अपनी इस समझ पर भी कम अफ़सोस नहीं है। आगे के लिए मैंने इबरत पकड़ी—"जो अपना साया भी हो तो उसको तसव्वुर अपना न कीजिएगा।"

सबब चाहे जो हो, पर नतीजा एक ही है कि अपील रह गई। यह दुर्घटना मुझे सदा खटकेगी। अस्तु!

आपको एक बात 'सुझाता' हूँ, यदि आप उससे कुछ लाभ उठा सकें। स्वर्गीय महात्मा प० ईश्वरचन्द्रजी विद्यासागर की जीवनी आपने न पढ़ी, ज़रूर न पढ़ी होगी, भला आप ऐसे पढ़ने वाले कहाँ हैं? हाँ तो तबीयत पर जब्र करके ढिल्लड़पन से एक हफ़्ते की छुट्टी लेकर, अपने शौक़ से न सही मेरे कहने से ही सही 'तफ़न्नुनतबा' के तौर

पर ही सही, आप उसे आद्यन्त श्रद्धा-भक्तिपूर्वक अवश्य पढ़ जाइए, यह मेरा सर्वात्मना अनुरोध है। पाण्डेय रूपनारायणजी ने हिन्दी में अनुवाद किया है। इंडियन प्रेस में छपी है। पठनीय और मननीय पुस्तक है। मैं आजकल उसे पढ़ रहा हूँ, ताज़ा अनुभव लिख रहा हूँ। सचमुच बड़ी अच्छी पुस्तक है। इसके अनुवाद से हिन्दी धन्य हुई है। हिन्दी में ऐसी एक भी जीवनी नहीं। इतने पर भी आप न पढ़ें तो लानत है मेरे इस निवेदन पर।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३५

नायक नगला, चाँदपुर, (बिजनौर)
ता० ८-३-१९२८
चैत्र कृ० २, १९८४

प्रिय प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

इस बार आपने 'आर्यमित्र' में खूब होली खेली है, कमाल किया है। मालूम होता है थोडी-सी पी ली थी, जिससे कपाट खुल गये। गद्य-पद्य सभी कुछ अच्छा है। इतना साफ़-सुथरा साहित्यिक विनोद आज-कल के हास्य 'रसावतार' नहीं लिख सकते। कभी-कभी प० रुद्रदत्तजी इस रंग में लिखा करते थे, वरना आज-कल होलिकांकों में भडौओं और अश्लीलता के अतिरिक्त होता ही क्या है? 'होली आई' बड़ी सुन्दर कविता है। रंगीले समाचार खूब हैं। नुसखे बड़े बढ़िया हैं। अद्भुत समालोचना तो सचमुच अद्भुत ही है, बिलकुल नई उपज है। रामस्वरूप शास्त्री भी पढ़कर हँसे होंगे। पशु-पक्षियों की पार्लमेंट की रिपोर्ट पठनीय है। मुछमुण्ड मंडल··· का भाषण अपूर्व है। गर्ज़ कि जो कुछ इस अंक में आपने लिखा है सभी एक से एक बढ़कर है। इस क़लम को, जिससे यह लिखा गया है, सुरक्षित रखना। 'आर्यमित्र' की इस संख्या के लिए मैं आपको बहुत-बहुत बधाई देता हूँ। 'विशाल भारत' की दूसरी संख्या में आपकी जो कविता निकली है वह भी बहुत सुन्दर है। अब तुम अपना स्वरूप प्रकट करने लगे हो।

एक पत्र उस दिन मैंने हरदुआगंज के पते पर भेजा था, मिला होगा। मैं अभी लखनऊ नहीं जा सका। म० वि० के उत्सव पर भी नहीं आया। अब लखनऊ जाने वाला हूँ।

'सुधा' की साहित्य-संख्या के लिए एक लेख और एक कविता तुम्हें देनी होगी, तैयार कर रखो।

आशा है, आप आगरे आ गये हैं, और प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३६

गुरुकुल, काँगड़ी
१-६-२८

प्रियवर, नमस्ते।

२७-५ का कृपा-पत्र मिला। समाचार जानकर प्रसन्नता हुई। सम्मेलन के सभापतित्व का पाश मेरे गले में पड़ गया है, पर सम्मेलन की परिस्थिति विकट हो रही है इससे चिन्ता है कि कहीं भद्द न हो जाय। सम्मेलन का समय निःसन्देह ठीक नहीं है, पर अब शायद पीछे न हटे। कई बार हट चुका है, अब डर है कि कहीं हटते-हटते लाइन से न उतर जाय, अनिश्चित समय के लिए स्थगित न हो जाय। मैंने स्वा० स० का ध्यान आपके परामर्श की ओर दिलाया तो है। गरमी बेशक बेहद होगी। लम्बा सफ़र है, पर क्या किया जाय। देह धरे का दंड समझकर भुगतना ही पड़ेगा। आप तो नहीं चल सकेंगे।

आप ग्वालियर की सैर कर आए, अच्छा हुआ। श्रावण की यात्रा भी कीजिए। पर मैं शायद साथ न दे सकूं। यहाँ छुट्टियाँ आधे भादों से होती हैं। उसी समय कहीं आ-जा सकूँगा। बीच में सम्मेलन का पचड़ा न आ पड़ता तो छुट्टी ही ले लेता।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३७

गुरुकुल, काँगड़ी (बिजनौर)
ज्येष्ठ पूर्णिमा, १९८५ रविवार
३-६-२८

प्रिय प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

परसों मैं आपके पत्र के उत्तर में एक कार्ड भेज चुका हूँ। उस दिन मुझे आठ-दस पत्र लम्बे लिखने पड़े थे, जल्दी में था, आपके पत्र की जो बातें ध्यान में रह गई थीं उन्हीं का उत्तर संक्षेप में दे दिया था। बाद में पत्र पढ़ने पर मालूम हुआ कि दो-एक बातें रह गईं। आपने जीवनी[1] के लिए लिखा है इसका मैं इस दृष्टि से अनुमोदन करता हूँ कि किसी बहाने आपसे मिलना हो जायगा। आप आवें तो फिर क्या बात है। अभी किश्ती चलती है, आप चाहें तो यहाँ भी आ सकते हैं, वर्ना मैं

१. आचार्यजी की जीवनी के नोट्स और उनका फ़ोटो प्राप्त करने के लिए श्री हरिशंकरजी ने प्रार्थना की थी। —सम्पादक

कनखल में आ जाऊँगा । यहाँ सोमवार को छुट्टी होती है । उस दिन प्रायः मैं कनखल जाया करता हूँ, और भी बहुत लोग वहाँ जाते हैं । अक्सर रविवार की शाम को ही कनखल पहुँच जाते हैं, वर्ना सोमवार को प्रातःकाल ८ बजे तक । आप जब आवें मुझे सूचना दीजिए । मैं अगले रविवार को कनखल आ जाऊँगा, आज भी कार्यवशात् मैं कनखल जा रहा हूँ । कल शाम को या परसों मंगल को प्रातः लौटूँगा । चि० काशीनाथ ने भी इधर आने को लिखा है । उस पाठशाला में एक महीने की छुट्टी है उसने घर होकर यहाँ आने का विचार प्रकट किया है ।

फ़ोटो की माँग कई जगह से आई पर मेरे पास कोई फ़ोटो नहीं । यहाँ ब्रह्मचारियों ने दो बार खींचा पर ठीक न उतरा । जब मैं लखनऊ गया था तो दुलारेलालजी ने खिचाया था, न मालूम वह कैसा उतरा ।

मैंने स्वागत-समिति के मन्त्री को लिखा है, आपके प्रस्ताव की ओर उनका ध्यान दिलाया है । पर अब समय शायद ही बदले । क्या यह सम्भव नहीं कि आप मुज़फ़्फ़रपुर चल सकें । रहे तो बड़ा मज़ा, वैद्यजी और प० ज्वालादत्तजी शर्मा भी चलने को कहते हैं । प० ज्वालादत्तजी सपरिवार हरिद्वार आये थे । कई दिन रहे । बड़ा आनन्द रहा । आप कई बार याद आये, 'वह तो थोड़ी पी थी' बार-बार दोहराया गया ।

नये 'विशाल भारत' में सिन्धी भाषा और साहित्य पर श्रीयुत् प्रो० भंभानी का एक पठनीय लेख निकला है । उसे पढ़कर सिन्धी भाषा पढ़ने की इच्छा पैदा हो गई है । क्या यह वही भंभानीजी हैं जो आगरे में प्रोफ़ेसर हैं ? इनसे तो शायद आपके साथ तब आगरे में मिला भी था । यदि यह वही भंभानीजी हैं और आपसे परिचित हैं, तो किसी दिन उनसे मिलकर पूछिए कि सिन्धी भाषा सीखने के लिए पहले कौनसी पुस्तकें पढ़नी चाहिएँ, क्या सिन्धी भाषा का सूफ़ी-साहित्य कहीं नागराक्षरों में भी छपा है ? यह उनसे याद करके पूछ देखिए ।

दशहरे के दिन शाम को ५ बजे इधर ऐसा भयंकर तूफ़ान आया कि बस कुछ न पूछिए । हज़ारों वृक्ष उखड़ गये, छतें उड़ गईं । गुरुकुल में हम लोगों के रहने के मकान टीन के हैं, करीब सब की टीन उस दिन उड़ गई । मैं उस समय हरिद्वार में था, पीछे तूफ़ान आया । सब सामान खराब हो गया । भाषण के कुछ नोट्स लिये थे, कुछ लिखा था वह भी नष्ट हो गया । पुस्तकें भी भीग गईं । आँधी के साथ ओले और वर्षा भी थी । आज चाँदपुर से पत्र आया है । उधर भी यही दशा रही । वहाँ के एक गाँव में ऐसी आग लगी कि ३०-३५ आदमी जल मरे । खलियानों में रक्खे हुए अनाजों का भूसा-दाना सब हवा हो गया । उधर आगरे में तो इसका ज़ोर नहीं था ?

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

३८

गुरुकुल, कांगड़ी (बिजनौर)
१९-६-२८

प्रियवर, नमस्ते।

१३-६ का कृपा-पत्र अभी मिला। समाचार जानकर प्रसन्नता हुई।

आप मुज़फ्फ़रपुर[1] अवश्य चलिए यही उचित है। जीवनी के नोट वहीं लिख लीजिए, इतना समय वहाँ अवश्य मिल जायगा। और भी बहुत-सी बातें होंगी। अवश्य चलिए। इरादा पक्का रखिए। आप चलेंगे तो मुझे सन्तोष रहेगा।

खेद है कि भाषण अभी तक तैयार नहीं हो सका। पहले जो लिखा था वह उस तूफ़ान की नज़र हो गया। यहाँ कोई पुस्तक भी काम की नहीं मिली। घर से पुस्तकें मँगाई थी वह आज ही पहुँची हैं। काशीनाथ (आचार्यजी के ज्येष्ठ पुत्र) को बुलाया था कि लिखने में, भाषण की तैयारी में, कुछ सहायता मिलेगी, वह भी न आये। कल तार दिया है। कल तक आ गये तो शायद कुछ हो जाय, नहीं तो भद्द होगी। दो दिन निमन्त्रणपत्रादि भेजने में लग गये। मैंने आपको तीन-चार दिन के लिए बुलाने का विचार किया था, पर मुकदमे के झंझट का ख्याल करके न लिखा और अब तो वक़्त ही नहीं रहा। २४ ता० को यहाँ से चल देना है। तब कहीं २६ को पहुँच सकेंगे, आप भी २६ को वहाँ पहुँचिए, श्री गोस्वामी व्रजनाथजी चलने को कहते थे। अध्यापकजी कहाँ हैं ? आगरे में निमन्त्रण-पत्र तो जितने नाम याद आये मैंने भेज दिए हैं, बाक़ी आप ज़बानी मेरी ओर से सबसे निवेदन कर दीजिए। प० अनूप शर्मा का पता लगाकर उन्हें निमन्त्रण ज़रूर भेजिए, घर का पता मुझे भी मालूम नहीं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१. सन् १९२८ ई० में मुज़फ्फ़रपुर में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन हुआ था। आचार्यजी सभापति निर्वाचित हुए थे। उसी के लिए भाषण आदि का उल्लेख है। —सम्पाद

३९

गुरुकुल, कांगड़ी (बिजनौर)
३-२-२९

प्रियवर प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

इस बार तो आपने 'विनोद-विन्दु'[1] नहीं विनोद की वर्षा कर दी है। वास्तव में विनोद-लेखन-कला में आप कमाल करने लगे हैं। गौड़जी (श्री अध्यापक रामदास गौड़) आपकी इस कला पर लट्टू हैं। बहुत प्रशंसा करते हैं। अनुप्रास की बहार ऐसी होती है। बे अख़्यार तारीफ़ करने को जी चाहता है। यह गौड़जी की सम्मति है, मैं भी इस पर स्वाद करता हूँ। संस्कृत का नहीं अरबी का ··

अपनी संगृहीत और सम्पादित वे पुस्तकें आपने न भिजवाईं। कई दिन से इधर बहुत सरदी पड़ रही है, प्रलय युग का दृश्य उपस्थित है। यज्ञदत्त शर्मा का लेख भी पढ़ा, अच्छा लिखा है। यक्ष्मा की चिकित्सा में प्रमाण वाक्य (सस्कृत) अशुद्ध छपे हैं। चरक का श्लोक तो बहुत ही अशुद्ध छपा है, मुश्किल से समझ में आया। यज्ञदत्तजी को संशोधन करना सिखला दो। सस्कृत वाक्यों का प्रूफ़ उनसे ठीक करा लिया करो।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४०

गुरुकुल, कांगड़ी
१७-२-२९

प्रिय प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

पत्र मिला था, मेरा कार्ड भी पहुँचा होगा। असौड़े के कवि-सम्मेलन में तुम्हें ज़रूर ही आना पड़ेगा। यह याद रक्खो और वहाँ 'दुम दबाने' से काम नहीं चलेगा। 'खौरू खोदकर' भिड़ना पड़ेगा। कुछ कविता तैयार कर रक्खो, और कविजी की कविताओं में से भी अच्छे-अच्छे नमूने चुन रक्खो, सुनाने पड़ेंगे। यह सब अनिवार्य है। दो-एक 'समस्या' श्री काशीनाथ के पास भेज देना, कुछ स्वतन्त्र विषय भी होंगे।

इस बार के विनोद-बिन्दु सबसे बढ़िया रहे। घासलेटी पर तो भई कमाल किया है। गौड़ (श्री रामदास गौड़) जी पढ़कर फड़क गये।[1] कमी की फ़हरिस्त में

१. श्री हरिशंकरजी उन दिनों 'आर्यमित्र' के सम्पादक थे। वे उसमें प्रति सप्ताह व्यंग्यात्मक विनोद-विन्दु लिखा करते थे। इन्हीं विन्दुओं की ओर आचार्यजी का संकेत है। —सम्पादक

कुछ बातें बेजोड़-सी भी हैं। जैसे 'गंगाप्रसादजी में ट्रैक्टों की न० दे० में फैक्टों की' पहले साहब के पास तो ट्रैक्टों का ढेर है और दूसरे के पास फैक्टों का पता भी नहीं। फिर यह क्या बात हुई। ऐसी ही दो एक बातें और हैं, फिर भी सूची है मजेदार।

हज़रत (बेताल) ने आतिथ्य का रोना रोया है, यानी तर रोटियाँ नहीं मिलतीं। इस पर कुछ लिख डालो। अब तक तो सुयश-मधु की ही भूख थी अब रोटियों की भी लग गई। इस दुहरे मतालबे को पब्लिक कैसे पूरा करेगी। इसे प्रकाश में लाइए, जनाब! बेताल का मतलब तो यह है कि उनका ज़िक्रे ख़ैर किसी न किसी रूप में होता रहे, नाम आगे आता रहे।

"हम तालिबे शोहरत हैं हमें नंग से क्या काम,
बदनाम भी गर होंगे तो क्या नाम न होगा।"

यह मोटो है उस शख़्स का। इसके ऊटपटाँग लेखों को जगह देकर तुम इसकी ख्याति-लिप्सा को व्यर्थ बढ़ाते रहते हो, ऐसा न किया करो।

विनोद-विन्दुओं की कटिंग्स रखते जाओ। काम की चीज है। विनोद-विन्दुओं के तुम पीयूषवर्षी पयोद हो, या सहस्र धारा फ़व्वारा। मश्क बराबर जारी रक्खो।

"हो जिस तरफ़ तबीयत लाजिम है शौके कामिल,
हर बात में असर है हर रंग में मज़ा है।"

हाँ, तो असौड़े की बात याद रखना। दो-चार फड़कती हुई कविताएँ चाहे जिस विषय पर हों ज़रूर बना रखो, 'समस्या' भेज दो।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४१

गुरुकुल, कांगड़ी
३-५-२९

प्रिय प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

बहुत दिनों से पत्र नहीं मिला। कुशल तो है। आजकल तो आगरे में आग बरसती होगी। यहाँ भी गरमी ख़ूब पड़ रही है, फिर वहाँ तो ग़ज़ब ढा रही होगी।

जीती-जागती पुस्तकों[1] की समालोचना की नकल और लोग भी करने लगे

---

१. श्री हरिशंकरजी शर्मा ने 'आर्यमित्र' में संजीव पुस्तकों की 'अजीब आलोचना' शीर्षक स्तम्भ खोला था। इसमें वे प्रसिद्ध व्यक्तियों को पुस्तक मानकर पुस्तक की तरह ही उनकी आलोचना करते थे। यह एक नवीन और अनोखी आलोचना-शैली थी। इसी से अभिप्राय है आचार्यजी का। —सम्पादक

हैं। 'प्रताप', लाहौर, के संडे एडीशन में मैंने कल रवीन्द्रनाथ, मोतीलाल आदि की ऐसी ही समालोचना पढ़ी पर वह बात कहाँ, इसकी ईजाद का श्रेय तुम्हें ही है।

प० भास्कर भालेरावजी का पत्र-व्यवहार आपके साथ हो तो उन्हें लिखिए। उन्होंने मेरे पत्र का उत्तर नहीं दिया। एक मराठी पुस्तक बाणभट्ट के लिए उन्हें लिखा था। यह पुस्तक आजकल अप्राप्य है। शायद उनके पास हो, मुझे ज़रूरत थी, उन्होंने उत्तर नहीं दिया।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

९२

गुरुकुल, काँगड़ी
११-६-२९

प्रियवर, नमस्ते।

८, ६ का कार्ड अभी मिला। कई दिन से पत्र लिखने का विचार कर रहा था। इधर भी गर्मी इस साल बेहद पड़ रही है। काफिया तंग है, फिर आगरे में तो आग बरस रही होगी।

हाँ, चि० रामनाथ का विवाह २९ जून को है। काशीनाथ बार-बार लिख रहे हैं कि इस मौके पर आपको नायक नगले ज़रूर बुलाया जाय। इसी सम्बन्ध में स्वयं भी अनुरोध करने वाला था, उस पर काशीनाथ का सत्याग्रह है। क्या आ सकोगे? तुम्हारे ढिल्लड़पन से आशा नहीं होती, वक्त पर कोई न कोई बहाना बना दोगे। पर इस बार चिराभ्यस्त 'बहाना प्रणाली' को छोड़कर आ सको तो मेरा सर्वात्मना अनुरोध है कि ज़रूर आओ। गरमी का मौसम है, यात्रा में कष्ट तो होगा ही, पर इन दिनों आगरे की स्थिति में जितना कष्ट होता है उससे बहुत कम होगा। २७ जून को नायक नगले पहुँचने का प्रोग्राम पक्का बनालो, और काशीनाथ को स्वीकृति की सूचना दे दो।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

पुनश्च :

श्री कविजी भी विवाह में आने का विचार तो प्रकट कर रहे हैं, पर उन्हें कष्ट देने का साहस नहीं होता, पर तुम न आये तो शिकायत गैर मामूली होगी।

४३

कलकत्ता

१२-९-२९

प्रियवर हरिशंकरजी, नमस्ते।

मैं अभी यहीं अटका हूँ। कल पुस्तक की छपाई 'शेष' हुई है, अब दफ़्तरी के चक्कर में हूँ। १०-१५ दिन कम से कम और लगेंगे। पुस्तकें कुछ साथ लेकर जाना चाहता हूँ। मैं यहाँ आकर शुरू से आख़ीर तक बीमार ही रहा। अब भी तबीयत अच्छी नहीं। बड़ी मुश्किल से 'पद्मपराग' का पहला भाग छप सका है, मिलते ही भेजूंगा। मुख्याध्यापकजी का ब्लॉक गोस्वामीजी का भेजा हुआ ऐन वक़्त पर मिल गया था। काम आ गया। पुस्तक में आठ चित्र हैं। काग़ज़ भी अच्छा है, पर छपाई अच्छी नहीं हुई. ख़ैर। हाँ, सरोज के विशेषांक में एक छायावादी महाशय का 'आधुनिक खड़ी बोली की कविता की प्रगति' पर लम्बा लेख है। उसमें श्री शंकरजी को 'सरस्वती'-काल का कवि कहा गया है, यानी द्विवेदीजी के प्रोत्साहन से ही उन्होंने खड़ी बोली में नये ढंग की कविता लिखनी शुरू की। पर यह बात तो इतिहास-विरुद्ध है न। शंकरजी तो बहुत पहले से ही खड़ी बोली में और देश-भक्ति पर कविता करते आ रहे थे। 'दई मारे भारत होरी है' यह तो कोई ३५ वर्ष पुरानी रचना है। 'शंकर-सरोज' का प्रथम संस्करण भी मैं समझता हूँ 'सरस्वती' निकलने से पहले निकला था। उसकी समालोचना भी 'सरस्वती' में निकली थी।

इस पर 'सरोज' में एक नोट देने की ज़रूरत है। नोट या हिंट्स फ़ौरन भेजो, जिससे इसी अंक में निकल जाय।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

४४

कलकत्ता

६-१०-२९

प्रियवर हरिशंकरजी, नमस्ते।

मालूम होता है महात्माजी[1] की मदहसराई करके अब तुम मामूली आदमियों

१. इन दिनों हरिशंकरजी ने महात्मा गांधी की प्रशंसा में एक कविता लिखी थी, जो सन् १९२९ में उनके आगरा पधारने पर स्वागत में पढ़ी गई थी। यह कविता बहुत पसन्द की गई और कई समाचारपत्रों में प्रकाशित हुई। इसी ओर आचार्यजी का व्यंग्य है। —सम्पादक

से बात करना शान के खिलाफ़ समझने लगे हो। खत का जवाब भी नहीं देते। २०-२५ दिन हुए एक ज़रूरी कार्ड लिखा था, आज तक जवाब मिलता है ! महात्माजी भी लोगों के पत्रों का जवाब देते हैं और वक़्त पर देते हैं। जैसा कि प० बनारसीदासजी कहते हैं। जो कुछ हो यह पत्र हजम करने की आदत अच्छी नहीं, डकार तक नहीं लेते।

'आर्यमित्र' के ऋष्यंक में एक विज्ञापन देने का विचार है, जो विज्ञापन 'विशाल भारत' अक्टूबर के शुरू में ५वें पेज पर सतसई और पद्मपराग का छपा है वही ज्यों का त्यों 'आर्यमित्र' के ऋष्यंक में दिया जाय तो क्या चार्ज होगा? यदि किसी अच्छी जगह दिया जा सके और चार्ज इतना किया जाय कि आसानी से दिया जा सके तो सूचना दो। आशा तो नहीं है कि वक़्त पर जवाब दोगे फिर भी मुमकिन है इधर कान हो जायँ, जवाब मिल जाय। हिन्दू संगठन पर एक छोटा-सा लेख 'स्वतन्त्र' २६, ६ में मैंने लिखा था, उसे ऋष्यंक में उद्धृत कर दो तो अच्छा है, उद्धरणीय है। मैं १५-२० दिन यहाँ और रहूँगा। हृषीकेश भट्टाचार्य शास्त्री के संस्कृत निबन्ध छपा रहा हूँ। पद्मपराग की जिल्दें भी अभी दफ़्तरी के यहाँ से नहीं मिलीं, इस हफ़्ते में मिल जायँगी। प० बनारसीदासजी आज रवाना हो रहे हैं। इस कार्ड का उत्तर मिल जाय तो बड़ी बात हो। सिर्फ़ जो बात पूछी है उसी का, दो हर्फ़ी हो; ज़्यादा न सही।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४५

कलकत्ता
१०-१०-२६

प्रिय प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

८, १० का पत्र मिला। ढिल्लड़ता छोड़ने के लिए आप कमर कस रहे हैं, यह जानकर ख़ुशी हुई।

'विशाल भारत' की अक्टूबर की संख्या पहुँची होगी। उसमें एक विस्तृत समालोचना है, उसे ज़रा पढ़ लीजिए। सितम्बर में भी एक लेख म० वि० पर निकला था।

चतुर्वेदीजी (श्री बनारसीदास चतुर्वेदी) से तो भेंट होगी ही। शायद आज फ़ीरोज़ाबाद पहुँच जायँ।

पद्मपराग की समालोचना 'आर्यमित्र' में पढ़ी थी। यह आपने अच्छी उस्तादी की, बेचारे चतुर्वेदीजी इंतज़ार में ही रह गये कि 'विशाल भारत' के लिए समालोचना आ रही

है। पुस्तक के फर्मे इसीलिए उन्होंने भेजे थे। आपने अमानत में खयानत कर डाली ! समालोचना का पहला चांस खुद ने ले लिया। चतुर्वेदीजी टापते ही रह गये। पद्मपराग में सबसे पहला लेख 'आर्यमित्र' से ही उद्धृत है इसलिए पहले समालोचना निकालने का उसे हक तो था। हाँ, मैंने काँगड़ी छोड़ दी। सतसई पूरी करने का विचार तो है, पर यह काम होता नहीं दीखता। कोई सहायक नहीं मिलता। देखिए क्या होता है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४६

गांगेय भवन
१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
६-१२-२६

प्रिय प० हरिशंकरजी, नमस्ते।

तुम्हारा पत्र कई दिन हुए यथासमय मिला था। कार्य-व्यग्रता के कारण उत्तर में विलम्ब हुआ। इस बीच में दो दिन के लिए मैं रवीन्द्रनाथ का शान्ति-निकेतन देखने चला गया था। वहाँ से आकर ज्वर आ गया, यह भी विलम्ब का हेतु हुआ। चतुर्वेदीजी की शिकायत जो तुमने लिखी है, ठीक है। उन्होंने शायद अपनी सफ़ाई भी भेजी है। मैंने उन्हें इस पर कुछ फटकारा भी था। बात यह है कि चतुर्वेदीजी कुछ 'हौलू' तबियत के आदमी हैं; और प्रोपेगेंडिस्ट हैं। जिस लाइन में पड़ गये हैं यह इनकी तबीयत और आदत के ख़िलाफ़ है। इन्हें एक और सनक है—अपनी निष्पक्षता दिखाने का खब्त है। इसमें अक्सर अनर्थ कर डालते हैं और फिर फ़ब्तियाँ कहते हैं—"अरे साहब, मैंने उनका लेख नहीं छापा, उनकी समालोचना नहीं की, उनके पत्रों का उत्तर नहीं दिया। यद्यपि उनसे मेरी घनिष्ठता, मित्रता है, मैं उनका सम्मान करता हूँ, पर जिस बात में मत नहीं मिलता उसमें मैं किसी का लिहाज नहीं करता।" यह संसार में बस दो आदमियों पर लट्टू हैं, गांधीजी और मि० एंड्रूज पर। इनकी गुण-गाथा गाते-गाते नहीं थकते। फिर भी आदमी अच्छे हैं, 'ये और बात है कि ज़रा······'

'चाँद' के मारवाड़ी अंक की समालोचना 'आर्यमित्र' में आज पढ़ी, खूब लिखी है। 'चाँद' बड़ा ही नारकीय पत्र है, मुझे तो इससे शुरू ही से घोर घृणा रही है। इसका बायकाट होना चाहिए। खैर, जाने दो दोजखी जन्तु को।

श्री ठाकुर माधवसिंहजी की मौत का हाल पढ़कर बड़ा दुःख हुआ। शुद्धि-संगठन का एक स्तम्भ जाता रहा, अपनी जगह हमेशा के लिए ख़ाली छोड़ गये। ऐसे लगन के आदमी अब कहाँ पैदा होते हैं। प० नन्दकिशोर देव शर्मा भी चल बसे !

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४७

गांगेय भवन
१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
११-२-३०

प्रिय हरिशंकरजी, नमस्ते।

बहुत दिन हुए एक पत्र तुम्हारा आया था। उत्तर में बड़ा विलम्ब हो गया। कई कारण ऐसे ही हुए, उत्तर न दे सका।

यह सुनकर सन्तोष हुआ कि श्री कविजी की कविताओं का संग्रह समाप्त हो गया। अब एक काम करो, दुर्बोध शब्दों पर टिप्पनियाँ दे डालो। एक क्रम-विभाग भी बना लो। सब कविताओं को ध्यान से देख जाओ, यानी सम्पादन का 'रिहर्सल' कर जाओ, फिर मैं देखूँगा। यहाँ से छुटकारा पाकर मैं उधर ही आने का प्रोग्राम बना रहा हूँ। विचार ऐसा है कि 'पद्म-पराग' का दूसरा भाग आगरे के शांति प्रेस में छपाऊँ, यदि छपाई के रुपये का किसी तरह प्रबन्ध हो गया तो ऐसा ही करूँगा। दूसरा भाग किसी को देने का विचार नहीं है। इसी चेष्टा में हूँ कि स्वयं ही प्रकाशित करूँ और आगरे में ही छपाऊँ। शांति प्रेस मुझे पसन्द है। यदि कुछ प्रबन्ध ऐसा हो गया तो आगरे आना ही पड़ेगा, तभी शंकर-सूक्तियों का सम्पादन हो जायगा। नहीं तो इसी काम को १०-५ दिन को उधर आ जाऊँगा। इतने में तुम सम्पादन का 'रिहर्सल' जरूर कर डालो। ऐसा हो जाने से मेरा काम हल्का हो जायगा। मैं १०-१२ दिन में यहाँ से छुट्टी पा जाऊँगा। संस्कृत पुस्तक का टाइटिल पेज, शुद्धि-पत्र, सम्मति आदि छपाना बाक़ी है।

कभी-कभी तुम बड़ी अत्युक्ति कर डालते हो। म० ······ का 'इण्टरव्यू' क्या है······प्रशंसा का पुलिंदा है। क्या सचमुच अमरीका में मूर्खता का ही साम्राज्य है जो ······ से मियाँ मिट्ठू जिन्हें किसी भाषा पर भी अधिकार नहीं, न अंग्रेज़ी शुद्ध बोल सकते हैं, न 'संसकीरत' का हो अच्छर जानते हैं, न सुवक्ता हैं, न सुलेखक हैं, किसी भी विषय के विशेषज्ञ क्या साधारणज्ञ भी नहीं हैं, फिर भी अमरीका वाले कहते हैं कि

इतना बड़ा विद्वान् उपदेष्टा इससे पहले अमरीका में नहीं आया। श्री स्वामी विवेकानन्द, श्री स्वामी रामतीर्थजी महाराज, लाला हरदयालजी, लाला लाजपतरायजी क्या इतने भी विद्वान् नहीं जितने मिस्टर ······ या मास्टर ····· जिन्होंने दो-चार व्याख्यानों की कापियाँ बना रक्खी हैं, ग्रामोफ़ोन की तरह उन्हें ही सुना देते हैं। अमरीका के अखबारों की कतरन देखकर ही फैसला करना चाहिए था। तुम्हारे सामने तो ···जी खुद मौजूद थे, इन्हें पहले से जानते भी थे। अमरीका के अख़बारों की कतरनों के बारे में एक बार स्वर्गीय प० रामचन्द्र ने अमरीका से लिखा था कि अमरीका के अख़बारों को कालम भरने के लिए कुछ चाहिए। परदेश से कोई गधा भी आता है तो जहाज़ से उतरते ही उसका फ़ोटो ले लिया जाता है। रिपोर्ट छप जाती है, किसी का भी व्याख्यान हो बहुत-सी आवारागर्द औरतों की भीड़ सुनने पहुँच जाती है, तालियाँ पिट जाती हैं। इन बातों को हिन्दुस्तान वाले बड़ा महत्त्व दे डालते हैं, इत्यादि। खैर, मतलब यह है कि ऐसे मौक़ों पर ज़रा अहतियात से काम लिया करो। किसी आत्म-प्रशंसक के दम-झाँसे में न आजाया करो। बहुत-से आदमी इस प्रकार प्रसिद्धि प्राप्त कर पीछे पूरे ठग बन जाते हैं।

आशा है, तुम प्रसन्न हो।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४९

C/O **मध्य भारत हिन्दी सा० समिति**
इन्दौर

प्रियवर हरिशंकरजी, नमस्ते।

कार्ड मिला। इससे पहला कार्ड नहीं मिला, न जाने कहाँ बहककर चला गया। आगरे की गरमी का अनुमान तो मैं यहीं से कर रहा हूँ। सचमुच ये दिन आप पर बड़े संकट में हैं। अकेले पड़े गरमी में भुन रहे हैं। 'आजकल आगरे में आग बरसत है' का पाठ कर रहे हैं। वर्षा के स्वागत में कविता लिखिए। वर्षा की आराधना कीजिए तो शायद दैव का दिल पसीज जाय। यहाँ तो वर्षा शुरू हो गई है। दो-एक बार बूंदा-बाँदी हो गई है। अब मेह में आग लगने ही वाली है, बादल मँडरा रहे हैं, बरसात की बहार है, ठंडी बयार बह रही है, आप भी हवा खा जाइए।

आपके सहवासी 'पुरुफेसरान्' साहबान कब तक वहीं रहेंगे। आप यह नियम क्यों नहीं बना देते कि हर साल छुट्टियों में बारी-बारी से एक-एक प्रोफ़ेसर पड़ोसी

आपके पास रहा करें । सारे के सारे एक साथ भाग जाते हैं । यह तो बेशक आपके साथ इन्तहायी जुल्म है। इसके ख़िलाफ़ सदाए एहत्जाज् बुलन्द कीजिए ।

जब से इंदौर आया हूँ 'आर्यमित्र' नहीं देखा । यहाँ के पुस्तकालय में और 'वीणा' के परिवर्तन में भी नहीं आता । मैंने 'वीणा' वालों से कह दिया है, वीणा पहुँचेगी, 'आर्यमित्र' पिछले चार अंकों समेत मुझे लौटती डाक से भेजिए बल्कि परिवर्तन में आने वाले उर्दू अख़बारों के पिछले महीने के जितने अंक रद्दी में आसानी से मिल जायें वे भी भेज दीजिए, तो अच्छा हो । यहाँ सिवाय 'स्वाधीन भारत' और 'भारत' के कोई अख़बार ही देखने को नहीं मिला, तरस गये । 'आर्यमित्र' 'वीणा' के परिवर्तन में जारी करा दीजिए । 'समिति का वाचनालय' यहाँ काम की चीज है । अख़बार पढ़ने बहुत आ जाते हैं । 'वीणा' के परिवर्तन में आने वाले पत्रों से वाचनालय का काम चलता है ।

हम शायद हफ़्ते के अन्त तक इन्दौर छोड़ के जहाँ जायँगे और जब जायँगे, सूचना देंगे । तुम इस बीच में कहीं टूर पर जाओ तो लिखना । तुम्हारी अनुपस्थिति में आगरे न उतरेंगे ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

४६

c/o **ठाकुर कन्हैयालालजी भाटी**

होल्कर कालेज-होस्टल, इन्दौर सिटी

प्रिय हरिशंकरजी, नमस्ते ।

मैं यहाँ ६ ता० के अधिकार-प्राप्ति-महोत्सव में निमंत्रित होकर आया था । मालवा के ऐतिहासिक तीर्थों के दर्शन, जिसकी चिरकाल से इच्छा थी, मुख्य प्रयोजन है । भोजदेव की धारा नगरी और मांडू का महा क़िला देख चुका हूँ । उज्जैन कालिदास की जन्मभूमि 'मंदसौर', चित्तौर और उदयपुर भी जाऊँगा । इस यात्रा के संस्मरण लिखे गये तो पठनीय होंगे । पर अपने हृदय की निर्बलता से डर है कि लिखने दे या न लिखने दे । शोक-संस्मरण लिखने से अत्यन्त कष्ट होता है । ऐसी घटनाओं की निरन्तर स्मृति ने हृदय को निर्बल बना दिया है । ख़ैर, प्रयत्न करूँगा । सम्भव है, वापसी में आगरे भी आ निकलूँ ।

यहाँ के प्रधान मन्त्री मिस्टर वापना ने मुझे बुलवाया था । बड़े ही उदार और सज्जन हैं । हिन्दी का इस राज्य में सर्वाधिक प्रचार है । यानी ऐसा किसी

भी हिन्दू-राज्य में नहीं। म० भा० हि० सा० समिति की इमारत जो अभी बनकर तैयार हुई है, बड़ी ही शानदार है। मैंने कहीं किसी बड़ी से बड़ी संस्था का भी ऐसा भव्य और विशाल मन्दिर नहीं देखा। देखकर जी खुश हो गया। सम्भवतः इसका उद्घाटन अभी दो-चार दिन में श्री महाराज के हाथों होने वाला है। यह समिति का उत्सव होगा। मैं अभी १०-१५ दिन यहाँ और हूँ। आपका पत्र चलते वक़्त मिल गया था। उत्तर देने का अवकाश न मिला। मौक़ा मिला तो मिलूँगा। पत्रोत्तर दीजिए और ढूँढ़-भालकर हरिदत्तजी को शीघ्रातिशीघ्र यहाँ भिजवाइए।

आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

४

श्री बनारसीदास चतुर्वेदी को लिखे गये पत्र

५०

सेवा-उपवन, नगला काशी
१८-६-१९१९

प्रिय चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम ।

पहले कार्ड में मैंने आपको विस्तृत पत्र लिखने की बात लिखी थी, पर इस बीच में बराबर बीमार रहा, आपको पत्र लिखने के बाद में प्रयाग चला गया । ६-७ दिन वहाँ रहा । यहाँ लौटने पर और भी तबीयत ख़राब हो गई । इसी सिलसिले में ९-६-१९ की रात को प्राणहारिणीविसूचिका ने आक्रमण करके 'न रहे बाँस न बजे बाँसुरी' को चरितार्थ करना चाहा । पर ऐसा न हो सका । 'हमने चाहा था कि मर जायँ सो वह भी न हुआ' इसी झमेले में आपको पत्र न लिख सका । जो लिखना चाहता था, वह बहुत कुछ याद भी न रहा ।

प्रयाग में प० श्रीधर पाठक बड़ी बेसब्री से आपका इन्तज़ार कर रहे हैं । परसों उनका पत्र आया है कि चतुर्वेदीजी बिना मिले न चले जायँ । प्रयाग अवश्य आवें । आप उन्हें लिख दीजिए और कह दीजिए । ऐसा कीजिए, आप प्रयाग पधारिये । मुझे सूचना दीजिए कि किस तारीख को आते हैं । यदि मुझे अचानक घर जाना पड़ा, तो मैं प्रयाग में पाठकजी को इसकी सूचना देता जाऊँगा ।

बिहारी के सम्बन्ध में जयपुर की नई जाँच का पता लगाना चाहिए । बा० जगन्नाथदास रत्नाकर, बा० श्यामसुन्दर के मित्र, ने एक आदमी जयपुर भेजा है । यह बहुत दिन हुए मालूम हुआ था । प० गिरिधर शर्माजी को मैंने लिखा था कि इस खोज का पता चलावें । पर उन्होंने उत्तर नहीं दिया । गुलेरीजी से भी प्रार्थना की थी वह भी चुप हैं । देखिए क्या होता है ? यह किश्ती किसी किनारे पर भी पहुँचेगी या बीच में ही डगमगाती रहेगी ? 'प्रथम दृष्टि में ही प्रेमोद्भव' की भी एक ही रही । केवल 'लीडरता' पर ही नहीं और बातों पर भी मुझे बहुत कुछ वक्तव्य देना है, कभी फ़ुर्सत में कहूँगा । इन स्वाँगधारी लीडरों से परमात्मा ही देश की रक्षा करे । प० सत्यनारायणजी की जीवनी कितनी लिखी गई ?

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५१

c/o 'भरत-मन्दिर' हृषीकेश
६-४-२४

श्री चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम ।

आखिर आप समुद्र-यात्रा कर ही आये । कल 'अभ्युदय' में आपकी यात्रा का हाल पढ़कर अत्यन्त दुःख हुआ, आप तीसरे दर्जे की डैक में असह्य कष्ट झेलते हुए यात्रा करें, और 'श्रीमती मूर्तिमती मुस्लिम संस्कृति', फ़र्स्ट क्लास में जायँ, जिन्होंने प्रवासी भारतवासियों के सम्बन्ध में आपके मुकाबले में कुछ भी नहीं किया। इस अनर्थ और अंधेर-खाते का कुछ ठिकाना है ! इसी पाप का फल हम लोग भोग रहे हैं । जी खोलकर इस अनर्थ के विरुद्ध आन्दोलन करने को जी चाहता है । मुझे आपका यह भोलापन, निरीहता, आत्म-विस्मृति और स्वार्थ-त्याग पसन्द नहीं । आप क्या किसी से कुछ कम हैं ? प्रवास-विज्ञान में तो आपका प्रतिद्वन्द्वी लीडरों में कोई भी नहीं । यह आपके व्यक्तित्व का प्रश्न नहीं है, सिद्धान्त की बात है, क्या धृष्टता और धूर्तता के अतिरिक्त न्याय्य सम्मान-प्राप्ति का अन्य उपाय नहीं है । आप चाहे इसकी परवा न करें, पर आपको जानने वाले इस अन्याय को सहन नहीं करेंगे । मैं इस पर कुछ लिखने वाला हूँ । 'अभ्युदय' में आपका लेख पढ़कर अत्यन्त क्षोभ, दुःख और मनस्ताप है । पिछले साल आपका विचार इधर आने का था, समुद्र-यात्रा का प्रायश्चित्त करने के लिए भी अब आपको गंगा-स्नानार्थ यहाँ आना चाहिए । आजकल जलवायु और ऋतु आदि यहाँ सब स्वास्थ्यवर्द्धक और अनुकूल है । अवश्य आइए । चि० रामनारायण (पटे) को भी साथ लाइए । कुछ दिन यहाँ हरद्वार, कनखल, ज्वालापुर में या हृषीकेश में, जहाँ आप पसन्द करें, आकर रहिए । आप आयेंगे तो मैं भी आपका 'गाइड' और 'स्वयंसेवक' बनकर साथ रहूँगा। मैं १५ दिन से इधर ही हूँ ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५२

नायक नगला
सोमवार, दीपमालिका, १९८१

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम ।

आपका १७-१० का पत्र और 'लीडर' की कटिंग का लिफ़ाफ़ा परसों यहाँ पहुँचे, धन्यवाद । आपके पहले पत्रों के उत्तर में एक कार्ड भेजा था, शायद पहुंचा हो । आप सचमुच चतुर्वेदी हैं, खूब चौमुखा-चौतरफ़ा आन्दोलन करना जानते

हैं । अच्छा किया जो एक नोट 'लीडर' में लिखकर 'हुक्के आन्दोलन' अदा कर दिया । साहित्य-सम्मेलन पोलिटिकल लीडरों के हाथ का खिलौना बन रहा है । इस बार बड़ी कोशिशों से प० गोस्वामीजी सभापति बन पाये हैं । देखिये वह भी क्या फ़रमाते हैं । खद्दर और चर्खे की महिमा का राग अलापते हैं या साहित्य का तराना छेड़ते हैं । माफ़ कीजिए मुझे इस वक़्त एक पुराना लतीफ़ा याद आ गया । भागलपुर के बाद लखनऊ का सम्मेलन होने को था । सभापति-निर्वाचन के लिए घोर आन्दोलन छिड़ा हुआ था, बड़ी ले-दे हो रही थी । उस वक़्त मुझे इलहाम हुआ था, बात पुरानी है, पर लुत्फ़ से खाली नहीं, सुनिए—

"फिर बहार आई चमन में बुलबुलों की धूम है,
लखनऊ वालों का देखें कैसा कुछ मकसूम है ।
छेड़ती दिलकश तराना बुलबुले नालां है वाँ,
याकि भागलपूर की मानिन्द बोले बूम है ।"

सचमुच हिन्दी-साहित्य में कुछ भी नहीं हो रहा । सब अच्छे-अच्छे आदमी पालिटिक्स के पीछे पड़े हैं । बचा-खुचा वक़्त मरे-मरे 'कृष्णार्पणम्' साहित्य को देते हैं । यदि देते हैं—मैं एक आप ही की मिसाल लेता हूँ । मेरा विश्वास है कि आप बहुत ही अच्छी चिर-स्मरणीय साहित्य-सेवा कर सकते हैं, पर आपके पीछे प्रवास का रोग लिपटा है । निःसन्देह आपका यह काम भी बहुत महत्त्वपूर्ण है । इस क्षेत्र में भी आप जो कुछ कर रहे हैं, वह आप ही का काम है । पर मैं चाहता हूँ आप सब छोड़कर साहित्य-सेवा में लगते । गंगा, यमुना का तट छोड़कर आप भी कहाँ काले कोसों दूर साबरमती के किनारे जाकर बैठे हैं । वहाँ बैठकर साहित्य-सेवियों की जीवनियाँ लिखना चाहते हैं, अचम्भे की बात है । हर वक़्त चर्खे की चरख चूँ, बापूजी की दिन-चर्या का विवरण, सुनते-सुनते दिन बीतता होगा । न कोई हिन्दी जानने वाला आपसे मिलता होगा 'केम शूँ', के सिवा शुद्ध हिन्दी का एक शब्द भी सुनने को न मिलता होगा । मुझे डर है कि गुजराती हिन्दी का रंग आपकी ज़ुबान और क़लम पर न चढ़ जाय । भई, साहित्य-सेवा करो, और इधर आसन जमाओ । बोलपुर का 'शान्ति-निकेतन' और साबरमती का 'सत्याग्रह आश्रम' हिन्दी साहित्य-सेवा के लिए उपयुक्त स्थान नहीं है । सम्पादकाचार्य प० रुद्रदत्तजी की जीवनी के लिए जैसा कि मैंने पहले कार्ड में लिखा है 'भारतमित्र' आदि पत्रों की पुरानी फाइलें टटोलनी पड़ेंगी । 'आर्यमत मार्तण्ड' नाटक आजकल अप्राप्य है, कहीं किसी के पास आगरे में शायद मिल सके । बाकी स्वर्ग में 'सब्जेक्ट कमीटी', 'स्वर्ग में महासभा', 'कंठी-जनेऊ का ब्याह', ये ट्रेक्ट हैं, आपने भी देखे होंगे, न देखे हों तो मेरे पास हैं, भेज दूँगा । एक काग़ज़ पर उनके हाथ की एक हिन्दी कविता है । दो पर्चे 'भारत-रत्न' तथा 'सरपंच'

साप्ताहिक पत्र के हैं। एकाध कार्ड होगा। यहाँ सामग्री मेरे पास है। वह धामपुर, जो ज़िले बिजनौर में एक क़स्बा है, के रहने वाले थे। उनकी विधवा पत्नी अभी जिन्दा हैं। छोटे भाई दामोदरदास संस्कृत के और हिन्दी के अच्छे पण्डित थे। उनके सामने ही मर चुके थे। सन्तान दोनों भाइयों के नहीं, उनका कुनबे का एक भतीजा छोटेलाल कहीं किसी प्रेस में कम्पोज़ीटर है। कुछ बातें उससे मालूम हो सकेंगी। प० रुद्रदत्तजी के पिता प० काशीनाथ संस्कृत के बड़े पण्डित थे। तन्त्र-शास्त्र में उनका अच्छा परिचय था। पण्डित रुद्रदत्तजी सुलेखक तो थे ही, सुवक्ता भी थे। बहुत अच्छा बोलते थे। प्रत्युत्पन्न-मति और प्रतिभाशाली थे। आर्यसमाज की ओर से बंगाल-बिहार में उन्होंने बहुत दिनों तक प्रचार का काम किया है। साहित्याचार्य प० अम्बिकादत्तजी व्यास उन दिनों उनके प्रतिद्वन्द्वी थे। प्रायः शास्त्रार्थों में व्यासजी को उन्होंने खूब छकाया है। इसी से उनकी शास्त्रार्थ-पटुता का परिचय मिलता है। लेखक तो वह अपने ढंग के एक ही थे। मुझे उनका ढंग बहुत ही पसन्द था। उनके सम्पादित 'आर्यावर्त' और 'भारतमित्र' के बहुत से अंक मेरे पास थे, जो खेद है कि नष्ट हो हो गये। अफ़सोस है उनकी साहित्य-सेवा की किसी ने क़द्र न की। ऐसा बहुगुणी आदमी हिन्दी संसार में इस समय तो है नहीं। हिन्दी के रद्दी-रद्दी लेखकों के चित्र और चरित्र (······ ······) आदि वृथा पुष्ट पोथों में प्रकाशित हो गये, पर पण्डित रुद्रदत्त को किसी ने न पूछा। संसार अन्धा है और क्या कहा जाय ! आशा है, आप सानन्द हैं। हमारा गाँव तो बाढ़ में बचा रहा, पर इधर गंगा-किनारे के अनेक गाँव, और असंख्य पशु बह गये।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५३

नायक नगला
भाद्रपद सुदि ८, १९८१ वि०

श्री चतुर्वेदीजी महाराज, नमस्ते।

कई दिन हुए आपका रजिस्टर्ड कृपापत्र मिला था। जिस दिन पत्र आया, उस दिन मैं बीमार था। बुखार चढ़ रहा था। आपका करुणाजनक पत्र पढ़कर मुझे बेअख़्त्यार रोना आ गया। आँसुओं के प्रवाह में बुखार बह गया। जिसकी सहृदयता की सराहना 'शेष' और 'शारद' भी नहीं कर सकते। आश्चर्य है गांधीजी के आश्रम में रहकर और प्रवास के रूखे-सूखे विषय में पड़कर भी आपकी यह सहृदयता कैसे बची रह गई !

यह जानकर बड़ा हर्ष हुआ कि आपने कविरत्नजी की जीवनी लिख डाली। आपकी मधुर भाषा में भला क्या इसलाह दूँगा ? "ग़ुल को क्या बागवाँ सँवारेंगे !" फिर भी मैं जीवनी की कापी इस लोभ से देख लूँगा कि छपने से पहले मुझे देखने का सौभाग्य प्राप्त हो जायगा। जैसी बन पड़ेगी भूमिका भी लिखने की चेष्टा करूँगा, अपना कर्तव्य समझकर, वरना अब तो मैं लिखना भूलता जा रहा हूँ। वर्षों से कुछ भी नहीं लिखा, कुछ लिखा ही नहीं जाता। खैर, जहाँ कहिए जब कहिए हाज़िर हूँ। प० हरिशंकरजी के पत्र से और 'आर्यमित्र' से मालूम हुआ कि आप घर आ गये हैं। मेरा इरादा कई महीने से हरदुआगंज (कविजी) के पास जाने का हो रहा है। वह बार-बार बुला रहे हैं। यदि वहाँ आप भी चलें तो कैसा हो ? यदि यहाँ नायक नगले में आप पधारें तो यह स्थान भी आपके पदार्पण से पवित्र बन जाय। पर इस मौसम में यहाँ आने में आपको कष्ट होगा। आप फ़ीरोज़ाबाद कब तक ठहरेंगे ? महीना-बीस दिन वहीं ठहरने का इरादा हो तो हरदुआगंज होता हुआ वहीं पहुँचूं। इस बारे में जैस आपका विचार हो, जिसमें सुगमता समझें, वैसे ही 'बिला तकल्लुफ़' आज्ञा कीजिए। आपका पत्र आने पर वैसा ही प्रोग्राम बना डालूँगा। कविरत्न (सत्य-नारायणजी) के स्मारक के सम्बन्ध में आपका प्रस्ताव बहुत ही समुचित है, सभी पत्र इसका अनुमोदन कर रहे हैं। मैं भी हृदय से उसका अनुमोदन पत्रों में करूँगा। साहित्य-सम्मेलन के आगामी अधिवेशन पर भी इस प्रस्ताव को खूब जोश से उठाया जाय। कविरत्नजी की जीवनी से निपटकर आप कुछ काम हिन्दू-संगठन के सम्बन्ध में भी करें, तो अच्छा हो। "इस क़ौम के भी मुर्दे मोहताज हैं क़फ़न के।" हिन्दू-मुस्लिम मेल की मोह-मदिरा ने हिन्दुओं का सत्यानाश कर दिया। इस विषय पर आप से बहुत-सी बातें करनी हैं। गांधीजी को न जाने क्या हो गया है, जो बराबर हिन्दुओं को ही दबाते जा रहे हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५४

नायक नगला, चाँदपुर (बिजनौर)
कार्तिक कृ० ६, १९८१

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

८-१०-२४ का कृपा-पत्र और कार्ड कल मिले। अपने पत्रों का उत्तर न मिलने से मैं चिन्तित था। इधर जल-प्रलय ने ग़ज़ब ढा दिया। इधर-उधर जाने के सब मार्ग बन्द हैं, वरना मैं अब से बीस-पच्चीस दिन पहले हरदुआगंज पहुँच गया

होता। इस आशा से कि वहीं तार देकर आपको बुला लूं। खैर, अब तो आप चले ही गये। सत्यनारायणजी की जीवनी छपने से पहले मैं ज़रूर सुनना चाहता हूँ। जीवनियाँ लिखने का आपका संकल्प बहुत ही उत्तम है, इस सूझ के लिए धन्यवाद है। आपकी सूची में महाकवि शंकर का नाम न देखकर मुझे खेद और आश्चर्य था। आपको लिखने वाला था। शंकरजी अद्भुत पुरुष हैं, आप मिलेंगे तो अत्यन्त प्रसन्न होंगे। वह अब 'कूलद्रुम' हो रहे हैं। जल्दी मिल लीजिए। बेचारों के अब हाल ही में बड़े पुत्र का वियोग हो गया। व्याकुल हैं। लाइन खुलने पर हरदुआगंज जाने वाला हूँ। आप एक पत्र प० हरिशंकरजी को उनकी जीवनी का मसाला संग्रह करने को और लिख दीजिए। मैं तो प्रयत्न करूंगा ही। सम्पादकाचार्य रुद्रदत्तजी की जीवनी के लिए 'भारतमित्र', 'आर्यावर्त', 'आर्यमित्र', 'भारत-रत्न' आदि पत्रों की फाइलें देखनी होंगी। 'आर्यमत मार्तण्ड नाटक', 'स्वर्ग में सब्जेक्ट कमेटी', 'स्वर्ग में महासभा', 'कण्ठी-जनेऊ का ब्याह' ये तीन हास्य रस के ट्रैक्ट भी उनकी रचना हैं। सम्पादकाचार्य अद्वितीय लेखक थे। पुराण और तन्त्रशास्त्र के बड़े मार्मिक विद्वान् थे। उनकी जीवनी लिखने में आपको यथासाध्य सहायता दूँगा। शेष दूसरे पत्र में लिखूंगा।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

५५

नायक नगला, चाँदपुर

का० सु० १४, १९८२

प्रिय पण्डितजी, प्रणाम।

कहिये कुशल तो है? आपका स्वास्थ्य कैसा है? मैं तो अभी तक अस्वस्थ हूँ। घर में कई लोग बीमार हैं। चि० काशीनाथ दो महीने से रोगियों की परिचर्या में सन्नद्ध था, मेरे यहाँ आने पर मुझे परिचर्या का चार्ज देकर स्वयं बीमार पड़ गया। अब मैं बीमार भी हूँ और तीमारदार भी। भाष्यभाग पहुँचा होगा। पहुँच न पहुँचने से चिन्ता है। आशा है, बोलपुर शास्त्रीजी को आपने अपने सिफ़ारशी पत्र के साथ पुस्तकें भेज दी होंगी। शास्त्रीजी से पुस्तकों पर संस्कृत में सम्मति मँगा दीजिये। सम्मति यथावकाश पूरी पुस्तक पढ़कर लिखें, ऐसी प्रार्थना उनसे कीजिये। किसी बंगला पत्रिका में वह समालोचना लिखें तो और भी अच्छा। अफ़सोस है कि वृन्दावन आना न हो सकेगा। कृपा-दृष्टि रखिये। कुशल समाचार लिखते रहिये। पूज्य पिताजी, पटेजी और अमृतलालजी से प्रणाम-नमस्कार कहिये।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

५६

काव्यकुटीर, नायक नगला, (बिजनौर)
फाल्गुन वदि ८, १९८२

चौबेजी, पालागन।

कहिये क्या समाचार हैं? किस धुन में मस्त हैं? क्या बिल्कुल प्रवासियों और परदेशियों ही के हो रहे ? मैं भी सापेक्ष परदेशी ही हूँ। प्रायः प्रवास में रहता हूँ। इस कारण आपकी कृपा का किसी अंश में भी अधिकारी पात्र हूँ। इस बीच में मैंने दो-एक पत्र भी भेजे, पर उत्तर न मिला, न आपका कुशल समाचार मालूम हुआ। प्रयाग भी शायद आप अभी तक नहीं आये। क्या प्रोग्राम बदल गया? आजकल क्या कर रहे हैं? अगले प्रोग्राम क्या हैं? और तो सब कुशल मंगल है। शंकरजी के यहाँ कब जाने का विचार है? मैं अभी दस-बारह दिन हुए दो दिन के लिए हरदुआगंज हो आया हूँ, आप भी हो आइये या फिर साथ चलने का प्रोग्राम बनाइए। शान्तिनिकेतन के बड़े दादा चल बसे! आपसे ही उनकी गुण-गरिमा सुनी थी। भले लोग थे। काल का चक्र बड़ी तेज़ी से चल रहा है। बड़े-छोटे सबको पीस रहा है! जीवन क्षण-भंगुर है। दुनिया के झगड़ों का अन्त नहीं। तूफ़ानी अनन्त सागर में तिनके की तरह मनुष्य बह रहा है। किनारे का पता नहीं। "बहा जाता हूँ बेमक़सूद बहरे ज़िन्दगानी में।" पूज्य पिताजी, प० देवीप्रसादजी, अमृतलालजी आदि सहृदय महानुभावों से प्रणाम कहिये।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५७

नायक नगला (बिजनौर)
६-२-२५

श्री चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

तीन महीने के बाद में कल ही मकान पर लौटा हूँ। जैसा कि आपने पत्रों में पढ़ा होगा मैं कलकत्ते गया था। आपके पत्र मेरे पीछे यहाँ आये इसलिए तामील न हो सकी। कलकत्ते से लौटता हुआ प्रयाग ठहरा था। वहाँ सम्मेलन में 'सेफ़' से निकलवाकर सत्यनारायणजी की जीवनी देखी। उसमें तो अभी 'कच्चा मसाला' संगृहीत है, प्रेस में देने लायक नहीं। उसे ठीक कब कीजिएगा? जल्दी दुरुस्त करके प्रेस में दिलवाइए। यह काम कब कीजिएगा? आप उसे मुकम्मल कर दें तो मैं उस पर भूमिका लिखूँ या फिर छपने पर। जीवनी 'सेफ़' ही में बन्द पड़ी न रह

जाय। शीघ्र प्रकाशित होनी चाहिए। उसका सम्पादन आप स्वयं करें। मैं भी सहायक हो सकता हूँ। सम्पादन का काम सम्मेलन पर न छोड़िए।

स्व० प० रुद्रदत्तजी की जीवनी के सम्बन्ध में आप यह सुनकर प्रसन्न होंगे कि उनका चित्र मिल गया है और 'भारत मित्र' तथा 'हिन्दी बंगवासी' की पुरानी फाइलों से लेख संग्रह करने का काम श्रीयुत प० नन्दकुमार देव शर्मा जी के सुपुर्द कर आया हूँ। उनकी दो-एक पुस्तकों का और पता चला है, तलाश में हूँ। सम्मेलन में रखने के लिए प० रुद्रदत्तजी का एक तैलचित्र भी तैयार कराया जायगा और जीवनी के लिए चित्र का ब्लाक बन जायगा। प० नन्दकुमार देवजी से इस काम में अच्छी सहायता मिलेगी। साहित्य-सेवियों की जीवनी के सम्बन्ध में उनसे अच्छी सहायता मिल सकती है। इस काम के वह छोटे विश्वकोष हैं। आजकल आप और क्या लिख रहे हैं? आपकी निर्दिष्ट जीवनियों की सूची में से प० बालकृष्णजी भट्ट की जीवनी तो टंडनजी लिखना चाहते हैं। कहते थे सत्यनारायणजी की जीवनी को शीघ्र प्रकाशित कराइए। उसे इल्तवा में न डालिए। जीवन का भरोसा नहीं, कौन जाने कल क्या हो। हमारे जीवन में प्रकाशित हो जाय तो, अच्छा है। प्रवासी भारतवासियों का झगड़ा तो कभी खत्म होने वाला नहीं। उसे छोड़कर साहित्य-सेवियों को जीवन-दान दे डालिए और कहीं इधर पास आकर डेरा डालिए। साबरमती का मोह छोड़िए। यही आपसे बार-बार प्रार्थना है। मेरी नहीं सब लोगों की यही राय है। आशा है, आप सानन्द हैं। कुशल समाचार लिखिये।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५८

c/o **आर्यमित्र, आगरा**
ता० २९-७-१९२५

श्री चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

उस दिन आप बिना मिले चले गये। बहुत-सी बातें रह गईं। अगले दिन प० नन्दकुमारदेव शर्मा मथुरा से यहाँ आये थे। आज उनका पत्र आया है, वह भी हरदुआगंज कविजी के दर्शनार्थ चलना चाहते हैं और आपसे मिलना भी। वह अभी पाँच-सात दिन शायद और रहें, फिर कलकत्ते चले जायँगे। आपका और उनका सामना हो जाता तो सम्पादकाचार्यजी की जीवनी की कई बातें ठीक हो जातीं। फिर न मालूम कब उनसे मिलना हो। परसों शायद मैं मथुरा जाऊँ। आप तो वहाँ न चलेंगे? शंकरजी के पास चलने का विचार कब है? प० नन्दकुमारदेव शर्माजी

चाहते हैं कि सब साथ चलें तो अच्छा हो। उन्हें क्या लिख दूँ। कल यहाँ तुलसीदासजी की जयन्ती (वर्षी) मनाई गई। श्री लमगोड़ाजी के व्याख्यान हुए। आज भी उनका व्याख्यान होगा। आप बहुत याद आये। प्रिय पटेजी को नमस्कार। प० हरिशंकरजी प्रणाम कहते हैं। आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

५८

काव्यकुटीर, नायक नगला, चांदपुर
वैशाख कृष्णा २, १९८३

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

२५-४ का कार्ड, कृपा-पत्र और 'चाँद' का अंक, सत्यनारायणजी का फ़ोटो, सब कुछ पहुँचा। अनेक धन्यवाद। सत्यनारायणजी का फ़ोटो देखकर जी भर आया। मनुष्य-जीवन की क्षणभंगुरता, संसार की असारता का चित्र आँखों के सामने फिर गया। आज 'हिन्दू संसार' में सप्रेजी के स्वर्गवास का समाचार पढ़कर बड़ी वेदना हुई। मरने से पहले उनकी बीमारी का समाचार भी किसी हिन्दी पत्र में न छपा। नेहरूजी को जुकाम भी हो जाता है तो अखबारों के कालम रंगे जाते हैं, इस अकृतज्ञ, अविशेषज्ञ देश को स्वराज्य मिलेगा!

लीडरी पेशा राजनीतिक जन्तुओं के सम्बन्ध में जिस परिणाम पर आप पहुँचे हैं, मैं उससे भी कुछ आगे गया हूँ। लीडर-लीला लिखने का बहुत दिनों से विचार कर रहा हूँ। लिखी गई तो पढ़ने लायक़ चीज़ होगी।

आपके विचार एक 'भारतीय हृदय' के सर्वथा अनुरूप ही हैं। अकबर ने कहा है—

"शिकम होता तो मैं इस अहद में फूला-फला होता,
सरापा दिल बना हूँ इस सबब से कुश्तए ग़म हूँ।"

दिल बनने की सज़ा पाइए, प्रोग्राम बनाते रहिए। और उनके पूरा न होने पर अफ़सोस करते रहिए। फिर भी आपका साहस स्पृहणीय है। इस प्रतिकूल स्थिति में भी आपने बहुत कुछ कर डाला। साहित्य-सेवा भी कुछ कम नहीं की, पर ढोल नहीं पीटा। इतनी कमी रही। यह विज्ञापन-युग है, विज्ञान-युग नहीं। आगे चलकर भी यदि ऐसे ही, वर्तमान समय के जैसे ही, हृदयहीन मनुष्य उत्पन्न होते गये, कृतघ्नता और अविवेक ऐसे ही ज़ोरों पर बना रहा, तब तो मजबूरी है, वर्ना आपका काम बड़ी क़द्र की निगाहों से देखा जायगा। सत्यनारायणजी की कीर्तिरक्षा और प्रवासी

भारतवासियों की रामकहानी थोड़े महत्त्व की चीज़ नहीं है। मुझे तो सचमुच आश्चर्य होता है कि ऐसी परिस्थिति में ऐसा ठोस और टिकाऊ काम आपने कैसे कर डाला! मुझे तो अब अपने सम्बन्ध में यही सूझता है कि कुछ न हो सकेगा। बीमारी और तीमारदारी, यही दो काम हैं।

"किताबे मुहब्बत में ऐ हज़रते दिल,
बताओ कि तुम लेते कितना सबक़ हो।
कि जब आनकर तुमको देखा तो वेही,
लिये दस्ते-अफ़सोस के दो वर्क़ थे।"

इस बार जाड़ों में सतसई पूरी करने का पक्का विचार था। पर बीमारी ने कुछ न करने दिया। अब कनखल जाकर बैठने का संकल्प था। डेढ़ महीने बीमारी और तीमारदारी में निकल गया। अभी तक छुट्टी नहीं मिली। कभी-कभी अपनी इस दशा पर, बेबसी पर, बड़ा दुःख होता है। पर मीर का यह मिसरा तसल्ली देता है—

"रख तसल्ली कि यूं मुकद्दर था"

चंगा हो जाऊँ तो कनखल पहुँचूं, इस चिन्ता में हूँ। पहुँच गया तो सूचना दूंगा। आप भी आइए। जीवन में दो-चार बार तो और मिल-भेंट लें। हाँ, सत्यनारायणजी की जीवनी का क्या हो रहा है? कोई फ़ार्म छपा या नहीं? प्रूफ़ कौन देखता है? उसकी कुछ ख़ैर-ख़बर है? आधी-तिहाई छप जाती तो उसकी भूमिका लिखता। जब तक मुझे यह निश्चय न होगा कि पुस्तक वास्तव में छप रही है, भूमिका न लिखी जा सकेगी। स्वभाव ही कुछ ऐसा है, पेशगी नहीं लिखा जाता—

"कर गुज़रे ऐन वक़्त पर जो कुछ भी हो सका,
पहले से कोई बात दिल में ठानते नहीं।"

बूढ़ों की इज़्ज़त के बारे में जो आपने श्री गोखले की उक्ति उद्धृत की है उस पर एक फ़ारसी का सुन्दर शेर याद आया—

"शहरे कि दरो इज़्ज़ते पीरां न शवद,
आं शहर मुहालस्त कि वीरां न शवद।"

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६०

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)
आश्विन, अमावस्या १९८३

श्री चतुर्वेदीजी महाराज, पालागन।

पहला कार्ड यथासमय मिल गया था, और आज लिफ़ाफ़ा भी पहुँच गया।

आप सचमुच हिन्दी लेखकों के 'मसीहा' हैं, मुर्दों को जिन्दा कर रहे हैं, पर यह तो सारी जाति ही मुर्दा है, किसे-किसे जिन्दा कीजियेगा यहाँ तो जीते भी मुर्दा हैं। "क्या देखता है हाथ मेरा छोड़ दे तबीब, याँ जान ही बदन में नहीं नब्ज़ क्या चले ?" बिहारी के शब्दों में हिन्दी समाज अपने उद्धारकों से कह रहा है—"हठ न करौ अति कठिन है, मो तारिबो गोपाल" आप भी अपनी आदत से लाचार हैं, कुछ न कुछ किये ही जाते हैं। पर समस्या टेढ़ी है। बकौल बिहारी—"मोहिं तुम्हें बाढ़ी बहस को जीतै जदुराज। अपने-अपने बिरद की दुहूँ निवाहत लाज।"

क्या सचमुच शताब्दी मनाई जायगी ? राजा साहब का भाग्य इतने दिनों के बाद जागकर रहेगा। मैं तो कहता हूँ भाग्यशाली है वह हिन्दी लेखक जो आपके सामने मर जायँगे, मरने वालों को जल्दी करनी चाहिए। एक 'मसीहा' है और मरने वाले बहुत हैं। अकेला मसीहा हार जायगा। कह नहीं सकता जन्म शताब्दी पर मैं आ सकूँगा कि नहीं। कई ऐसे ही झंझट हैं। कोशिश, चेष्टा और प्रयत्न तो करूँगा, आगे जो हो। सम्मेलन वाले महारथियों में से भी कोई आवेगा कि नहीं ? भरतपुर में क्या हो रहा है यानी सम्मेलन के सम्बन्ध में ? माधुरी चाहती है कि द्विवेदीजी के 'चरण-रज' से सभापति का आसन पवित्र करा लिया जाय। क्या द्विवेदीजी चरण-रज देने की उदारता दिखा सकेंगे ? आजकल घुटनों तक जुराबें और फुल बूट पहनने वालों की चरण-रज होती भी तो नहीं। द्विवेदीजी को नंगे पाँव चलाना पड़ेगा, तब चरण-रज प्राप्त हो सकेगी। वृद्धावस्था में इतना कष्ट उन्हें क्यों दिया जाय ? फ़ोटो से काम न चल जायगा ?

जीवनी के फार्म और होंगे ? जीवनी जल्दी निकलती मालूम नहीं होती। भूमिका तो मैं जब कहिये लिख दूँगा। आपकी कृपा से एक और काम मेरे सुपुर्द हो गया है—पूर्णजी के भतीजे ने उनका एक नाटक भेज दिया है कि इसकी एक विस्तृत भूमिका और समालोचना लिख दो। निशांदिही में आपका नाम था। आशा है, आप सानन्द हैं। बातें तो बहुत हैं कभी मिलने पर ही होंगी।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६१

ज्वालापुर-महाविद्यालय,
चैत्र कृ० ११, ८३

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका कृपा-पत्र कल मिला। पुस्तक भी पहुँची। इस कृपा के लिए धन्यवाद। आपकी परिस्थिति को मैं कल्पना की दृष्टि से देख रहा हूँ। कोई

बात मुझसे छिपी नहीं है। समय थोड़ा है, काम बहुत है। साधनों का अभाव है, फिर उस पर आपका स्वभाव—

"गुलोगुलचीं का गिला बुलबुले-खुश लहजा न कर,
तू गिरफ़्तार हुई अपनी सदा के बाइस।"

सम्मेलन का सभापतित्व ओझाजी ने स्वीकार कर लिया। यह बात कल ही समाचारपत्रों से मालूम हुई। ओझाजी के सभापतित्व में सम्मेलन सफलता से समाप्त होगा। ओझाजी का सभापतित्व सम्मेलन के इतिहास में महत्त्वपूर्ण घटना होगी। इसके लिए सम्मेलन विशेष रूप से बधाई का पात्र है। इस सम्मेलन में ब्रजभाषा के प्राचीन साहित्य के सम्बन्ध में कुछ होना चाहिए। कम से कम सूरसागर के उद्धार का प्रयत्न तो अवश्य होना चाहिए। इसके लिए यही उपयुक्त अवसर है। 'मनोरमा' के सम्मेलनांक में इस विषय पर मेरा लेख आपने पढ़ा ही होगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६१

चाँदपुर, (बिजनौर)
१५-८-२७

'ज़रा कान धरकर इधर ध्यान दीजिए।'

प्रणाम, चतुर्वेदीजी महाराज।

मैंने प० हरिशंकरजी को कई पत्र लिखे। बार-बार प्रार्थना की कि सेठजी के प्रस्तावानुसार एक अच्छा-सा ड्राफ़्ट आप तैयार करके शीघ्र भेज दें, पर आपके कान पर जूं न रेंगी। प० हरिशंकरजी का यह अपराध क्षन्तव्य हो सकता है, क्योंकि ऐसे मामलों में वे पूरे 'स्लोथ' अर्थात् ढीले-पोले हैं। पर आप से तो मुझे ऐसी स्वप्न में भी आशा न थी। आप जैसा कर्मवीर-प्रोपैगैण्डिस्ट और सहृदय सज्जन मेरी प्रार्थना को सुनी-अनसुनी कर जाय! 'किमाश्चर्यमतः परम्'। मैं २३-७ को ज्वालापुर से चलकर (असौड़ा) हापुड़ आया था। वहाँ से ब्रज-यात्रा को चला गया। अभी परसों वहाँ से लौटा हूँ। इस बीच में बराबर सफ़र में रहा। असौड़े से और मथुरा से प० हरिशंकरजी को मैंने दो पत्र लिखे, उत्तर माँगा पर उनका मौन भंग न हुआ। मेरी इच्छा थी कि मैं आपसे आगरे आकर एक दिन मिलूं, आपको और हरिशंकरजी को भी मैंने मथुरा बुलाने की धृष्टता की थी। बहुत-सी ज़रूरी बातें करनी थीं। पर आना तो एक ओर मेरे पत्रों का उत्तर भी न मिला। इस यात्रा में स्वतन्त्र न था, एक मोटरारूढ़ पार्टी के साथ नत्थी था, वर्ना आप लोगों की दिल दुखाने वाली

इस उपेक्षा की उपेक्षा करके भी आगरे पहुँचता और आपका नाख्वाँन्दा महमान बनता। आप लोगों के इस दुर्व्यवहार से मुझे बड़ा ही आश्चर्य और खेद हुआ है। कार्य की गुरुता और पुरानी ममता मुझे पत्र लिखने को विवश कर रही है, नहीं तो कभी आपको पत्र न लिखता। मैं जानता हूँ मेरे इस स्पष्ट निवेदन से आपको कष्ट पहुँचेगा। पर मैं मजबूर हूँ—

"रखियो ग़ालिब (चौबे !) मुझे इस तल्खनवाई में मुआफ़,
आज कुछ दर्द मेरे दिल में सिवा होता है।"

यदि आप इस प्रस्ताव को अव्यवहार्य या व्यर्थ समझते हों तो ड्राफ़्ट के विचार पर ड्रापसीन डालकर 'छिर्ली ईंट को गालियाँ' सुना दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६३

नायक नगला, चाँदपुर (बिजनौर)
२५-८-२७

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

मेरे पत्र के उत्तर में आपका १८-८ का प्राइवेट पत्र पहुँचा। पढ़कर अत्यन्त खेद हुआ, मुझे हर्ष हुआ था कि आगरे में रहने का आपका संकल्प सफल हुआ। पर वही होता दीखता है जो 'ज़ौक़' ने कहा है—

"अहले-जौहर को वतन में रहने देता गर फ़लक,
लाल क्यों इस रंग से आता बदख़्शाँ छोड़कर।"

मथुरा की इस यात्रा में प० नवनीतजी चतुर्वेदी से भेंट हुई। वे बड़े अच्छे कवि हैं। वृद्ध पुरुष हैं। उनसे अनेक माथुर कवियों का समाचार मिला। अनेक अप्रकाशित ग्रन्थों का पता चला। आप उस समय साथ होते तो कई निबन्धों का मसाला मिल जाता। मुझे अवकाश कम था, फिर भी कुछ नोट्स लाया हूँ। आप मथुरा जायें तो मारूगली में नवनीतजी से अवश्य मिलिए और कई गुमनाम कवियों को प्रकाश में लाइए। नवनीतजी के दो शिष्य भी बड़े योग्य हैं, लाला कृष्णलालजी शतरंज मास्टर (शतरंज के अद्वितीय खिलाड़ी हैं) अच्छे कवि हैं। पुरानी कविता उन्हें बहुत याद हैं। दूसरे पुरुषोत्तमजी हैं। उनके पास ग्वाल कवि के कई अप्रकाशित ग्रन्थ हैं। नवनीतजी से कई चतुर्वेदी कवियों का समाचार आपको मालूम होगा। कभी उनसे मिलिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६४

नायक नगला (बिजनौर)
२६-८-२७

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

२०-८ की दूसरी चिट्ठी कल शाम मिली। कल ही मैंने आपको पहले पत्रों का उत्तर भेजा है। आपकी यह दूसरी पत्री पढ़कर और भी दूना दुःख हुआ। वह मुझे बहुत ही व्यथित कर रही है। पर क्या करूँ "दयालारसमर्थस्य दुःखायैव दयालुता" मन मसोसकर रह जाता हूँ। संसार की अकृतज्ञता और अविशेषज्ञता तथा दुर्दैव के दौरात्म्य को कोसकर ही रह जाना पड़ता है। "लाचारी परबत से भारी" किसी ने सच कहा है। 'संदा' को यह जादू-भरा शेर शायद आप ही के लिए इलहाम हुआ था—

"निगह कीमत कहीं दिल की तू इस पर भी गरां समझे,
जो नक़दे-जां से बिकता हो कहीं तो मुझको दिलवाला।"

मुझे यह शेर इतना पसन्द आ रहा है, इतना चमत्कृत और हृदयहारी प्रतीत हो रहा है, कि माला लेकर जप करने को जी चाहता है, "जो नकदे-जां से बिकता हो कहीं तो मुझको दिलवाला!" आप भी इसे याद कर लीजिए। आपके हस्बहाल है। इसीलिए मुझे पसन्द है।

आप जब हरदुआगंज चल सकें, मुझे भी बुला लें। दस-बीस दिन वहाँ रहकर कविजी (शंकरजी) की जीवनी और कविता-संग्रह का मसाला जमा कर लावें और काम शुरू कर दिया जाय। यह काम जैसे हो जल्दी ही हो जाना चाहिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६५

गुरुकुल, कांगड़ी
२१-१-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका १६-१ का कृपा-पत्र मिला। 'त्याग-भूमि' के लिए बिड़लाजी इतना त्याग कर रहे हैं, यह उनकी 'सात्विक' रुचि का परिचायक है। वैसे तो 'त्याग-भूमि' एकांगी पत्र है, उसमें कुछ विशेषता नहीं। 'विशाल भारत' उससे कहीं अच्छा निकल रहा है, फिर भी घाटा है। सहायक सम्पादक के बिना काम कैसे चलेगा? यह तो सरासर अन्याय है। रामानन्द बाबू तो स्वयं अनुभवी सम्पादक हैं। वह इतनी-सी बात क्यों नहीं समझते? अकेला आदमी, फिर चाहे वह कितना ही

परिश्रमी हो, पत्र का सम्पादन कैसे कर सकता है ? आपने तो अपने सिर पर और बहुत-से फालतू काम भी ले रखे हैं। कलकत्ते का जलवायु और इतना परिश्रम, स्वास्थ्य का संहार हो जायगा। यह स्थिति वांछनीय नहीं। आपके घासलेट-आन्दोलन का परिणाम तो उलटा हो रहा है। बड़े-बड़े महात्मा घासलेटी का समर्थन कर रहे हैं! जैसा कि उग्रजी ने 'चैलेन्ज' किया है, क्या सचमुच महात्माजी के वैसे ही विचार हैं ? फिर आप क्यों व्यर्थ में वैर विसाह रहे हैं। यह तो घासलेटी साहित्य का अच्छा-खासा नोटिस हो रहा है ! लोकरुचि ही जब वैसी हो रही है, तो इसका उपाय क्या ? आप किस-किस से लड़ेंगे ?

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६६

गुरुकुल, कांगड़ी (बिजनौर)
२८-१-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्ते।

मेरे पूर्व पत्रों का आपने उत्तर नहीं दिया। एक बात पूछनी है। क्या आपने मेरे प्राइवेट पत्र·········जी को दिखलाये थे ? इस रहस्योद्घाटन के सम्बन्ध में प०············का जो पत्र मुझे आज मिला है, वह भेजता हूँ। उसे पढ़िए। मुझे आप से ऐसी आशा न थी। इस बारे में मैंने आपको पत्र लिखकर 'सतर्क' भी कर दिया था। फिर भी आपने ऐसा किया। बार-बार सोचने पर भी मेरी समझ में नहीं आता कि आपकी इस नीति का आधार क्या है ? मैं आपको नितान्त विश्वसनीय आत्मीय समझता था, फिर यह तो सम्पादकीय नीति के भी विरुद्ध है। किसी भी लेख का रहस्य-भेद उसकी इच्छा के विरुद्ध इस प्रकार नहीं करना चाहिए। आपके इस अनीतिमूलक आचरण से अत्यन्त दुःख हुआ है। मैं इसका कारण जानना चाहता हूँ कि आखिर आपने ऐसा किस लिए किया, जब कि मैंने मना भी कर दिया था। आपके इस व्यवहार ने मेरी आँखें खोल दी हैं। 'हाली' ने सच ही कहा है—

"जहां में अपने सिवा किसी पै कभी भरोसा न कीजिएगा,
जो अपना साया भी हो तो उसको तसव्वर अपना न कीजिएगा।"

अस्तु, आपने जो किया अच्छा ही किया। इससे भी मुझे एक अमूल्य शिक्षा मिली, एक भ्रम टूट गया, आगे को आँखें हो गईं !

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६७

गुरुकुल, कांगड़ी(बिजनौर)
२-५-२८

पालागन चौबेजी ।

२९-४ का कृपा कार्ड अभी मिला, लौटती डाक से आपके आर्डर की तामील कर रहा हूँ । जब आपका कार्ड आया उस समय मैं 'जुगनू' की नकल कर रहा था । पहले पत्र में आपको धमकाने के लिए मैंने यों ही लिख तो दिया था कि मैं अब कुछ न भेजूँगा, पर मुझे ख्याल था कि तकाजा आया ही चाहता है कुछ लिख रक्खूं । इकबाल की यह कविता मुझे तो बहुत पसन्द है । औरों को भी इसकी तारीफ़ करते सुना है. आपको पसन्द आती है कि नहीं, यह देखना है । यहाँ मेरे पास कोई भी पुस्तक नहीं है । हाली का 'हुब्बे वतन मुसद्दस', यहाँ कहाँ मिले जो उसे भेजूं, नज़ीर पर ज़रूर कुछ लिखूँगा । गंगावतरण की समालोचना लिखने के लिए पढ़ रहा हूँ ।

नया 'विशाल भारत', पढ़ा, बहुत अच्छा है, अवध उपाध्यायजी का लेख मुझे उनके अब तक के लेखों में बहुत पसन्द आया, अपने अधिकार की सीमा के अन्दर उन्होंने यह एक लेख लिखा है । इसी विषय पर उनसे और लेख भी लिखाइये, अर्थात् गणित के इतिहास पर प्रसिद्ध गणितज्ञों की जीवनी । भारतीय गणित की महत्ता पर उनसे एक लेख लिखवाइये ।

साहित्य-सम्मेलन पर आपने बहुत अधिक लिख डाला है । इसमें ज्यादती की बू आती है । क्या आपकी धारणा है कि दूसरी ओर से जो आन्दोलन की आँधी उठ रही है वह ईर्ष्या-द्वेष के दुर्भाव से रहित है ? मैं किसी पक्ष का भी पक्ष नहीं लेता पर मुझे यह आन्दोलन विशुद्ध भावना, खालिस सम्मेलन की हित-कामना से उठाया हुआ प्रतीत नहीं होता, इसमें भी कुछ अधिकारलोलुप लोगों का हाथ दीखता है, जो कुछ हो, मुझे तो यह इस तरह की तू तू, मैं मैं बहुत बुरी मालूम देती है । जो मैं कभी-कभी कोई ऐसी बात पत्रों में आपको लिख देता हूँ वह सिर्फ़ आप ही को सुनाने के लिए होती है । आप लोगों के प्राइवेट पत्र भी प्रकाशित करने लगे हैं, कहीं मुझे भी किसी झगड़े में न फँसा देना ।

आपने भला मेरा यह फोटो क्यों छाप दिया ? इसकी क्या ज़रूरत थी ! इस फोटो को तो मुझे इस समय के देखने वाले, कृत्रिम समझेंगे । यह जीवित अवस्था का चित्र है । खैर बहुत-सी फिजूल बातें लिख गया, आपको तो इन्हें पढ़ने की भी फ़ुर्सत न होगी । दोहे का (हाथ छुड़ाये···) पाठ इस वक़्त याद नहीं आता, याद आ गया तो पीछे लिख भेजूंगा, इसमें कुछ पाठ-भेद है ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६८

गुरुकुल, कांगड़ी (बिजनौर)
ता० २९-४-१९२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम ।

२६-४ का कृपा-पत्र और 'गंगावतरण' कल मिल गया । नज़ीर की कविता का संग्रह भी रामप्रसादजी ने चार-पाँच दिन हुए भेजा है । दोनों की समालोचना भेजूंगा । कई दिन से शरीर अस्वस्थ है, ज्वर है, इसलिए कुछ विलम्ब सम्भव है । गुरुकुल, कांगड़ी पर भी एक छोटा-सा नोट भेजने का विचार है, कुछ चित्र भी होंगे ।

मालूम होता है अब आप पूरे सम्पादक बन गये हैं, तभी तो हमारी पसन्द की हुई कविता को नापसन्द करके छापने से इनकार कर दिया ! यह सम्पादकीय मद प्रायः आ ही जाता है । वह कविता जो आपको पसन्द नहीं आई, रत्नाकरजी को इतनी पसन्द आई थी कि 'काले पानी पर' न्योछावर हुए जाते थे, और भी कई भावुक कवितामर्मज्ञों ने उसे बहुत सराहा था । वह हम लोगों को इतनी पसन्द आई थी, तभी तो छपने के लिए भेजी थी । इसमें उसके लेखक कवि का आग्रह क्या इशारा भी नहीं था । मैंने ही बहुत आग्रह करके उनकी कुछ कविताएँ मँगाई थीं, और स्वयं ही बिना उनकी प्रेरणा के भेजी थीं, जो आपको पसन्द न आईं । अरे भई, यह कोई 'प्रवासी भारतवासी' का तो विषय न था फिर आपके पसन्द-नापसन्द का प्रश्न क्यों आड़े आ गया ? सम्पादकीय अधिकार का अर्थ लोकमत का ठुकराना तो नहीं है । जब 'हम' कविता-मर्मज्ञों का लोकमत उस कविता के अनुकूल है तो फिर आपको अपना मत 'इसलिए उसे न छापूंगा' कहकर प्रकाशित न करना चाहिए था । आप भले ही उसे न छापें, इसके लिए हमें आग्रह नहीं, पर यह ज़रूर कहेंगे वह कविता अच्छी है, कविता-मर्मज्ञों ने उसे बहुत पसन्द किया है । मैं कुछ और उत्कृष्ट उर्दू कविताएँ प्रकाशनार्थ भेजना चाहता था, पर अब संकोच होता है । शायद आपको पसन्द न आवें मेरा परिश्रम व्यर्थ जाय । व्यर्थ कागज़ काले करने की मुझे आदत नहीं, अवकाश भी नहीं, ज़रूरत भी नहीं ।

आप मेरी चिट्ठी की किन बातों का उत्तर शीघ्र देंगे ? मुझे तो अब वह बातें याद भी नहीं रहीं कि आपको कब क्या लिखा था, जब कभी कोई बात पत्र लिखते समय सूझ जाती है, लिख देता हूँ । आप किसी बात का समय पर उत्तर देंगे, इसकी तो आशा ही नहीं करता । इसमें आपका अपराध नहीं कार्याधिक्य के दौरात्म्य का दोष है ।

आशा है, आप प्रसन्न हैं ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६६

गुरुकुल, कांगड़ी (बिजनौर)
५-५-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका १-५-२८ का कृपा-पत्र, आश्चर्य है, आज मिला। कविता का परीक्षक प० मदनलालजी को ही रखिए। वही ठीक हैं, कवि हैं, मार्मिक हैं। आपके पास हैं। कोई बहुत ही विवादास्पद कविता हो, उसे बाहर भी भेज सकते हैं। आपके पिछले पत्र के उत्तर में मैंने डाक्टर इक़बाल की एक कविता टिप्पनी सहित भेजी है, पहुँची होगी। गंगावतरण पढ़ रहा हूँ। उसकी समालोचना भेजूंगा। गरमी यहाँ ज़्यादा पड़ने लगी है। कई दिन ज्वर आता रहा, इसलिए कमज़ोरी भी है। कुछ लिखा-पढ़ा नहीं जाता वर्ना मैं इसी संख्या के लिए समालोचना लिख भेजता। फिर भी यथासम्भव शीघ्र भेजूंगा।

कल से मैं एक और 'आगामिनी आपत्ति' से चिन्तित नहीं, संत्रस्त हूँ। मुजफ़्फ़र सम्मेलन का सभापति मुझे चुना है। यार लोगों के दबाव में पड़कर मैंने आत्मसमर्पण कर दिया है। देखिये कैसी बीतती है। इस अग्नि-परीक्षा में पड़ने के लिए मैं तैयार न था, पर यहाँ जिसने सुना, यही आग्रह और अनुरोध किया कि स्वीकार कर लो। प्रो० रामदेवजी ने गुरुकुल की ओर से पत्रों में इस सूचना का तार भी मुझ से बिना पूछे ही भेज दिया। इस प्रकार ठोक-पीटकर वैद्यराज बनने के लिए मुझे विवश कर ही दिया, स्वीकृति दिलवा ही दी। योग्यता, स्वास्थ्य और परिस्थिति, किसी दृष्टि से भी यह उचित प्रतीत नहीं होता। पर मेरा इसमें ज़रा भी दोष नहीं, मैं सर्वथा इसमें निरपराध हूँ। मैंने इसके लिए ज़रा भी चेष्टा नहीं की। मैंने इस पद के योग्य कभी अपने को नहीं समझा। फिर इस वर्तमान आन्दोलन को देखते हुए तो और भी डर लगता है। आपकी क्या राय है?

हाँ, उस दिन जो दोहा आपने सूरदास के चित्र के बीच देने को पसन्द करके लिखा था, उसका पाठ वियोगी हरिजी के संक्षिप्त सूर-सागर में इस प्रकार मिला है—

"अब तो बल करि तोरिकर चले निबलकर मोहिं,
प मनते छूटो न जब तब देखौ प्रभु तोहि ॥" (पृष्ठ २६८)

इससे पहले इसी प्रसंग का एक दोहा और वहीं लिखा है—

"कहा भयो करते छुटे, कर्णधार भवसिन्धु।
मनते छुटेन कठिन जन भक्त कुमुद उरइन्दु ॥"

पर आपने जिस रूप में लिखा था, वही पाठ अच्छा मालूम देता है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७०

ज्वालापुर-महाविद्यालय,
१८-८-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

पहले पत्र पहुँचे होंगे, आज मुश्किल मे लेख समाप्त कर पाया हूँ, एक विमुक्त मित्र की स्मृति ने अधीर कर दिया। लेख लिखते समय किसी दिन घण्टों आत्मविस्मृति की-सी दशा में बैठा रहा हूँ, दिल उमड़-उमड़ आया है। लेखनी रुक-रुक गई है। लेख बहुत बढ़ गया, फिर भी बहुत-सी बातें छोड़नी पड़ीं।

"हाले दिल ख़ूब कहा है यह ज़बां का दावा,
दिल से जो पूछिए कहता है कि कुछ भी न कहा।"

कल समाचारपत्र में कविवर पाठकजी की मृत्यु का समाचार पढ़कर बड़ा दुःख हुआ। हिन्दी का एक महारथी महाकवि उठ गया। अफ़सोस! पाठकजी का चित्र और चरित्र आप देंगे ही।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७१

ज्वालापुर-महाविद्यालय,
२२-८-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

२६-९ का कृपा-पत्र आज अभी मिला। संस्मरण आपको पसन्द आ गये, यह जानकर सन्तोष हुआ। पर यह देखकर चिन्ता हुई कि आपने इसमें कुछ थोड़ा-सा परिवर्तन कर दिया है। मुझे डर है कि कहीं रग पर नश्तर न मार दिया हो। मैंने जो कुछ लिखा था, उसमें कहीं एक मात्रा भी हटाने लायक न थी। मैंने नहीं लिखा था—दिल में बैठकर किसी ने लिखाया था। जिस अंश पर आपको शिकायत है, उस पर मैंने दो महीने विचार किया था। मुझे तो ताम्मुल था, पर दिल से बराबर यही आवाज़ आती थी कि लिखो और यही लिखो, इससे भी जोरदार इबारत में लिखो। यदि वह अंश आपकी नीति के विरुद्ध था तो मुझसे पूछ लेते। न छपता, इसकी जल्दी न थी। पर अपने किसी लेख में ऐसा परिवर्तन मुझे सह्य न था। आपने मेरे साथ यह अन्याय किया है। मैंने स्पष्ट निवेदन किया था कि 'अविकल रूप' में छपे। 'कोई बात, कोई वाक्य, छूट न जाय' आपने मेरी इस प्रार्थना की अवहेलना की। आपको सब बातें मालूम होतीं, आपके हृदय में भी वही प्रेरणा हो रही होती जो मेरे दिल में थी तो मैं समझता

हूँ, आप ऐसी हरकत कभी न करते। मालूम नहीं आपने कहाँ काट-छाँट की है और क्या-क्या की है। आप मुझसे पूछ तो लेते। यदि मेरा यह पत्र वक़्त पर पहुँच जाय और परिवर्तनीय अंश अभी न छपा हो तो उसे उसी रूप में रहने दीजिए, जैसा था। वह कलम की आवाज़ न थी, दिल की सदा थी। "कोई और बोलता है मेरी ज़ुबां नहीं है।" भारतीय हृदय दिल की आवाज़ को न समझे, आश्चर्य है. अफ़सोस है. ख़ैर।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७२

ज्वालापुर-महाविद्यालय,
९-१०-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

३-१० का कृपा-पत्र कल मिला, आज पार्सल भी मिल गया। इस कृपा के लिए अनेक धन्यवाद। आपने जो काट-छाँट के बारे में अपने सिद्धान्तानुसार लिखा है, वह ठीक है और मैंने जो लिखा था वह मेरे सिद्धान्तानुसार ठीक था। दोनों पक्ष अपनी-अपनी जगह ठीक हैं। मैं महात्मा गांधीजी का अनुयायी नहीं हूँ—यानी अहिंसावादी। मैं लोकमान्य तिलक का भक्त हूँ। मुझे जो बात ठीक मालूम देती है और विशेषतया ऐसे प्रसंग पर उसे ज़ोरदार शब्दों में प्रकट किए बिना नहीं रहा जाता। भाषा के संयम का मैं बराबर ध्यान रखता हूँ, पर विषय के अनुकूल भाषा का प्रयोग उचित समझता हूँ। अमुक ने ऐसा काम इस नीयत से किया है, ऐसा कहना बेशक सब जगह ठीक नहीं है। किसी की नीयत पर हमला करना ठीक नहीं, यह मैं मानता हूँ। पर जब नीयत साफ़ मालूम हो रही हो—तर्क-प्रमाण भी अनुकूल हों, तो नीयत पर भी आक्रमण करना ही पड़ता है। नीयत या भाव ही तो अपराध के लघुत्व या गुरुत्व में कारण हैं। जिस आदमी की नीयत साफ़ मालूम हो रही हो उस पर परदा डालना, बात छिपाकर कहना मसलहत भले ही हो, इन्साफ़ नहीं है। नीयत का अपराध है तो उसे दण्ड मिलना ही चाहिए। इस प्रसंग में जो कुछ किया गया है, वह बदनीयती और विद्वेष भाव से किया गया है। इसके पुष्ट प्रमाण हैं। इसीलिए वैसा लिखा था। ख़ैर, आपने और तो जो कुछ किया क्षन्तव्य है पर एक जगह रग पर नश्तर मार दिया। 'इख़लाकी मौत' वाला वाक्य निकालकर रसभंग कर दिया। सारा मज़ा किरकिरा हो गया। वाक्य असम्बद्ध-सा हो गया। ज़रा पढ़कर देखिए। 'लाचारी है कोई नौहागर नहीं मिलता।' इसके आगे का वाक्य न रहने से चमत्कार ही जाता रहा, "हैराँ हूँ दिल को रोऊँ कि पीटूँ जिगर को मैं" का भाव तभी स्पष्ट और

सुसंगत होगा जब दिल और जिगर के स्थानीय दो कोई हों। यहाँ इत्तफाक से दोनों आ गये थे और ऐसे आये थे कि न आये होंगे कहीं। मुझे इस सारे प्रसंग में यह वाक्य पसन्द था, 'इख़लाकी मौत' का प्रयोग बिल्कुल फिट और यथार्थ था। यह तो ऐसे मौक़े पर बोला ही जाता है। इसके प्रयोग का इससे अच्छा और मौक़ा हो ही नहीं सकता। बात बिल्कुल सच्ची है। जो आदमी अपने मित्र की और विपन्न मित्र की इतनी भी सहायता न करे क्या उसका इख़लाक ज़िन्दा है। इख़लाक की मौत इसी का तो नाम है। आपने इस वाक्य को निकालकर सारी इबारत की जान निकाल दी। कम से कम इतना ही रहने देते, "दोनों का मातम अकेले मुझे ही करना पड़ेगा···" तब भी मतलब ख़ब्त न होता। रफ़ कापी मेरे पास नहीं है। पूरा वाक्य याद नहीं आ रहा है, पर बेतरह खटक रहा है। 'मित्र घात' भी इतना कठोर शब्द नहीं है, इसका अर्थ मित्रता की हत्या ही नहीं है। महावरे में मित्र के साथ विश्वासघात या बदसलूकी भी इसका प्रचलित अर्थ है। पर इसके परिवर्तन में अधिक खटकने वाली बात नहीं है। ऊपर का वाक्य तो बहुत ही खटक रहा है। सचमुच रग पर नश्तर लग गया।

मुझ से अपने लेख की प्रेस कापी नहीं होती। कापी करने बैठ जाता हूँ तो सारा लेख ही बदल जाता है और बहुत बढ़ जाता है। मैं पैंसिल से लिखता जाऊँ, दूसरा कापी करता जाय, तो काम जल्दी हो सकता है। ख़ैर, कई ज़रूरी काम रह गये और छुट्टियाँ ख़त्म हो गई। पर 'विशाल भारत' के लिए दो-तीन लेख लिखे जा सके, इससे सन्तोष है। वि० भा० के लिए एक लेख ग्वाल कवि पर मेरे पास आया पड़ा है। उसे अभी देख नहीं सका। शीघ्र ही देखकर भेजूंगा। नवनीतजी से कहकर लिखवाया था। 'माधुरी' वाले उनसे माँग रहे थे। मैंने वि० भा० के लिए माँग लिया। एक लेख श्रीयुत बाबू राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंह, बी० ए० वीरसिंहपुर भेजें। उन्हें मैंने इसके लिए लिखा था, आज उनका पत्र आया है। लेख तैयार हो गया है, भेजने वाले हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७३

गुरुकुल, काँगड़ी
४-११-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

मैं २८-१० को यहाँ पहुँच गया था। श्री बा० राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंहजी, बी० ए० का एक लेख 'डिरोज़ियो' पर मैंने आपके पास भेजा था। उन्होंने और भी

दो-एक लेख वि० भा० के लिए लिखे हैं। वह बराबर कुछ-न-कुछ लिखते रहेंगे। बहुत अच्छा लिखते हैं, उनसे लेख माँगते रहिए। बड़े सहृदय सज्जन हैं। मेरे लेखों के छपने का प्रबन्ध बा० राजेश्वरप्रसाद नारायणसिंहजी मुजफ़्फ़रपुर से कर रहे हैं। लेखों के सम्पादन का भार श्रीयुत बा० पारसनाथसिंहजी ने अपने ऊपर लिया है, कुछ दिन बाद लेख-संग्रह की सामग्री उनके पास भेजने वाला हूँ। फिर लेखों के सम्पादन का सवाल भी था। इसके लिए मैंने पारसनाथसिंहजी को ही उचित समझा। मैं स्वयं यह काम न कर सकता था। आशा है, उनके सम्पादन में लेख-संग्रह ठीक तौर पर प्रकाशित हो जायगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७४

गुरुकुल, कांगड़ी
७-१२-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपका तिथि-रहित पत्र आज मिला, पर उसमें मेरे उस रजिस्टर्ड पत्र का उत्तर नहीं है, यहाँ तक कि उसकी पहुँच भी नहीं है। यह मैं जानता हूँ कि अत्यधिक कार्य-व्यग्रता ही इसका कारण है। फिर भी ज़रूरी बात का कुछ-न-कुछ जवाब तो मिलना ही चाहिए, निरर्थक पत्र लिखने का रोग तो मुझे भी नहीं है।

हिन्दी-साहित्य-सेवियों की कीर्ति-रक्षा पर दिसम्बर के अंक में मैं कुछ नहीं लिख सकूँगा, मुझसे लिखवाना चाहते हैं तो जनवरी में रहने दीजिए। इस समय मुझे एक लेख 'सरस्वती' के विशेषांक के लिए भेजना है, वर्षों से तक़ाज़ा है। इस बार वादा कर लिया है।

'विशाल भारत' में घासलेटी साहित्य पर आपका नोट गौड़जी को बहुत पसन्द आया। फाँसी अंक की समालोचना भी ख़ूब है। श्रीधरजी पाठक की जीवनी तो, सुना है, उनके पुत्र लिख रहे हैं। क्या आप भी लिखेंगे या उन्हें अपना मसाला दे दिया ? ज़रूरी बातों का उत्तर दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७५

गुरुकुल, कांगड़ी
२१-११-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपके दोनों कृपा-पत्र यथासमय पहुँचे। उत्तर में कुछ विलम्ब हुआ। मैं आपकी कठिनाइयों को जानता हूँ और आपकी हिम्मत की तारीफ़ करता हूँ। यह

आप ही का हौसला है जो इन दिक्कतों में इतना काम कर लेते हैं। लीडर तो आप हैं पर फ़ण्ड की कमी है। लीडर के लिए तीन चीज़ें ज़रूरी हैं, फण्ड, अख़बार और प्लेट-फार्म। इन चीज़ों की बदौलत लीडर टोटे में नहीं रहते। व्यापारियों से कहीं अच्छे पड़ रहते हैं। लीडरी बड़े नफ़े का सौदा है। बे-पूंजी की तिज़ारत है, पर ज़रा ढंग आना चाहिए। आपको वह ढंग नहीं आता, आयगा भी नहीं। आपके हिस्से में तो नुकसानात सहना ही है, खैर, कोई लीडर ऐसा भी चाहिए।

पसन्द आने की बात है, आपको अकबर के संस्मरण न जाने क्यों इतने पसन्द हैं, उनमें कोई ऐसी खास बात तो नहीं है। आपका मुद्दत से तकाज़ा था उससे छुटकारा पाने के लिए कुछ फुटकर बातें जल्दी में लिख दी थीं। अपनी पसन्द की चीज़ पसन्द आती ही है। "**वसन्तिहि प्रेमिण गुणन वस्तुति**" अस्तु।

फुरसत हो तो खासा पोथा—संस्मरण-पुराण बन सकता है। पर काम बड़ा मुश्किल है। सबके रोने को किसका जिगर लाऊँ!

"कहाँ से लाऊँगा खूने जिगर इनके खिलाने को,
हज़ारों तरह के ग़म दिल के महमां होते जाते हैं।"

सूखे हुए ज़ख्म हरे होते हैं। पुरानी चोटें ताज़ा होकर दुखती हैं। कभी-कभी सोये संस्कार जाग पड़ते हैं और दिल को बेचैन कर देते हैं। प० भीमसेनजी के दुःखप्रद संस्मरणों ने हिम्मत की कमर तोड़ दी। इस कूचे में धँसते जी डरता है। ईश्वर का बड़ा अनुग्रह है कि मनुष्य का स्वभाव विस्मरणशील बनाया है, पूर्व-जन्मों के सम्बन्ध याद नहीं रहते; वर्ना आदमी एक दिन भी ज़िन्दा न रह सकता। पागल हो जाया करता या मर जाया करता। एक ही जन्म के सम्बन्धों की धुँधली-सी याद बावला बना देती है। सहृदय की तो मौत है, परम ज्ञानी या हृदयहीन की बात दूसरी है। कम से कम मैं तो अपने हृदय की निर्बलता से बहुत तंग हूं। कभी-कभी तो ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि इस आफ़त से बचा—

"इलाही! है सकत[1] नेमुल्बदल[2] के तुझको देने की,
मुझे इसके एवज़ तू कुछ न दे, पर फेरले दिल को!"

कल यहाँ लाला लाजपतरायजी की शोक-सभा थी। बहुत-से व्याख्यान हुए, सब अपनी-अपनी कह गये, बेरुके निर्विकार भाव से सुना गये। मुझसे भी कुछ कहने को कहा गया। गला रुँधने लगा, जी भर आया, हारकर बैठ गया। संस्मरणों की ओर ध्यान दिलाकर आपने मुझे एक जंजाल में फँसा दिया।

मैं जान-बूझकर इस ओर से अनजान बन रहा था। कभी-कभी विमुक्त

१. सकत=शक्ति। २. नेमुल्बदल=बदले की चीज़।

मित्रों की स्मृतियाँ व्याकुल करती थीं, तो भुलाने की चेष्टा करता था। मन मारकर रह जाता था। प० भीमसेनजी के संस्मरण की लोग दाद देते हैं, और मेरे दिल पर चोट लगती है। रोता हूँ और पछताता हूँ कि यह क्या कर बैठा। दिल का दर्द दिल में ही क्यों न छिपा रहने दिया। यद्यपि मुझे मजबूरी में वह लिखना पड़ा। दो महीने तक बहुत टाला, पर न रहा गया।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७६

किसरौल (मुरादाबाद)
अगहन सुदि १२,१९८६

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

कल जब मैं प्रिय पटेजी को एक कार्ड पोस्ट कर चुका, तो आपका कृपा-पत्र प्राप्त हुआ। समाचार जाने, चिन्ता मिटी। आपकी लम्बी 'चुप' ने मुझे चिन्तित कर दिया था। अपने पत्रों का उत्तर न पाकर मैं हैरान था कि क्या मामला है। मैं जानता हूँ कि आप अत्यधिक कार्य-व्यस्त रहते हैं, एक मिनट भी आपका वक्त बेकार नहीं जाता, फिर भी पत्रोत्तर न पाकर 'स्नेहः पापशंकी' के अनुसार व्याकुल हो जाता हूँ। ऐसा न किया कीजिए। मेरा हरदुआगंज के पते पर भेजा हुआ पत्र आपको न मिला यह जानकर दुःख हुआ। उसमें कई बातें लिखी थीं। अस्तु, जीवनी की भूमिका (चार आँसू) भेजे हुए आज डेढ़ महीना हो गया। या तो इतनी जल्दी थी या यह ढील है, मेरे 'चार आँसू' और आपके 'चार शब्द' देखिये, कब तक छपकर निकलते हैं! आशा है, आप मथुरा-वृन्दावन हो आये होंगे। प० नन्दकुमारदेव शर्मा के सम्बन्ध में कुछ लिखकर सम्मेलन-पत्रिका को भेज दीजिए, उनका तकाजा है। आपका काम प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। बिहार के प० राधाकृष्णजी, एम० ए० भी चल बसे। बड़े ही सरल सौम्य विद्वान् थे। मेरे भी बड़े प्रेमी मित्र थे। जब से उनकी मृत्यु का समाचार पढ़ा है, हृदय अधीर हो रहा है। हिन्दी का एक सुलेखक और सेवक कम हो गया। मिश्रबन्धु-विनोद के लिए शंकरजी की संक्षिप्त जीवनी आप अवश्य लिखिये। प० रुद्रदत्तजी और प० नन्दकुमारजी के सम्बन्ध में भी मि० ब० वि० के लिए कुछ ज़रूर लिख दीजिए। मैं शीघ्र ही प्रयाग जाने की तैयारी में हूँ। वृन्दावन पहुँचना कठिन दीखता है। हो सका तो वृन्दावन होता हुआ ही प्रयाग जाऊँगा, आपको सूचना दूँगा। आज अभी 'कवि' (गोरखपुर) में बिहारीलाल पर कवि श्री मदनलाल चतुर्वेदी का लेख पढ़ा, उन्होंने श्रीअमरकृष्णजी के आपके द्वारा अनुमोदित

मत का खण्डन किया है। आपके 'चार शब्द' बहुत अच्छे हैं। एक जरूरी काम से यहाँ आया था, परसों घर लौट जाऊँगा। बड़े दिन के उत्सवों में आप कहीं जायेंगे तो नहीं? बिहारीलाल दो भिन्न व्यक्ति थे, सतसईकार बिहारीलाल थे, बिहारीदास नहीं। पर रत्नाकरजी ने अपनी टीका मे बिहारीदास ही लिखा है। यह एक नयी समस्या उपस्थित है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७७

नायक-नगला (बिजनौर)
५-२-२६

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका तार और कृपा-पत्र दोनों आगे-पीछे पहुँचे। आवेश में मैंने आपको पत्र लिखा था। मुझे खेद है कि उससे आपको अत्यधिक कष्ट पहुँचा। सन्देह निवृत्ति के लिए आप दो लाइन लिख देते उसी से मेरा सन्तोष हो जाता। ऐसी भयानक शपथ लेने की भला क्या ज़रूरत थी? आपकी शपथ पढ़कर मेरा दिल दहल गया। सचमुच में काँप गया। आपकी आँखों में आँसू आ गये। मैं पछता रहा हूँ कि मैंने वैसा पत्र आपको क्यों लिखा। मेरे पत्र से जो वेदना आपको हुई उसके लिए क्षमा माँगता हूँ। मेरा आप पर यथापूर्व विश्वास है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७८

गुरुकुल, कांगड़ी
२६-२-२८

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

१२-२-२६ का कृपा-पत्र आज मिला। मैं आपको 'बुद्धू' नहीं समझता, आपकी सरलता से धोखा ज़रूर हो जाता है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं। आदमी के स्वभाव का पता बहुत दिनों में जाकर लगता है। आपके सादा चोले में 'धूर्तता' भी छिपी है, इसका कोई अनुमान भी नहीं कर सकता। अस्तु, मेरा भ्रम दूर हो गया। मैं आगे आपको वैसा ही समझूँगा, जैसा आप कहते हैं।

'विशाल भारत' को लोग पसन्द तो करते हैं, पत्र निकल भी अच्छा रहा है। फिर क्या बात है? घासलेटी-विरोध ने हानि पहुँचाई, इसमें सन्देह नहीं। मैंने पहले

ही आपको पत्र लिखा था कि यह बला सिर पर न लीजिए। कोरे सिद्धान्तवाद से व्यापार में काम नहीं चलता। प्रारम्भिक अवस्था में तो ऐसे अप्रिय प्रसंग से बचने की और भी आवश्यकता होती है। आपने अपना कर्तव्य-पालन कर दिया, अब इसे ज़्यादा तूल न दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

७९

नायक-नगला
२७-२-२९

प्रिय चतुर्वेदीजी,

आपकी अन्तिम चिट्ठी जिस दिन मुझे मिली, उस दिन मैं इधर आ रहा था। उत्तर का अवकाश न मिला। आपने अपने इस पत्र में पत्र-व्यवहार पर जो शर्त या पाबन्दी लगाई है, उसके अनुसार कार्य करना मेरे लिए अशक्य है। अपना दुखड़ा रोना या प्राइवेट, गोपनीय बातें लिखना मुझे भी पसन्द नहीं है। इस बारे में मैं आप से भी सख्त हूँ। आपने स्वयं भी मेरे विषय में लिखते हुए एक लेख में स्वीकार किया है कि मैं अपने सम्बन्ध में बहुत ही कम बातें करता हूँ। फिर भी मनुष्य-स्वभाव-सुलभ कोई ऐसी बात किसी 'मित्र' को पत्र लिखते हुए निकल ही जाती है, जो किसी कारण 'गोप्य' हो सकती है। जहाँ तक मनुष्य-स्वभाव का मुझे परिचय है, कोई 'सार्वजनिक' मनुष्य भी इस ऐब से बरी नहीं है। सार्वजनिक कार्यों के सम्बन्ध में भी प्रायः ऐसी बातें होती ही हैं, जिनका सर्वसाधारण पर प्रकट करना उचित नहीं समझा जाता। बड़े-बड़े सार्वजनिक और ऑल इण्डिया लीडरों में भी परस्पर ऐसा पत्र-व्यवहार होता है, जिसका प्रकाशन इष्ट नहीं होता। फिर मैं तो 'सार्वजनिक' प्राणी ही नहीं हूँ, मैं तो बिलकुल 'प्राइवेट' आदमी हूँ। मैं किसी भी सार्वजनिक कार्य में आप से सहायता की आशा नहीं रखता। इसलिए आगे को आप से पत्र-व्यवहार नहीं करूँगा। कभी कोई बात आप पूछेंगे तो अत्यन्त संक्षिप्त उत्तर कार्ड पर दे दिया करूँगा, जिसका भाव छिपाने में आपको कष्ट न हो। अब तक जो हुआ उदारतापूर्वक क्षमा कीजिए। मेरे जितने पत्र आपके पास हैं उन्हें जला दीजिए, या सर्वसाधारण को—जिन्हें आप सुनाना पसन्द करें—सुना दीजिए, जिससे आपके दिल का बोझ हलका हो जाय। मैं अपने किसी रहस्य-गोपन का भार आपके सुकुमार हृदय पर डालना नहीं चाहता। मैं आपकी इस भ्रान्त धारणा का निराकरण कर देना भी उचित समझता हूँ कि मैंने आप पर विश्वासघात का अपराध नहीं लगाया। मैंने जब सावधान रहने के लिए आपको पत्र लिखा था उसके उत्तर में आपने मुझे कुछ

भी नहीं लिखा। मैं समझा, सम्भव है, वह पत्र आपको न मिला हो या आप भूल गये हों। भूल की सम्भावना आपके बहुधन्धी स्वभाव से उस बारे में भी हो सकती थी, जिस पर आप बिगड़ रहे हैं। जब आपने मुझे लिखा कि आपने वैसा नहीं किया मैंने फ़ौरन मान भी लिया; क्षमा भी माँग ली। पर इस घटना से आपको ऐसी शिक्षा मिली है कि उसे आप बार-बार दुहरा रहे हैं और मुझे सावधान और सचेत कर रहे हैं। मैं भी आपसे विनीत निवेदन करना चाहता हूँ कि मुझे ख्वाहमख्वाह प्राइवेट झींकना झींकने की आदत नहीं है। मैं आप से या किसी दूसरे मित्र से पत्र-व्यवहार करके 'सार्वजनिक' प्रसिद्धि प्राप्त करना नहीं चाहता। आपके साथ पिछले पत्र-व्यवहार से सिवाय सौहार्द या सद्भाव के और कोई भी प्रयोजन नहीं था। आप पत्र लिखते थे, मैं भी लिख देता था। अब आप नहीं चाहते, मैं भी न लिखूंगा। आप सर्वथा निश्चिन्त रहिए। मैं आपको किसी बात के 'छिपाने के लिए' कष्ट न दूँगा। मैं आपको अधिकार देता हूँ कि आप जिस प्रकार सन्तुष्ट हो सकें, मेरे उन पत्रों के साथ जो आपके पास हैं, व्यवहार कीजिए। इससे जो कुछ भी हानि-लाभ होगा मैं भुगतने के लिए सहर्ष तैयार हूँ। मैं 'सार्वजनिक' जन होता तो आपके साथ पत्र-व्यवहार जारी रखता, पर मैं 'सार्वजनिक' नहीं हूँ और दूसरी दशा में आप वास्ता रखना नहीं चाहते इसलिए मजबूरी है। यह मेरा अन्तिम पत्र है। यह पत्र भी मैं सिर्फ़ आप ही के लिए लिख रहा हूँ। पर यदि इसे भी आप अपने ऊपर 'बोझ' समझें, तो पढ़ते ही फाड़ डालिए या जैसा उचित समझिए कीजिए। मैं कोई शिकायत न करूँगा। पहले अपराधों के लिए क्षमा चाहता हूँ और आगे के लिए तोबा करता हूँ। अस्तु, जो हुआ अच्छा ही हुआ। कौन जाने इसमें भी कोई भलाई छिपी हो। मुझे प्रसन्नता होगी यदि आप उन सब बातों को भूल जायँ, जो मेरी ओर से आपके कष्ट का कारण हुई हों। मैं आपको शपथपूर्वक विश्वास दिलाता हूँ कि मैंने जान-बूझकर कभी आपको कष्ट देना नहीं चाहा। मेरे साथ पत्र-व्यवहार में आपका मनोरंजन होता है, इसी भ्रम में पड़कर मैं आपको पत्र लिखा करता था। यदि आप ज़रा भी इशारा कभी कर देते कि आप पर 'बोझ' पड़ रहा है तो फिर मैं एक भी पत्र आपको लिखने का दुःसाहस न करता। मुझे दुःख और पश्चात्ताप है कि मैं अपनी भूल से आपको कष्ट पहुँचाता रहा। मैं अपनी उन भूलों के लिए आपसे फिर क्षमा चाहता हूँ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

८०

गुरुकुल, कांगड़ी
२१-४-२६

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

१५-४ का कृपा-पत्र मिला। आपने अपने बारे में जो कुछ लिखा है अक्षरशः सत्य है और यह अच्छा ही है, किसी विपद-ग्रस्त की सहायता करना बड़े पुण्य का काम है। इस गुण का आजकल अभाव हो चला है। कहीं मिल जाय तो शतमुख से प्रशंसनीय है। पर इसका निर्वाह कठिन है—साधारण व्यक्ति के सामर्थ्य से बाहर की बात है। फिर बहुत-से हज़रत इसका नाजायज़ फ़ायदा भी उठाते हैं। जो कुछ हो, आदमी अपनी आदत से लाचार है। फिर भी चादर देखकर ही पाँव पसारने चाहिएँ। परमार्थ वहीं तक ठीक है जहाँ तक स्वार्थ में कर्तव्य-पालन बाधक न हो। आप परोपकार की झोंक में सीमा का उल्लंघन कर जाते हैं।

श्रीरामानन्दजी चटर्जी का अंग्रेज़ी भाषण मिला! इसका अविकल हिन्दी-अनुवाद पुस्तकाकार छपना चाहिए था। 'विशाल भारत' में निकल जाय तो कैसा? 'आज' में निकल तो रहा है पर मुझे टुकड़े-टुकड़े पढ़ने में मज़ा नहीं आता। रस-विच्छेद हो जाता है, सिलसिला टूट जाता है। अगला-पिछला सम्बन्ध भूल जाता है। यह भाषण तो स्थायी साहित्य में स्थान पाने योग्य है।

पिछले 'विशाल भारत' में जिनका लेख हिन्दी-साहित्य के सम्बन्ध में निकला है, वे सज्जन कौन हैं? (प० ल० ना० मिश्र) 'घृताची' कहानी वाले परशुराम चतुर्वेदी कौन हैं? कहानी अच्छी है। अनुवाद पण्डिताऊ ढंग का गुट्ठल है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८१

गुरुकुल, कांगड़ी
१-५-२६

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

पुरस्कार के रुपयों का मनीआर्डर मिल गया। धन्यवाद। पर 'विशाल भारत' की आर्थिक दशा को देखते हुए मुझे इसके लेने में संकोच हुआ। पिछले दिनों 'सरस्वती' की जनवरी की संख्या के लिए मैंने एक लेख लिखा था, जो उसकी दो संख्याओं में प्रकाशित हुआ था। 'सरस्वती'-सम्पादक ने लिखा था कि 'सरस्वती' की समालोचना करते हुए 'लीडर' ने एक मात्र आप ही के लेख की प्रशंसा की है। कोई और

लेख भी भेजिये। वह लेख प० ज्वालादत्तजी शर्मा के अनुरोध से लिखा गया था। उन्होंने उन्हें पुरस्कार की बात लिखी, पर वह टाल गये कि अब तो वक़्त निकल गया, पहले से लिखते तो भिजवा देता, इत्यादि। 'सरस्वती' और 'माधुरी' पूंजीपतियों की पत्रिकाएँ हैं, पर उनके सम्पादक अपनी कारगुज़ारी दिखाने के लिए लेखकों को कोरा टरका देते हैं! फिर भी लेख लेना अपना हक़ समझते हैं। इसी नीति का आप भी सहारा लीजिए। तब बात है। नये 'विशाल भारत' में चटर्जी की चिट्ठी ख़ूब रही। उसे पढ़कर मेरे मित्र राधाकृष्णजी बड़े प्रसन्न हुए। उसके सुन्दर अनुवाद के लिए वह आपको बधाई देते हैं।

आशा है, आप सानन्द हैं। बा० पारसनाथसिंहजी कलकत्ते पहुँच गये या नहीं?

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८२

काव्य कुटीर, नायक-नगला
१२-३-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका १-३-३० का कृपा-पत्र मिला। मैंने भी एक पत्र आज ही चाँदपुर से भेजा है, जिसमें 'क़लामे बिस्मिल' की भूमिका भी है। कलकत्ते में आपके सुखद सहयोग से ही इतने दिन कट गये। 'विशाल भारत' के लिए मैं जो कुछ कर सकता था, उतना न कर सका, फिर भी आप उसे सराहते हैं, यह आपकी उदारता है। 'मतवाले' का नोट मैंने प्रयाग में ही पढ़ लिया था, मतवाले के कहने का गिला क्या?

जी का पत्र आपके पत्र के साथ मिला है, भेजता हूँ। इस भूमिकाबाज़ी की आपत्ति से मुझे बचाइये। मैं इससे बेहद तंग आ गया हूँ। ख़्वाहमख़्वाह भूमिका या सम्मति लिखने के लिए पुस्तक पढ़ना मुझे बहुत ही अखरता है। मैं ऐसी एक पंक्ति भी नहीं पढ़ना चाहता, जिसे पढ़ने को जी न चाहता हो, लोग मार-मार कर गवाते हैं। इन कवियों से तो ईश्वर बचावे। ज़बरदस्ती दाद लेना चाहते हैं। जी का पत्र ज़रा ध्यान से, ऐनक साफ़ करके, पढ़िए। किस ढंग से काम लेना चाहते हैं? लोगों की ऊँची राय की धौंस देकर आतंक बिठाना चाहते हैं। 'ठूँठ' के पास पँखुरियाँ भेज रहे हैं। मैं तो पैकट वापस कर दूँगा। आठ महीने की मुसीबत के बाद ज़रा दम लिया है कि चढ़ाई शुरू हो गई। कभी-कभी तो तबीयत करती है लिखने-पढ़ने से तोबा कर लूँ। ख़ैर, आप को समझा दीजिए। इस बेगार में किसी और को पकड़ें। बिस्मिलजी से मुश्किल से इधर-उधर के कुलाबे मिलाकर पिंड

छुड़ाया था कि जी लिपट गये । मैं जानता हूँ बिस्मिल उस भूमिका से खुश नहीं, नाराज़ ही होंगे। उस दिन जब भूमिका लिखकर दी, वह थे नहीं। मुमकिन है, बिस्मिल उसे किताब के साथ देना भी पसन्द न करें । मुझे इसकी परवा नहीं, पर मेरे तो उसमें कई घण्टे नष्ट हुए। इलाहाबाद इसीलिए उतरना पड़ा। हाँ, उस दिन काशी में रत्नाकरजी के पास हरिऔधजी मिल गये । उन्हें यह सुनकर बड़ा रंज था कि सम्मेलन में घासलेटी प्रस्ताव पास हो गया। वह 'घासलेटी' का अर्थ शृंगार-रस की कविता समझ बैठे थे। मैंने उन्हें सब बातें समझाईं तो उनकी जान में जान आई, नहीं तो वे बेचारे बड़े खिन्न थे।

'विशाल भारत' यहाँ आज आया है, दूसरी जगह में भी अभी पहुँचा होगा। जब यह बात है तो मर-पच कर वक़्त पर निकालने से क्या फ़ायदा हुआ ? आप यह बात जी खोलकर और जोर देकर बा० रामानन्द चटर्जी से कहते क्यों नहीं ? बर्लिन डा० ताराचन्द के नाम 'पद्म-पराग' और 'प्रबन्ध-मंजरी' भिजवा दीजिए, उनसे और भी कुछ पते पूछिए। शास्त्रीजी को भी 'प्रबन्ध-मंजरी' भेजना न भूलिये । बहुत कुछ लिखना था, फिर शनैः शनैः लिखूँगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८३

काव्य-कुटीर, नायक नगला, चाँदपुर
८-४-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका पत्र और 'पद्म-पराग' की समालोचना का कटिंग यथासमय मिल गया था। इस बार पहली बार प० सुमित्रानन्दन पन्त से बिजनौर में मुलाक़ात हुई। आदमी तबीयत के साफ़ और 'जैन्टिलमैन' मालूम हुए। 'पल्लव' की भूमिका में जो पहले कवियों के विषयों में अन्ट-शन्ट, अनाप-शनाप, ऊल-जलूल, लिखे गये हैं, उसे वापस लेने को कहते थे। यह भी कहते थे कि ब्रजभाषा का विरोध करने के लिए मुझ से खास तौर पर कहा गया था, इसी से वैसा लिखना पड़ा इत्यादि। गला सुरीला है। सुर-ताल से वाकिफ़ हैं। राग-रागनियों के नाम जानते हैं। आजकल के एक आदर्श छायावादी कवि में जो गुण होने चाहिएँ सब हैं। ख़ुशी की बात यह है कि रोग से मुक्त हो गये हैं। वह 'भेड़ियाधसान' देखने के इच्छुक हैं। एक प्रति उनके नाम C/O म० दयानन्द जोशी, मुन्सिफ़, बिजनौर के पते पर भिजवा दीजिए।

'पद्म-पराग' की समालोचना के साथ आपने मेरी भी समालोचना कर दी।

इस डबल कृपा के लिए डबल धन्यवाद। अकबर के शब्दों में मैं भी कह सकता हूँ कि "मेरे नाचीज़ लेखों की जो क़द्र आपने की है वैसी किसी ने न की।" पर मुझे डर है कि कृत्रिम-बनावटी शान्ति के खब्त में आप लोग वीर, रौद्र और भयानक रसों का सर्वथा लोप करना चाहते हैं। जो एकदम असम्भव और अव्यवहार्य है। किसी अत्याचारी, नृशंस और क्रूर आदमी की करतूत पर क्रोध और घृणा आना स्वाभाविक धर्म है। फिर उसे प्रकट करना क्यों अधर्म है? यह तो एक तरह की मक्कारी है कि किसी दुष्ट पर क्रोध तो आवे इतना कि वह बेताब कर दे, पर उसे शब्दों में प्रकट न किया जाय। ऐसा न आज तक हुआ है, न कभी आगे होगा। साहित्य में सब रस सदा से रहे हैं और सदा रहेंगे। अस्तु, आपका निष्पक्ष फैसला सुनकर भी मेरी यही राय है कि दुष्ट, धूर्त और लोकवंचक लोगों की जितनी भी भर्त्सना की जाय उचित है, विहित है। अपने विरुद्ध फैसला सुनकर भ्रमणवादी गैलीलियो ने जज से कहा था कि आपका फैसला सुनकर भी यह कमबख्त भूमि बराबर उसी तरह घूम रही है, ज़रा भी तो नहीं रुकी। आपका फैसला सुनकर मैं आपसे यही अर्ज करता हूँ कि जनाब धूर्त और नृशंस व्यक्ति की पोल खोलना, शब्दों के कोड़े लगाना आज से हज़ार बरस बाद भी विहित समझा जायगा। इसमें ज़रा भी फ़र्क नहीं आयेगा। आप लोगों के इस 'क्लीव क्रन्दन' शान्तिपाठ को कोई न सुनेगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८४

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर, (बिजनौर)
११-४-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

एक पत्र कल पोस्ट कर चुका हूँ। मार्च का 'विशाल भारत' रात पढ़ा, एक बजे तक पढ़ता रहा।

३०० शब्दों वाला कार्टून बड़ा बढ़िया रहा। रात बहुत देर तक मैं उसे देखकर हँसता रहा। 'खरगोश वाले' के चेहरे पर 'काइयाँपन' खूब झलक रहा है। ज़रा-सी एक कसर रह गई। 'खरगोश वाले' का कान ज्यादा नहीं तो खरगोश के कान के बराबर तो होता। लम्बकर्णता में कमी रह गई।

'थर्ड क्लास' गल्प फ़र्स्ट क्लास रही। धन्यकुमारजी की तीन बार पीठ थपक दीजिए। 'हिन्दू चा गर्मम' खूब गरम वाक्य है। 'फ़ास्ट' भी 'बोत आछा है', पर

'क्रमशः' ने मज़ा किरकिरा कर दिया! बुरी जगह आप साँस तोड़कर बैठ गये। 'रस भंग है गयो'। विज्ञापनबाज़ी के ख़्याल से तो क्रमशः की पुट अच्छी है, पर सहृदयता को प्यासा मारने वाली बात है। नौ चिट्ठियों में से इस अंक में तीन तो होतीं, आपने पौने दो पर ही रोज़ा खोल दिया! यह सितमज़रीफ़ी अच्छी नहीं।

इस बार सम्पादकीय नोट भी पर्याप्त हैं और अच्छे हैं, सामयिक यानी वक़्त की रागिनी हैं। लिबरल दल और सत्याग्रह-संग्राम में एक वाक्य मुझे बहुत ही पसन्द आया—"ब्रिटिश शासन की कालिमा कम करने के उद्योग में कहीं लिबरल लोग अपना मुँह काला न कर लें, पर गुस्ताख़ी माफ़, यह तो अपने ग़रीब लिबरलों पर बड़ी करारी चोट लगा दी। अहिंसा के सिद्धान्त पर तो यह बम का गोला गिरा दिया। आपकी क़लम से ऐसी 'व्यंग्यमयी कठोर' बात कैसे निकल गई! इसके प्रायश्चित्तस्वरूप एक दिन का व्रत कीजिए! आज से सौ बरस बाद आपके इस नोट को पढ़कर लोग क्या कहेंगे। बात सम्भवतः ठीक होगी पर यह कितनी कठोरतापूर्वक कही गई है। ख़ैर, यह भी बिजनौरी बकरे की एक धार है। 'जरूरी चीजें' भी मजेदार गल्प है, पर उसमें 'अरे मेरे राम' खटकता है। 'ओ माई लार्ड', 'माई गाड' अच्छा रहता। फिर तेरहवीं का दिन ईसाइयों में तो नहीं होता। कहानी बहुत अच्छी है। 'केयर हार्डी' और 'दीनबन्धु के माता-पिता' भी बहुत अच्छे निकले। ३८० पेज पर 'लैम्प' को स्त्रीलिंग का लहँगा पहनाना ठीक न हुआ। यह तो ख़ालिस पुंलिंग था। यदि लिंग व्यत्यय का यही क्रम जारी रहा तो कुछ दिन बाद हिन्दी में एक शब्द भी पुंलिंग न रह जायगा। बंगाली बाबूगण हिन्दी के लिंग-भेद से बहुत घबराते हैं। उनके हक़ में तो यह अच्छा ही होगा। ४२६-४२७ पृष्ठ पर 'नरक' को नर्क लिखा गया है। सिर्फ़ एक जगह नरक शुद्ध रूप में छपा है, ऐसी भूल न होनी चाहिए। इससे बहुत-से पाठक 'नर्क' (बवजन 'तर्क') लिखने लगेंगे। ऐसे प्रसंग में पद्मचन्द्र-कोश देख लेना चाहिए। आगे को शब्द-शुद्धि पर विशेष ध्यान रहे, इसलिए नोटिस ले रहा हूँ। 'चम्पा में भारतीय संस्कृति' अच्छा लेख है। इससे पहले अंक में एक ऐतिहासिक लेख और भी महत्त्वपूर्ण निकला था, शीर्षक याद नहीं रहा। अंक इस समय पास नहीं। पुष्यमित्र और अग्निमित्र के सम्बन्ध में था। उसे पढ़कर मुझे अत्यन्त हर्ष हुआ था। उसके बारे में शायद लिखना भूल गया था। लेखक को बधाई दीजिए और उनसे और कोई ऐसा ही लेख मँगाइये। बहुत दिनों बाद ऐसा सुन्दर तथ्यपूर्ण ऐतिहासिक लेख पढ़ने को मिला था। उसमें भी एक भारी भूल रह गई थी 'मध्यमिका' (नगरी विशेष) का 'मध्यामिका' या ऐसा ही कुछ छपा है। लेख शायद अंग्रेज़ी से अनुवाद था। संस्कृत शब्दों की शुद्धि पर वह भी ऐतिहासिक शब्दों पर, बहुत ध्यान देना चाहिए। ख़ैर, बार-बार उस लेख की प्रशंसा करने को जी चाहता है। ऐसे लेख तो कभी 'सरस्वती' में भी शायद

एक-दो ही निकले होंगे।

रूस के चचा 'चिचेरिन' साहब भी खूब रहे, पर लेख के अन्त में यह छायावादी चित्र कैसा है ? क्या यह देवी 'चचेरिन' की चची है ? इस लेख के अन्त में कोई चित्र देना ही था तो 'भालू' या 'बाघ' का देना चाहिए था ! कौशिकजी का 'स्वदेश' अभी मैंने नहीं पढ़ा।

प० श्यामजी कृष्ण वर्मा चल बसे ! उनका चित्र कहीं से मँगाकर 'विशाल भारत' में दीजिए। भाई परमानन्दजी का एक लेख श्यामजी कृष्ण के सम्बन्ध में निकला है। आप कहेंगे—छापेंगे तो उसका परिवर्द्धित अनुवाद भेज दूँगा।

हाँ, एक बात और याद आ गई। पत्रकार-सम्मेलन की रिपोर्ट में गर्देजी के भाषण का अंश आपने बहुत अच्छा दिया है।

अबकी बार मुरादाबाद में एक मुसलमान सूफ़ी शायर की कविता सुनी। वृद्ध हैं, 'अख़गर' तख़ल्लुस है। मुलाक़ात तो पहले से भी थी, पर कविता विशेष रूप से इसी बार सुनी। 'विशाल भारत' के लिए कुछ नमूने लाया हूँ। एक बड़ी कविता जो अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण थी, उसकी नकल न मिल सकी। कविता बड़ी है और बड़ी सुन्दर है। रहस्यवाद का उत्कृष्ट नमूना है। आ जायगी तो भेजूँगा। सूफ़ी साहब का फ़ोटो मिल गया है, भेजता हूँ। इसे ब्लॉक के लिए रखिये। इससे ब्लॉक न बन सके तो लिखिये और मँगाऊं। उनकी एक रुबाई लिखता हूँ—

"बदियों को बुराई से मिटाया न गया,
शोलों को शरारों से बुझाया न गया;
लटका दिया क़ातिल को मगर ऐ अख़गर';
मक़तूल को तो फिर भी जिलाया न गया।"

वर्माजी (श्री ब्रजमोहन वर्मा) से इसका अर्थ पूछ लीजिए। इस रुबाई को पढ़कर मार्च के 'विशाल भारत' में ३३६ पृष्ठ पर टालस्टाय की यह उक्ति देखिए--"जिस प्रकार अग्नि अग्नि का शमन नहीं कर सकती, उसी प्रकार पाप पाप का शमन नहीं कर सकता।" कैसा सुन्दर अनुवाद है। सूफ़ी साहब अंग्रेजी के अच्छे कवि हैं। ४० वर्ष तक शिमले में अंग्रेज़ों और मेमों को उर्दू-फ़ारसी पढ़ाते रहे हैं। मसाला मिल गया तो बढ़िया लेख रहेगा। एक और शेर उन्हीं का है—

"बोसे मेरी निगाह के हूरों ने ले लिये,
देखा था इक यतीम को कल मैंने प्यार से।"

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८५

काव्य-कुटीर, नायक नगला
१७-४-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

मेरे पहले दोनों पत्र पहुँचे होंगे और आप सम्भवतः आज श्री वृन्दावन की भूमि में विराजमान होंगे। प्रवासी भारतवासियों की विषम समस्या सुलझाने में व्यस्त होंगे, दिमाग़ी व्यायाम कर रहे होंगे। अच्छा तो यह होता कि सभापति के सिंहासन पर स्वामी श्री भवानीदयाल संन्यासी की मूर्ति की स्थापना करके आप भरतजी की तरह स्वामीजी का प्रतिनिधित्व करते। न मालूम आपने क्या किया? खैर, इस सारी कार्रवाई की पूरी रिपोर्ट जेल में स्वामीजी के पास ज़रूर पहुँचनी चाहिए। इससे उन्हें परमानन्द की प्राप्ति होगी, दिल बढ़ेगा और साथ ही कई पली खून भी।

वृद्ध शरीर है, भारतवर्ष की जेल के कष्ट उनके लिए नये होंगे। दो वर्ष कैसे काटेंगे? यदि इस वर्ष स्वराज्य मिल गया तब तो वह पहले ही मुक्त हो जायेंगे। बहुत-से जोशीले और भावुक नवयुवक इसी आशा से जेल-यात्रा के लिए व्यग्र हैं कि स्वराज्य में जल्दी ही छुट्टी पा जायेंगे और शहीद समझे जाकर राष्ट्र से सम्मान भी पायेंगे। भगवान् उनकी आशा शीघ्र पूरी करे। 'आमीन', एवमस्तु, अल्ला हो अकबर! वन्देमातरम! इनकलाब ज़िन्दाबाद! साम्राज्यवाद का क्षय हो! राष्ट्रपति की जय हो! भारत माता की जय! गांधी बाबा की जय! 'अभ्युदय' से एक लेख की कटिंग भेजता हूँ, इसे अवश्य अवश्य 'विशाल भारत' में प्रकाशित कर दीजिए। आजकल जो नये ढंग की स्त्री-शिक्षा दावाग्नि की तरह फैल रही है, यह बची-खुची आर्य-सभ्यता और भारतीय संस्कृति को भस्म कर देगी। इसके विरुद्ध आन्दोलन उठाना चाहिए। यह शिक्षा भी 'घासलेटीइज्म' की नानी है। पाश्चात्य शिक्षा से सुशिक्षित आर्य ललना (अपवाद की बात जाने दीजिए) या भारतीय महिला मिस मेयो की बहन साबित होंगी। परमात्मा रक्षा करे। इस प्रकार के उपयोगी लेख 'विशाल भारत' में उद्धृत होते रहने चाहिएँ। आपसे मैंने पहले भी जोर देकर कहा था। आपने मान भी लिया था। आपने वाजपेयीजी का वह अग्रलेख, जिसमें उन्होंने महात्मा गान्धी की विजय-यात्रा की श्री रामचन्द्रजी की लंका की चढ़ाई से तुलना की थी, 'विशाल भारत' में उद्धृत किया? कितना अच्छा लेख था, वह आपकी प्रमाद की खटाई में गल गया।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८६

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)
ता० २-४-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

ट्रेन में से लिखा हुआ और फतहपुर से पोस्ट किया हुआ जनाब का पोस्टकार्ड मिला। 'प्रवासी'-सम्मेलन को समाप्त करके आप सही-सलामत पहुँच गये। इस बहादुरी के लिए बधाई देता हूँ। बाक़ी बातें तीसरे रजिस्टर्ड पत्र में लिख चुका हूँ। 'पिन' और 'लाठी' की आपने एक ही कही। अरे बाबा, किसी भले ग़ैरतमन्द आदमी का मुँह काला करके छोड़ देना तो लाठी मारना क्या जूते मारने से भी भयंकर दण्ड है। फिर 'पिन' चुभाना किसी दुष्ट के लिए कोई दण्ड है ? कोई कह सकता है कि खटमल ने काटा होगा, इसीसे यह कुरसी से उचक रहे हैं। दण्ड तो अपराधी से बदला लेने के लिए नहीं, बल्कि दूसरों को सावधान करने के लिए या इबरत हासिल करने के लिए दिया जाता है, जिससे दूसरे डरकर वैसा दुष्कर्म न करें। कम-से-कम मैं तो किसी 'नर पशु' को पिन का चुभाना वैसा ही समझता हूँ जैसा किसी गेंडे के चूतर पर मारना या सुई चुभाने की हास्यास्पद चेष्टा करना। अपनी आप जानें, पिन चुभाइये या किसी का काला मुँह कीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८७

C/O मध्यभारत हिन्दी साहित्य-समिति, इन्दौर
२०-५-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका और वर्माजी का दोनों पत्र एक साथ प० शिवसेवक त्रिपाठी द्वारा यथासमय मिले थे। पर समयाभाव से उत्तर न लिख सका। अब भी प्राप्ति स्वीकार मात्र लिख रहा हूँ। श्री वाजपेयीजी भी यहाँ पधार गये हैं। मेरे आने का मुख्य उद्देश्य मालवे के प्राचीन ऐतिहासिक तीर्थों की यात्रा का था। वह अलभ्य अवसर मिल गया और ऐसा कि न मिला होगा किसी को। इतिहास-मूर्ति ओझाजी और उनके सुपुत्र प० रामेश्वरजी ओझा, एम० ए० के साथ धार नगरी की यात्रा की। जो कुछ वहाँ देखा उसका वर्णन पत्र में असम्भव है। संस्मरण लिखने का विचार है, लिखे गये तो पढ़िएगा। एक चीज़ होगी। मांडू का महा क़िला भी ओझाजी के साथ देखा। परसों

उज्जन और देवास भी देखे। यहाँ से चित्तौरगढ़ और उदयपुर देखकर आगरे जाऊँगा। वहाँ से फिर घर। आपकी शिकायत है कि लेखकों के पत्रों का उत्तर तक नहीं देते, यहाँ तक कि ओझाजी के पत्रों का भी उत्तर और उनके लेख की अतिरिक्त प्रतियाँ आपने उन्हें नहीं दीं। आखिर उन्होंने 'विशाल भारत' में लेख देने का विचार स्थगित कर दिया। ओझाजी के सुपुत्र प० रामेश्वरजी ओझा, एम० ए० का एक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक लेख, जो ३० पृष्ठों में छपेगा, लिखा है, लेख सचित्र होगा। चित्तौर पर ऐसा लेख आज तक किसी पत्र में नहीं निकला, किसी ने नहीं लिखा। वह लेख यह 'सुधा' में भेजना चाहते हैं। मैंने 'विशाल भारत' के लिए माँगा तो कहा वह तो उत्तर तक नहीं देते। यदि आप उस लेख की १०० कटिंग उन्हें मुफ़्त दें और ५०० (कापियों की छपाई वह देंगे) छाप दें, इस शर्त पर आप उनका लेख प्रकाशित करना उचित समझें तो मैं वह लेख भिजवाऊँ? उत्तर फ़ौरन ही दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८८

C/O मध्यभारत हिन्दी साहित्य-भवन,
तुकोगंज (इन्दौर)
२८-५-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपका २४-५ का पत्र आज मिला। मैं इन्दौर आया तो सही, पर मुझे इन्दौर पसन्द न आया। शाक और फल यहाँ नहीं मिलते और बहुत महँगे और बहुत ख़राब मिलते हैं। गरमी बहुत, कम-से-कम बिजनौर से ज्यादा पड़ती है। पानी भी इतना अच्छा नहीं है। हवा अलबत्ता ख़ूब चलती है। आदमी भी कुछ अच्छे मालूम नहीं हुए। इस यात्रा में भोजदेव की नगरी—धार— देखने का सौभाग्य प्राप्त हो गया। बहुत दिनों की इच्छा थी। मांडू भी विचित्र स्थान है पर धार को देखकर जो भाव मन में उठ रहे थे, कह नहीं सकता, लिखना तो और भी कठिन है। जगह-जगह बैठकर रोने और ज़मीन पर लेटने को जी चाहता था। सीतामऊ और मंदसौर (कालिदास की जन्मभूमि) देखकर चित्तौर, उदयपुर जाने का विचार है। मिस्टर बापना भी ७, ६ को वहाँ जा रहे हैं। उनके साथ देखने का सुभीता रहेगा। अफ़सोस है, महाराणा चल दिये, पुराने ज़माने के क्षत्रियों की यादगार मिट गई।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८९

C/O मध्यभारत हिन्दी साहित्य-समिति, इन्दौर
२-६-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपका ३०-५ का कृपा-पत्र आज मिला। इस बीच में मेरा एक और पत्र भी पहुँचा होगा। 'फ़ास्ट' को मैं बराबर पढ़ता आया हूँ। अनुवाद बहुत अच्छा किया है। तुर्गनेव का संस्कृतीकरण तुरगनेय करने की सूचना मैंने आपको एक पत्र में दी थी। 'प्रेम कवि', 'वीरा' जब संस्कृत शब्द गढ़ लिये हैं, तो 'तुरगनेय' भी सही। अस्तु !

दो वर्ष से वर्षा यहाँ अच्छी नहीं हुई। पानी की बहुत कमी है। आगरे की अपेक्षा तो यहाँ अब भी बहुत ठण्ड है। फिर भी यहाँ की आबोहवा बहुत अच्छी नहीं है। आबोहवा का बैलैन्स ठीक नहीं है। पानी कम और हवा ज़रूरत से ज़्यादा है। पुराने कवियों ने हवा में जो शीतल, मन्द, सुगन्ध ये तीन गुण माने हैं, उनका औचित्य यहाँ की हवा को देखकर मालूम होता है। आँधी चलती है। कभी-कभी तो मालूम होता है चारपाई उलट जायगी। लिखते वक़्त काग़ज़ को दबाकर लिखना पड़ता है। काग़ज़ उड़ने लगता है, ध्यान बट जाता है। पानी में स्वाद नहीं, भारी है। हर चीज़ कलकत्ते से भी महँगी है, खासकर 'न्यायी ब्राह्मण' तो बहुत महँगे हैं। शाक-भाजी भी अच्छी नहीं मिलती। घी घासलेटी है। मजदूर तो बहुत महँगे हैं। एक चीज भी, सिवाय हवा के, सस्ती नहीं। लोग कहते हैं पहले ऐसा नहीं था। यह कहावत पहली है—

"मुल्क मालवा गहर गँभीर। मग-मग रोटी पग-पग नीर ॥"

मुझे तो यह प्रदेश इसलिए अच्छा मालूम होता है कि विक्रम, कालिदास और भोजदेव की जन्मभूमि है। आर्य संस्कृति की और संस्कृत भाषा की लीला-भूमि रही है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

९०

C/O मध्यभारत हिन्दी साहित्य-समिति, इन्दौर
६-६-३० (रात के १२ बजे)

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपके पत्र का उत्तर 'फ़ास्ट' पर सम्मति भेज चुका हूँ। आज कई दिन के बाद कीबे साहब से मिलने गया था। आपका नमस्कार उन तक पहुँचाना था। सेवकजी श्री द्वारकाप्रसादजी 'सेवक' से तो नमस्ते कल ही कह दी थी। कीबे साहब को मैंने अपनी पुस्तकें (सतसई, पद्म-पराग, प्रबन्ध-मंजरी) भेंट की थीं। आज मिलते ही पुस्तकों

की चर्चा उन्होंने छेड़ी, मैं आपके ग्रन्थ बड़े चाव से देख गया हूँ। चित्त बहुत ही प्रसन्न हुआ। ग्रन्थों में मौलिकता है। भाषा सरल और हृदयग्राही है। सतसई में अपूर्व पाण्डित्य है—इत्यादि बहुत-सी दाद दिल खोलकर दे डाली। फिर कहा, 'पद्म-पराग में सत्यनारायणजी पर लेख पढ़कर उनका स्मरण हो आया। उनका इन्दौर-सम्मेलन के समय का वह मधुर कविता-पाठ अब भी मेरे कानों में गूंज रहा है।" यह बात कीबे साहब ने कई बार कही। कहते समय उनके चेहरे पर उत्सुकता और खेद के भाव झलक रहे थे। मालूम होता था वह ध्यान-दृष्टि से सत्यनारायणजी को देख रहे हैं, उनके मधुर गान की ध्वनि इनके कानों में गूंज रही है और अब उन्हें न पाकर वियोग-दुःख का अनुभव कर रहे हैं। कीबे साहब की इस सहृदयता ने मुझे मुग्ध कर दिया। सत्यनारायणजी की याद से जी भर आया। मुश्किल से अपने को सँभाला। फिर मैंने आपका सन्देश नमस्कार कहा। कहने लगे, "चतुर्वेदीजी बड़ी कृपा करते हैं! 'विशाल भारत' बहुत ही अच्छा पत्र है। मैं उसे बराबर पढ़ता हूँ। आपके लेख भी मैं उसमें ध्यान से पढ़ता रहा हूँ। आपकी भाषा बड़ी सरल है और मनोहर होती है। महात्मा गांधी भी ऐसी भाषा चाहते हैं, जो सुबोध हो। आपकी भाषा में फ़ारसी-उर्दू के बहुत-से शब्द हमारी समझ में नहीं आते, पर उनका प्रयोग भला मालूम होता है। यद्यपि हज़ार में दस-पाँच ही शब्द ऐसे होते हैं। बाक़ी तो ख़ूब समझ में आ जाते हैं।"

महात्मा गांधी के गीतानुवाद के लिए शायद मैंने आपको पहले पत्र में लिखा था, वह अनुवाद पोद्दारजी ने कलकत्ते से घर के पते पर मेरे पास भेजा था। वहाँ से यहाँ आ गया है। मैं उसे ध्यान से पढ़ रहा हूँ। अनुवाद साधारणतया बुरा नहीं है। पर जहाँ महात्माजी ने गीता की दार्शनिक गुत्थियाँ सुलझाने का प्रयत्न किया है, वहाँ अवसर गड़बड़ा गये हैं। अपने मनमाने सिद्धान्त से गीता-वर्णित सिद्धान्तों का सामंजस्य या समन्वय नहीं कर सके हैं (यथा अहिंसा सिद्धान्त का समन्वय)। महात्माजी महात्मा तो हैं पर तिलकजी की तरह दार्शनिक नहीं हैं। बल्कि दार्शनिक हैं ही नहीं। आर्य-दर्शनशास्त्र का उन्हें परिचय नहीं है। वह तो रस्किन और टॉलस्टॉय के विशेषज्ञ हैं। श्रद्धालु भक्त हैं। तपस्वी और संयमी हैं और बस। आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

६१

C/O हिन्दी प्रेस, प्रयाग

१५-८-३० शुक्रवार

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

बहुत दिनों बाद आपका ७-८ का कृपा-पत्र कल शाम को यहाँ मिला।

'आकाशदीप' की आलोचना मैंने पढ़ ली और कई सज्जनों को पढ़ाई, सुनाई। आपने कलम तोड़ दी है, कमाल किया है। कल 'लीडर' के प० केशवदेवजी शर्मा मिले थे। बड़े सहृदय सज्जन हैं, उनसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई। किसी तरह सन्तोषजनक रीति से कहीं 'पद्म-पराग' का द्वितीय भाग छप जाय तो 'सतसई' को पूरा करने का विचार है। बहुत-से मान्य सज्जनों का आग्रह है। जी तो चाहता नहीं, पर एक बार प्रयत्न करके देखूंगा। हो गया तो हो गया, फिर साहित्य-सेवा से सदा के लिए छुट्टी लूँगा।

श्री गांगेयजी को प्रोत्साहित करके सम्मेलन के अधिवेशन को सफल बनाने का पूरा प्रयत्न कीजिए। जब निमंत्रण दे दिया है तो उसे निबाहना चाहिए। मैं भी उन्हें लिखूंगा। हिन्दी साहित्य-सम्मेलन का दिवाला निकल रहा है। एक अपील निकली है आपने देखी ही होगी, उस पर भी कुछ लिखिए। 'आकाशदीप' की यथार्थ समालोचना के लिए बधाई देता हूँ। मुझे और दूसरे लोगों को आपकी यह समालोचना बहुत ही पसन्द आई है। पोखरवाली मिसाल बड़े ग़ज़ब की है, उसके पहले गन्दी विशेषणता दी होती तो और अच्छा होता।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६२

C/O हिन्दी प्रेस, प्रयाग
ता० २२-८-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपका कार्ड मिला था, पर श्री हृषीकेशजी का ब्लाक आज तक नहीं पहुँचा। या तो मिला नहीं या बहुधंधी धन्यकुमारजी भूल गये। मिल गया हो तो तुरन्त भिजवाइये।

जुलाई की 'माधुरी' में प० उमरावसिंहजी चतुर्वेदी का लेख मार्के का निकला है। इसी अंक में 'प्रबन्ध-मंजरी' की समालोचना निकली है। प० भवभूतिजी को पढ़ने के लिए वह दे दीजिए। मैंने उन्हें सूचना दे दी है। प० विष्णुदत्तजी शुक्ल का १५-८ का कार्ड मुझे आज ही यहाँ मिला है, घर के पते पर भेजा था। उन्हें सोचकर उत्तर दूंगा। कार्ड की पहुँच उन्हें पहुँचा दीजिए। प० ज्वालादत्तजी शर्मा ने लेख भेजने का वादा किया है। कल प० देवीदत्त शुक्ल, सरस्वती-सम्पादक से मिला था। वह भी 'आकाशदीप' की समालोचना को सराह रहे थे। 'प्रसाद' जी की अटपटी

कहानियाँ उनकी समझ में भी नहीं आतीं। समालोचना के लिए आपकी प्रशंसा करते थे, यह समालोचना वास्तव में आप से बहुत अच्छी बन पड़ी है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६३

C/O हिन्दी प्रेस, प्रयाग
२९-८-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपको पत्र लिखकर मैं ग़ाजीपुर और काशी चला गया था, परसों २७-८ को यहाँ लौटा हूँ।

काशी में याज्ञिकजी (प्रो० जीवनशंकर याज्ञिक) ने इस बार बड़े ही सद्भाव और सौजन्य का परिचय दिया। बहुत ही आत्मीयता का व्यवहार किया। एक रात उनके पास रहा। वह बराबर साथ रहे, स्टेशन पर पहुँचाने आये। दो बजे दोपहर का वक़्त था। मैं शिवप्रसादजी के सेवा-उपवन में उतरा था। वह अपने होस्टल से एक बजे पैदल सख़्त धूप में वहाँ आये और मेरे साथ स्टेशन तक गये। उनके इस प्रेमपूर्ण व्यवहार ने मुझे मुग्ध और विस्मित कर दिया। अंग्रेज़ी का ऐसा विद्वान होकर इतनी भारतीयता और सहृदयता-आश्चर्य है। आपके द्वारा ही उनसे परिचय हुआ था, सो आपका आभारी हूँ। 'कल्याण' के रामायणांक में उनके दो सुन्दर निबन्ध निकले हैं। अवकाश मिले तो पढ़िये। 'आकाशदीप' की समालोचना उन्हें भी बहुत पसन्द है। उसे जिसने भी पढ़ा है उसी ने तारीफ़ की है; जिन्होंने नहीं पढ़ा था ऐसे बहुत-से सज्जनों से मैंने पढ़ने का अनुरोध किया है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६४

C/O हिन्दी प्रेस, प्रयाग
११-९-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपका ६-९ का कृपा-पत्र कल मिला। मेरे कई पत्रों का उत्तर आपने बहुत दिनों बाद दिया, कई प्रश्नों को आपने 'टच' नहीं किया। आप अक्सर ऐसा ही करते हैं, यह आपका स्वभावसिद्ध अधिकार हो गया है। खैर, अब उन बातों को क्या दोहराऊँ। सच तो यह है कि मैं खुद भी भूल गया कि क्या-क्या लिखा था। अब फिर याद करके

लिखूं भी तो क्या फ़ायदा। आप फिर उन्हें 'ताक़े-निसिया' में डाल देंगे। अस्तु, अब आपके पत्र का उत्तर देना ही मुनासिब होगा। प० रामजीलालजी शर्मा की मृत्यु सचमुच एक बड़ी ही शोकजनक दुर्घटना हो गई। बड़े काम के और गुणी पुरुष थे। व्यवहार-कुशल, गम्भीर, मर्मज्ञ, प्रसन्न-वदन, सज्जन और यारबाश आदमी थे। ऐसे आदमी बहुत कम होते हैं। मेरे हृदय को तो उनकी मृत्यु से बड़ा आघात पहुँचा है। प० रामजी लाल शर्मा अपनी जगह हमेशा के लिए ख़ाली कर गये। उनके संस्मरण में 'विद्यार्थी' का एक विशेषांक निकल रहा है। उसके लिए एक लेख आप भी ज़रूर लिखिए।

'विशाल भारत' के साहित्यांक के लिए कुछ-न-कुछ ज़रूर भेजूंगा। प० रुद्रदत्तजी के संस्मरण लिख सकूंगा कि नहीं, कह नहीं सकता। प्रयत्न करूँगा। कल १२ ६ को यहाँ आये हुए मुझे पूरा एक महीना हो जायगा। इस बीच में तबीयत बहुत ही परेशान रही।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

९५

काव्य-कुटीर, नायक नगला

१४-१०-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

उस दिन आपसे कुछ भी बातें न हो सकीं। अवसर ही ऐसा था। विपत्ति में ढारस या सान्त्वना देने का साहस भी न हुआ। आपकी इस विपत्ति पर जी कुढ़ रहा है। जीवन का प्रोग्राम ही बदल गया। जब सोचता हूँ, दुःख होता है। इस दशा में क्या साहित्य-सेवा होगी और क्या प्रवासियों की सुध ली जायगी! न घर पर रहते बनेगा, न बाहर। उस दिन का देवकी (प० बनारसीदासजी की सुपुत्री) का रोना याद करके रोना आता है। मातृ-विहीन बच्चे को देखकर बड़ी वेदना होती है।

प्रिय पटे से भी मिलना न हो सका। अब तो वह अच्छे होंगे। मेरी राय में उन्हें कलकत्ते ले जाना ठीक न होगा। वहाँ की आब-हवा अच्छी नहीं है।

आप कब तक कलकत्ते पहुँचेंगे। पिताजी से, पटेजी से और प० देवीप्रसादजी से नमस्कार कहिए। समाचार लिखिए।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

९६

काव्य-कुटीर, नायक नगला
१८-११-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

दोनों कृपा-कार्ड और अक्तूबर का 'विशाल भारत' का एक अंक एक साथ मिले। यह अंक बहुत अच्छा निकला है। कई लेख महत्त्वपूर्ण है। हरिशंकरजी का लिखा लेख 'विदेशी रेल' 'स्वदेशी रेल' का करारा जवाब है। खूब लिखा है। यह अंक, शौकत थानवी के पास भेजना चाहिए। शिकारी-लेखक (प० श्रीराम शर्मा) की कहानियाँ बहुत ही सुन्दर हैं, उनसे और भी लेख लिया कीजिए। साहित्य-सेवी और साहित्य-चर्चा बहुत अच्छा रहा। इसी की जरूरत है, उर्दू पत्रों में ऐसी चर्चा रहती है। प० माधवप्रसादजी गद्य के बड़े ओजस्वी लेखक थे, पद्य तो उनके ऐसे नहीं होते थे। पर गद्य खूब लिखते थे। उनके कुछ गद्य-लेखों का संग्रह 'सुदर्शन' से लेकर प्रकाशित हो सके तो अच्छा है। सुना है, गुलेरीजी के लेख कोई सज्जन प्रकाशित कर रहे हैं। आप कुछ-न-कुछ चर्चा चलाते रहिए, शायद किसी के कान पर जूँ रेंग जाय या '**कबहू दीनदयाल के भनक परेगी कान**' वाली बात हो जाय। वैसे तो आजकल के 'स्वयम्भू आचार्य' और 'हिन्दी के धनीधोरी' पुराने लेखकों को कुछ समझते ही नहीं! जो कुछ हैं वह खुद हैं या उनके पिट्ठू। श्यामसुन्दरजी ने प० माधवप्रसादजी का नाम भी नहीं लिया। इससे अधिक अज्ञान, पक्षपात और अविवेक क्या होगा। ऐसे ही वृथापुष्ट पोथे हिन्दी का इतिहास कहकर पब्लिक के गले मढ़े जाते हैं। साहित्यिक पतन की पराकाष्ठा हो गई! विश्व कविजी के अंकित चित्र भी छायावादी चित्र हैं। चित्र का कान और मुंह तो कुछ समझ में आता है पर उसमें जो एक मोटा-सा शहतीर बना दिया है, वह क्या बला है? सम्भव है, उन्होंने अपनी किसी यात्रा में ऐसा अद्भुत जन्तु देखा हो, और इसमें कुछ चित्र-चातुरी भी हो। मुझे तो छायावादी पहेली मालूम होती है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

९७

काव्य-कुटीर, नायक नगला
१८-१२-३०

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

मेरे पहले पत्र पहुँचे होंगे। नवम्बर का 'विशाल भारत' मिला। 'चिड़ियाघर' की चर्चा आपने खूब की है, अच्छी दाद दी है। जब मुझे मालूम हुआ कि आप

'चिड़ियाघर' की समालोचना करने जा रहे हैं तो मैंने जल्दी-जल्दी में 'चिड़ियाघर' का उद्घाटन (भूमिका) लिखकर हरिशंकरजी को भेजा कि इसे भी पुस्तक में जोड़ दो और चतुर्वेदीजी के पास भेज दो पर वह वक़्त पर न पहुँच सका। ख़ैर, आपने बहुत अच्छी, क़ाबिले दाद, दाद दी है। प० रामजीलाल शर्मा के संस्मरण मालूम नहीं प्रयाग से आपके पास पहुँचे कि नहीं।

एण्ड्रूज़ के संस्मरणों में सरोजिनी नायडू का उल्लेख बड़े ही मार्मिक ढंग से किया है, पढ़ेंगी तो दाद देंगी। श्रीरामजी का लेख इस बार भी बहुत अच्छा है, इनसे बराबर लेख लेते रहिए। वह आजकल कहाँ हैं? प० माधवप्रसाद मिश्र की चर्चा आपने ख़ूब छेड़ी। यह 'विशाल भारत' के आनन्दराव जोशी क्या वही हैं जिन्होंने मंगलाप्रसाद पारितोषिक पर लेख लिखा था। आपका इनसे परिचय हो तो एक पत्र लिख दीजिए, इन्हें 'पद्म-पराग' भेजना चाहता हूँ। किसी मराठी पत्र में 'समालोचना' कर देंगे। इनका पता भी लिख दीजिए।

प्रोफ़ेसर रामदेवजी ने संस्मरणों का तांता बाँध दिया मालूम होता है। इसी रूप में अपनी ऑटोबायोग्राफ़ी ख़त्म कर देंगे। वे बहुत-सी बातें निराधार और असत्य लिखते हैं, प्रत्येक घटना में आत्मश्लाघा की बदबू रहती है। महात्मा हंसराज की पार्टी के सम्बन्ध में और ख़ुद अपनी पार्टी के बारे में भी बहुत-सी अनर्गल बातें लिख मारी हैं। इससे बहुत-से लोग नाराज़ हैं। इस ओर आपका ध्यान दिलाने का अनुरोध कई बार कई सज्जनों ने किया है। आज अचानक याद आ गई सो लिख दिया। आगे आप जानें।

मुन्शी महाराज बहादुर 'बर्क़' की एक नज़्म सटिप्पन भेजता हूँ। और भी एक है, पीछे भेजूंगा। पसन्द आवे तो छाप दीजिए।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

६८

काव्य-कुटीर, नायक नगला

चाँदपुर (बिजनौर)

५-१-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

यहाँ आकर गांगेयजी का सम्मेलन के सम्बन्ध में विस्तृत पत्र मिला। वह मुझे वहाँ बुला रहे हैं और आपसे डटकर आन्दोलन करने के लिए प्रार्थना करने का अनुरोध किया है। कलकत्ते में सम्मेलन बुलाने की सम्मति मैंने भी दी थी, आप तो सहमत न थे। पर समर्थन आपने भी कर दिया था। इसलिए ज़िम्मेदारी हमारी भी है। सो

आप से निवेदन, अनुरोध और प्रार्थना है कि आप गांगेयजी से सर्वात्मना सहयोग कीजिए। बिना आपके सहयोग के काम न चलेगा। दूसरी पार्टी स्वार्थवश धाँधली कर रही है। उसका प्रतिकार कीजिए और सम्मेलन को सफल बनाने की पूरी चेष्टा कीजिए। निःसन्देह इसमें आपको गालियाँ सुननी पड़ेंगी, पर इसकी परवा न कीजिए खर, जो होगा देखा जाएगा पर आप सम्मेलन को सफल बनाने का प्रयत्न कीजिए। टंडनजी को लिखिए वह एक बार कलकत्ते पहले ही हो जावें, पार्टियों के विरोध को शान्त करें। श्री वाजपेयीजी और बा० मूलचन्दजी को भी प्रेरणा कीजिए। आप इधर ध्यान देंगे तो सफलता अवश्य होगी।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६३

काव्य-कुटीर, नायक नगला
१६-१-३३

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

७-१-३१ का कृपा-पत्र यथासमय मिल गया था अनुगृहीत हुआ। आप जिस परिस्थिति में काम कर रहे हैं, यह आप ही का हौसला है। मैं तो उसके ध्यान मात्र से विचलित हो जाता हूँ। 'लीडर' की पुरस्कार की बात से—दूसरे महीने का पुरस्कार अन्त्येष्टि में लगा—दिल पर एक चोट लगी। ऐसी घटनाएँ बड़ी हृदय-विदारक होती हैं। जीवन को भारभूत बना देती हैं। उर्दू के एक कवि ने सच ही कहा है—

"हरनफ़स आह और अनफ़ास पै जीने का मदार,
जिन्दगी आहे-मुसलसल् के सिवा कुछ भी नहीं।"

जीना क्या है, दुःखों का भार ढोना है. जो ढोना ही पड़ता है, लाचारी है। उर्दू-हिन्दी के साहित्य-सेवियों की सच्ची जीवनी लिखी जाय, तो दुःख गाथाओं का एक भारी पोथा बन जाय। ग़ालिब और अकबर यही रोना रोते-रोते मर गये। शंकरजी और द्विवेदीजी (स्व० महावीरप्रसाद द्विवेदीजी) का भी यही हाल है। मैंने द्विवेदीजी को प्रबन्ध-मंजरी' और 'पद्म-पराग' अब भेजा था। बहुत दिनों से पत्र-व्यवहार बन्द था। उनका जो पत्र आया उसकी नकल भेजता हूँ। कौटुम्बिक व्याधियों से व्यथित हैं। भगवान् यम के आदेश की प्रतीक्षा कर रहे हैं। पढ़कर जी भर आया। साहित्य-सेवियों की जीवनी में दुःख-ही-दुःख भरा है। आप मेरी जीवनी की घटनाओं के हिंट्स माँग रहे हैं; क्या लिखूँ, कुछ हो भी। आपके पत्र से प्रेरित होकर मैंने अपने जीवन की घटनाओं पर दृष्टि डाली तो पुराने ज़ख्म ताज़ा हो गये। कई घटनाओं की स्मृति ने तड़पा

दिया, कवि की इस उक्ति का अनुभव करा दिया—

"वायनादानी कि वक्ते-मर्ग यह साबित हुआ,
ख्वाब था, जो कुछ कि देखा जो सुना अफ़साना था।"

रात-भर में यही सोचता रहा। आपबीती लिखूं तो क्या लिखूं। कई आत्मीय और मित्रों के वियोग की दुःखदायक घटनाएँ, सिनेमा के चित्रों की तरह, आँखो के आगे फिर गईं। भयभीत कर दिया। कहीं-से-कहीं पहुँचा दिया। कई घटनाओं पर लिखने को जी चाहने लगा। कुछ दिन जीवन और रहा तो कुछ घटनाओं पर लिखने का विचार है।

सन्-संवत् याद रखने में मेरी स्मरण-शक्ति बहुत ही निर्बल है। जो मालूम हो सका है, सन्-संवत् के हिसाब से नोट करता हूं। कोई बात ऐसी उल्लेख योग्य तो है नहीं, पर आपने जिस ढंग से अनुरोध किया है, उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। आप मुझे ख्वाहमख्वाह ठोक-पीट कर वैद्यराज बनाना चाहते हैं, वर्ना 'हमारी ज़िन्दगी क्या और हम क्या' वाली बात है। मुझे तो इस तरह पब्लिक में आते डर लगता है, पर देखता हूँ आप मुझे भी छापे में छपाकर ही छोड़ेंगे।

आजकल मेरी मानसिक दशा बहुत ही निर्बल क्या दयनीय-सी हो रही है। रामनाथ की माता चार महीने से बराबर बीमार हैं, दशा चिन्ताजनक हो रही है। इससे चित्त किसी भी काम में नहीं लगता। न कुछ लिखा जाता है न पढ़ा जाता है। उत्साह जाता रहा है। कभी-कभी तो द्विवेदीजी की तरह भगवान् यम के आदेश की राह बड़ी उत्सुकता से देखने लगता हूँ, पर इसमें भी सन्देह है कि उस दशा में भी कौन जाने क्या होगा!

"अब तो घबरा के कहते हैं कि मर जायँगे,
मर के भी गर चैन न पाया तो किधर जायँगे!"

एकेडेमी का लेक्चर इस हाल में किस तरह लिखा जाता? रह गया, उन्हें सूचना दे देता हूँ कि तैयार न हो सकेगा, मजबूरी है—

"क्या लिखे इन्सान और क्या पढ़ सके,
जी ठिकाने हो तो सब कुछ हो सके।"

काशी नागरी प्रचारिणी सभा के गत उत्सव पर जो भाषण कीबे साहब ने दिया था वह आपने पढ़ा होगा, उसमें स्व० सत्यनारायणजी का उल्लेख बड़े अच्छे शब्दों में है। वर्तमान हिन्दी कविता पर भी अच्छे विचार प्रकट किये हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१००

राजामंडी, आगरा
१६-३-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार ।

१४-३ का कार्ड आज मिला। माताजी के स्वर्गवास का हाल पहले ही मालूम हो चुका था, बड़ा दुःख हुआ। प्रिय पटेजी से परसों शाम बोर्डिंग में मिला था। क्या किया जाय, ईश्वर की मर्जी के आगे किसी की नहीं चलती। रो-धोकर बैठ रहने के सिवा चारा क्या है। सन्तोष कीजिए, सब्र कीजिए और क्या कहा जाय। पटे का विवाह अब जल्दी हो जाना चाहिए। आपकी शोचनीय स्थिति का ध्यान करके चित्त उद्विग्न हो जाता है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०१

C/O आर्यमित्र, आगरा
१-४-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार ।

मैं अभी तक यहीं पड़ा हूँ। मेरा पिछला पत्र एक कटिंग के साथ मिला होगा। बड़े ही दुर्भाग्य की बात है कि प्रतापी विद्यार्थीजी सत्यानाशी हिन्दू-मुस्लिम समझौते की भेंट हो गये। समझौते के इस प्रयत्न में हिन्दुओं की अपार हानि हो रही है। कानपुर में तो यह समझौता बड़ा ही महँगा पड़ा। विद्यार्थीजी की हानि किसी तरह भी पूरी न होगी। यह दुर्घटना बड़ी ही हृदय-विदारक है। हा हन्त !

'विशाल भारत' में एक नाम बार-बार आता है 'अद्धेन्द्रकुमार'। शुद्ध नाम 'अर्द्धेन्दुकुमार' मालूम होता है। अर्धेन्दु शिवजी का नाम है। जिनके मस्तक पर आधा चन्द्रमा है। 'जगाने वाले झकोले' में 'खँडर' का 'खण्डहर' छपा है, जिसके पढ़ने में धचका लगता है। उर्दू वाले खँडर लिखते-बोलते हैं। जयचन्द्रजी का लेख अच्छा है। पारसनाथजी की भूल भी मज़ेदार है। हिन्दी के प्रथम समाचारपत्र की खोज आपने ख़ूब की। पत्रोत्तर घर के पते पर दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०२

काव्य-कुटीर, नायक नगला
७-४-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

मैं परसों मकान पर पहुँचा हूँ। कल शाम के वक़्त आपका कृपा-पत्र मिला। रास्ते में दो दिन कविजी (प० नाथूराम शंकर शर्मा) से मिलने में लगे। सम्मेलन के सभापतित्व का जो निर्णय हो गया, अच्छा ही है। हक़ तो प० श्यामविहारी मिश्रजी का था, या प० रामचन्द्र शुक्ल का था। 'सम्मेलनांक' के लिए समय थोड़ा रह गया है, ख़ैर, अब तो गले पड़े ढोल को बजाना ही पड़ेगा। सम्पादकाचार्य (प० रुद्रदत्त शर्मा) के संस्मरण जैसे चाहिएँ न बन पड़ेंगे, फिर भी यथाशक्ति प्रयत्न करूँगा। संस्कृत पढ़ने की आवश्यकता पर भी चि० काशीनाथ से कुछ लिखवाऊँगा। संस्कृत पर काशीनाथ का लेख दस-पाँच दिन में ज़रूर भिजवा दूँगा। प० व्रजमोहन दत्तात्रेय 'कैफ़ी' पर कुछ लिखने के विचार से उनसे कुछ हिंट्स् मँगाये थे। कुछ मसाला लेकर वह एकेडमी के उत्सव पर प्रयाग भी पहुंचे थे, वहाँ उन्होंने मुझे मिलने के लिए भी बुलाया था। पर मैं वहाँ न जा सका। यदि उन्होंने कुछ मसाला और भेज दिया तो एक छोटा-सा लेख उन पर भी लिखूंगा। अप्रैल के अन्त तक लेख भेजने की कोशिश करूँगा। पारसनाथजी से एक लेख रवीन्द्र पर लिखवाइये। वह रवीन्द्र के विशेषज्ञ हैं, अच्छा लिखेंगे। हाँ, एक लेख बा० घासीरामजी, एम० ए० से ज़रूर लीजिए। आर्यसामाजिक विद्वानों में वह सबसे अच्छा लिखते हैं, बड़े सहृदय हैं। और भी कोई बात सूझेगी तो लिखूंगा। फ़रवरी के 'हंस' में ५४ पृष्ठ पर 'साहित्य का ऋण' शीर्षक मुंशी (श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी) के भाषण का सार है। बहुत अच्छा है। 'साहित्यांक' में उद्धृत कीजिए, मिल सके तो पूरा भाषण मँगवाकर उसका अनुवाद कीजिए, बहुत ही सुन्दर लेख है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०३

काव्य-कुटीर, नायक नगला
२९-४-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

२४-४ का कृपा-पत्र मिला। संस्कृत वाले लेख में एक बात छूट गई। बंगाल और युक्त प्रान्त के स्कूलों से संस्कृत एक प्रकार से निकाल दी गई है। इससे संस्कृत-प्रचार में भारी बाधा पहुँचेगी। इस पर आन्दोलन होना चाहिए। लेख में इस बात का उल्लेख कहीं कर दीजिए या सम्पादकीय नोट दे दीजिए।

श्रीयुत् कृष्णबल्देवजी की मृत्यु का समाचार सुनकर बड़ा दुःख हुआ। 'विशाल भारत' में उन पर भी कुछ लिखिए और फोटो दीजिए। हिन्दी संसार पुराने लेखकों से खाली होता जा रहा है। यह भी दुर्भाग्य की बात है। श्रीयुत् बृजमोहन वर्माजी से मेरी ओर से सहानुभूति प्रकट कर दीजिए।

सम्पादकाचार्यजी (प० रुद्रदत्त शर्मा) के सम्बन्ध में साहित्यांक में कोई नोट देना चाहें तो उनकी जन्म-तिथि मार्गशीर्ष १३ (त्रयोदशी) संवत् १९११ वि० थी। मास के पक्ष का उल्लेख नहीं मिलता। मृत्यु की तारीख़ 'मुसाफ़िर' आगरे में १७ नवम्बर सन् १९१९ लिखी है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०४

नायक नगला, बिजनौर
२२-५-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

सुना है, 'माडर्न रिव्यू' में कोई सम्पादकीय लेख हिन्दी के विरोध में निकला है। सम्मेलन के दिनों में तो यह और भी बुरा हुआ। मालूम होता है कि यह बंगाली विद्वान् हिन्दी को राष्ट्रभाषा होना कभी स्वीकार न करेंगे। 'विश्वभारती' से मेरे पास एक पत्र आया था, पुस्तकें माँगी थीं। मैंने उसके उत्तर में एक कार्ड भेजा था। दुर्भाग्य से पता हिन्दी में था, कार्ड बिना पढ़े ही मिलिन्दजी को मुरार के पते पर लौटा दिया गया। मिलिन्दजी ने उसे मेरे पास भेजा है, कार्ड भेजता हूँ। उस पर मिलिन्दजी ने जो कैफ़ियत लिखी है, उसे ध्यान से पढ़िए और उस पर उचित कार्रवाई कीजिए। मुझे तो 'विश्वभारती' पर इस दुर्घटना के कारण क्षोभ है। मेहर साहब हिन्दी के भी प्रेमी थे। वेदान्त के असाधारण विद्वान् थे। महाकवि थे। संस्कृत के पंण्डित थे। इन पर एक लेख 'विशाल भारत' में भेजूँगा। जबसे उनकी मृत्यु का दुःसमाचार पढ़ा है, चित्त बड़ा ही खिन्न है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०५

नायक नगला, बिजनौर
१४-६-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपका २-६-३१ का 'अदनोपवन' वाला पेन्सिली पत्र यथासमय मिल गया था। मैं बहुत दिनों से बराबर अस्वस्थ हूँ। पत्र लिखने में कष्ट होता है, इसलिए

आपके पत्र का समय पर उत्तर न दे सका। पटे के विवाह का निर्णय बहुत जल्दी में हुआ इसी कारण आप वक़्त पर सूचना न दे सके, यह तो मैं पहले ही समझ गया था। ख़ैर, विवाह सानन्द हो गया, यह ख़ुशी की बात है। कल 'विशाल भारत' का साहित्यांक मिला। इतनी देर से क्यों निकला, या मेरे ही पास देरी से पहुँचा? अंक अच्छा निकला, पर इससे भी अच्छा निकलना चाहिए था। डाक्टर ईश्वरीप्रसादजी से लेख आपने ख़ूब लिया, बहुत अच्छा लिखा है। यदि आप अपने 'हमारा साहित्यांक' नोट में डा० लिखकर बात साफ़ न करते तो मैं तो न समझ सकता कि श्री ईश्वरी प्रसाद कौन हैं। उनके नाम के साथ लेख-सूची में, शीर्षक के नीचे डाक्टर, पण्डित, शर्मा कुछ नहीं लिखा। प्राचीन भारतीय ढंग के अनुसार तो यह निरा गँवारपन है, अंग्रेज़ी सभ्यता में चाहे यह बात अच्छी समझी जाती हो। कम-से-कम ऐसे प्रतिष्ठित लेखक के नाम के साथ तो पूरी उपाधियाँ देनी चाहिएँ, इसका पाठकों पर प्रभाव पड़ता है। नाम की महिमा से ही प्रभावित होकर बहुत-से पाठक लेखों को ध्यान से पढ़ते हैं, फिर डाक्टर ईश्वरीप्रसादजी तो 'विशाल भारत' के पाठकों के लिए नये थे, उनका नाम ही लिखना ठीक न हुआ। यह मेरी राय है, सम्भव है, आपकी राय में यही 'गँवारपन' हो जो मैं लिख रहा हूँ।

श्री वाजपेयीजी का लेख भी मौक़े का है। वाजपेयीजी से पुराने साहित्यिकों के संस्मरण और लिखाइए। वाजपेयीजी ने 'स्वतंत्र' में सम्मेलन पर लिखते हुए सभापति के स्वागत-सत्कार में एक बात बड़े मज़े की लिखी थी कि रत्नाकरजी को भी ऐसे स्वागत-सत्कार की प्राप्ति का अवसर इससे पहले कभी न प्राप्त हुआ होगा! वाजपेयीजी जो लिखते हैं, खरी बात लिखते हैं—"रत्नाकरजी का भूधराकार शरीर फूलों के बोझ से दब गया था" यह बात वाजपेयीजी के उसी लेख से मालूम हुई थी। 'रत्नाकर' जी का भाषण ख़ासा हुआ। मुझे तो वह आशातीत अच्छा मालूम हुआ। उनसे ऐसी आशा न थी। टॉलस्टॉय ने 'डार्लिंग' की समालोचना में बाइबिल की जिस मनोरंजक कहानी का उल्लेख किया है, मुझे तो वही बात रत्नाकरजी के इस भाषण पर 'लागू' होती मालूम होती है।

वाग्देवता ने अभिशाप के बदले आशीर्वाद दिलवा दिया, यानी कविता और भाषा के बारे में उन्होंने साफ़-साफ़ बातें कहने का साहस दिखा दिया। आपने यह नया सिलसिला ख़ूब शुरू किया है कि कौन कैसे पत्र लिखता है। यदि इस प्रसंग में मैं आपके पत्र-लेखन की विशेषता पर कुछ लिखूँ तो उसमें यह ज़रूर लिखूं कि चतुर्वेदीजी सब पत्रों का उत्तर तो कभी देते ही नहीं! जिस पत्र का उत्तर देते भी हैं तो बहुत दिनों बाद, जब उस उत्तरणीय पत्र की बातें या तो बासी हो जाती हैं या उन्हें भूल जाती हैं। इसलिए आधी-तिहाई बातों का अधूरा उत्तर देते हैं, निःसन्देह जिस बात

का उत्तर देते हैं वह पर्याप्त रोचक और काफ़ी अच्छा होता है इत्यादि।

सम्मेलन के मौके पर मैंने आपको लिखा था कि मेहर साहब की मृत्यु पर शोक-संवेदना प्रकट करने की याद सम्मेलन वालों को दिला दीजिए। पर शोक-सूची में उनका नाम नहीं देखा गया। मेहर साहब संस्कृत, वेदान्त के अद्वितीय विद्वान् थे।

आपने लिखा था कि प्रो० पूर्णसिंहजी का फ़ोटो आपको मिल गया है, वह लेख के साथ छपेगा, पर न छपा। ख़ैर, और सुनिए प० सतीशचन्द्र राय एम० ए० की मृत्यु हो गई! उनके पुत्र का पत्र भेजता हूँ, इसे एक बार पढ़ जाइये। उन पर कुछ लिखा जाना चाहिए। उनके पुत्र को मैंने आपके पास फोटो और हिन्ट्स भेजने को लिखा है। मैं भी कुछ लिखूंगा। बड़े अच्छे विद्वान् थे। सरलता-सहृदयता की मूर्ति थे। अफ़सोस न रहे! उर्दू लेखकों में आजाद, नजीर अहमद शिबली, अमीर मीनाई, अकबर इत्यादि के पत्र-समूह पुस्तकाकार छपे हैं, जिनमें किसी-किसी की पृष्ठ-संख्या ५०० तक है। हिन्दी में ऐसा कोई उदाहरण नहीं।

द्विवेदीजी (प० महावीरप्रसाद द्विवेदी) के ५०० से कुछ अधिक पत्र मेरे पास सुरक्षित हैं। और लोगों के पास भी होंगे। किन्हीं को प्रेरणा कीजिए कि वे द्विवेदीजी की पत्रावलि प्रकाशित कर दें। अस्तु. गर्देजी के पत्र में किसी दर्शक ने सम्मेलन के अधिवेशन का बड़ा ही मनोरंजक वर्णन छपाया है, ख़ासकर जिज्ञासु के साथ का प्रश्नोत्तर तो बहुत ही सुन्दर है। उसके लेखक कौन हैं? मालूम करके उन्हें मेरी ओर से बधाई दीजिए। बहुत अच्छा लिखा है, कमाल किया है।

सम्मेलन ख़ूब सफल हुआ, इसके लिए गांगेयजी, कुमारजी और सबसे बढ़कर बा० गोकुलचन्द्रजी धन्यवादाई हैं। श्री गोकुलचन्द्रजी का चित्र आपने नहीं दिया, शायद इसलिए कि वह 'दुर्भाग्य से' धनवान् हैं और धनवानों की प्रशंसा करना आपकी नीति के विरुद्ध है, पर उसका उल्लेख तो दानी के रूप में सिद्धान्त की रक्षा करते हुए हो सकता था। और फिर धनवानों की प्रशंसा तो महात्मा गांधी भी समय-समय पर जी खोलकर करते रहे हैं, पर शर्त यह रहती है कि वे चर्खा चलाते हों, खद्दर पहनते हों और उनके चर्खापन्थ में मोटी-मोटी रकमें देते हों। १५००) की थैली पाकर वह नवाब भूपाल को रामराज्य के शासन का सार्टिफ़िकेट दे सकते हैं। आतिथ्य-सत्कार से संतुष्ट होकर श्रीमती अन्सारी को 'आदर्श गृहिणी' की पदवी प्रदान कर सकते हैं। और नहीं तो महात्माजी के उदाहरणों से 'अनुप्राणित' होकर ही आपको श्रीगोकुल-चन्द्रजी का चित्र और चरित्र प्रकाशित करना चाहिए था, उनके हिन्दी-हित के नाते से। जो कुछ हो, इस अंक में श्री पूर्णसिंहजी के और गोकुलचन्द्रजी के चित्र का अभाव मुझे बहुत खटका। मेरी यह बात आपको भी इसी तरह खटके। मुझे श्रीनिवास शास्त्री का पत्र बहुत पसन्द आया। बातें और भी बहुत लिखनी थीं पर अब बन्द करता

हूँ। थक गया, गरमी इतनी बरस रही है कि फाउंटेनपेन की स्याही सूखकर जमने लगती है। इसीलिए पेन्सिल से लिखा है। किसी पत्र में पढ़ा है कि उस दिन कलकत्ते में कोई सभा संस्कृत-प्रचार के सम्बन्ध में हुई थी, जिसमें कोई ट्रैक्ट वितीर्ण हुआ था। यदि ऐसी 'दुर्घटना' हुई हो तो वह ट्रैक्ट कहीं से लेकर भेजिये।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०६

नायक नगला, चाँदपुर
२२-६-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

कल उज्जैन से मेरे पास शोक-सूचना का पत्र आया है। इस दुर्घटना से बड़ा ही दुःख हुआ। सेठीजी वास्तव में बड़े ही सहृदय उदार सज्जन हैं। उन पर यह विपत्ति का वज्रपात हो गया! इससे हृदय को बड़ी वेदना पहुँची है। ऐसे अवसर पर शोक-संवेदना का पत्र लिखते भी डर लगता है, क्योंकि शोक-दुर्घटना का उद्बोधक होने के कारण ऐसा पत्र भी पीड़ा पहुँचाने का कारण हो जाता है। फिर भी लिखना ही पड़ रहा है। अस्तु, स्वर्गीय श्री सतीशचन्द्र रायजी के सुपुत्र श्री भवानीचरणरायजी एम० ए० का इस बीच में एक पत्र और मिला है। वह भी भेजता हूँ। इस पत्र में 'विशाल भारत' के साहित्यांक पर उन्होंने सम्मति भी प्रकट की है। श्री भवानीचरणजी बहुत सहृदय और उदार सज्जन प्रतीत होते हैं। अपने पिता के समान यह भी हिन्दी के भक्त हैं। इनसे बहुत कुछ आशा की जा सकती है। यह प्रोत्साहन के पात्र हैं।

द्विवेदीजी के पत्र की नकल पढ़ी। पत्र मनोरंजक है, खासकर उन्होंने वर्माजी के शेर में 'सौबार' की जगह 'सौसाल' की जो इस्लाह की है, वह बहुत ही मार्के की है। वर्माजी का 'माधुरी' वाला लेख मैंने भी पढ़ा था। लेख निःसन्देह अच्छा है। मुझे तो सम्मेलन के सम्बन्ध में वर्माजी का 'विजय' वाला लेख उनके सब लेखों में ज़्यादा पसन्द आया। बधाई के उपलक्ष्य में उनकी कमर ठोक दीजिए। स्वस्थता और निश्चिन्तता प्राप्त होने पर मैं 'विशाल भारत' के लिए कुछ लिखूँगा। 'विशाल भारत' का साहित्यांक बढ़िया रहा, उस पर भवानीचरणजी की राय पठनीय है। आपके "कौन कैसे पत्र लिखता है" शीर्षक लेख को उन्होंने बहुत पसन्द किया है। आज़ाद, हाली, अकबर और शिबली आदि के प्रकाशित पत्र-संग्रहों का पता दो-चार दिन बाद देखकर लिखूँगा। द्विवेदीजी को अपने साहित्यिक पत्रों के प्रकाशन में आपत्ति तो न होनी चाहिए। पत्र लिखकर उनसे पूछिये तो, क्या कहते हैं?

'विशाल भारत' की सेवा मैं किसी प्रकार के प्रत्युपकार की दृष्टि से नहीं करता। आपसे और पत्र से जो मुझे प्रेम है, वही कभी-कभी कुछ लिखा लेता है। सम्मेलन को वास्तव में जो आशातीत सफलता प्राप्त हुई है, वह बहुत ही आश्चर्यजनक है। स्व० प्रो० पूर्णसिंह का चित्र 'विजय' के किसी पिछले अंक में छपा है, उसी ब्लाक को 'विशाल भारत' में छाप दीजिए। मेहर साहब यद्यपि हिन्दी के लेखक नहीं थे, पर हिन्दी के मर्मज्ञ भक्त थे। संस्कृत वेदान्त के भी वह अच्छे विद्वान् थे। प० लक्ष्मण शास्त्रीजी का चित्र और चरित्र गर्देजी से लिखाकर अवश्य प्रकाशित कीजिए। श्री गोकुलचन्दजी के दान का उल्लेख विशेष रूप से एक नोट में कीजिए। गोकुलचन्दजी ने हिन्दी के लिए जितना दान दिया है उतना किसी ने नहीं दिया। वह हिन्दी के लिए आजकल के 'कर्ण' हैं। कवि-सम्मेलन के सम्बन्ध में मैं आपके विचारों से सहमत हूँ। 'विशाल भारत' में प्रकाशनार्थ अपने विचार इस वक़्त नहीं लिख सकता, यह पत्र भी काशीनाथ से लिखाना शुरू किया था।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०७

नायक नगला
२५-६-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

पहले पत्र का उत्तर चाँदपुर से भेज चुका हूँ। उसके बाद जून का 'विशाल भारत' मिला। इस अंक में डा० सुनीतिकुमारजी चट्टोपाध्याय का 'हिन्दी की उत्पत्ति' लेख बहुत ही अच्छा है। भाषाओं की बड़ी ही सुन्दर मीमांसा है। यह लेख तो पृथक् पुस्तकाकार प्रकाशित होकर हिन्दी वालों के कोर्स में नियत होना चाहिए। हिन्दी के सम्बन्ध में ऐसा तथ्यपूर्ण लेख मैंने आज तक नहीं पढ़ा था। मुझे तो यह लेख इसलिए पसन्द आया कि भाषाओं की उत्पत्ति के विषय में मेरा भी यही मत है (यद्यपि मैं अंग्रेज़ी ढंग से इस प्रकार अपने विचार प्रकट नहीं कर सकता था)। कलकत्ता-सम्मेलन की मैं तो इसे सबसे बड़ी सफलता समझता हूँ कि ऐसा महत्त्वपूर्ण निबन्ध हिन्दी में हिन्दी पर लिखा गया। इसका खूब प्रचार होना चाहिए। चट्टोपाध्यायजी इसे ज़रा और पल्लवित कर दें (उदाहरण आदि देकर) तो और भी अच्छा हो। चट्टोपाध्यायजी से एक ऐसा ही निबन्ध संस्कृत के सम्बन्ध में भी लिखने का अनुरोध कीजिए। यह तो भाषा-विज्ञान के अद्भुत विशेषज्ञ मालूम होते हैं। हिन्दी की उत्पत्ति पढ़कर मैं तो गद्‌गद् हो गया। जिस चीज़ की खोज में था वह मिल गई। चट्टोपाध्यायजी कलकत्ते में रहते हैं? उन्हें मेरी हार्दिक बधाई और धन्यवाद पहुँचाइए। श्री जयचन्द्रजी का

लेख भी अच्छा है। स्वर्गीय सतीशचन्द्रजी की चिट्ठी में गणेशजी के चित्र की मार्मिक मीमांसा है, उनकी जीवनी के साथ यह पत्र भी रहे। इस अंक में सम्पादकीय विचार भी अच्छे हैं। ……… 'रियासती प्रजा की समस्या' का पूरा अनुवाद आपने छाप दिया यह अच्छा हुआ। इसका सार मात्र दूसरे पत्र में भी पढ़ा था पर तृप्ति न हुई थी। खादी वाला लेख न दिया जाता तो भी कुछ हर्ज न था, खादी की महिमा से तो सारे पत्र भरे ही रहते हैं।

श्री मुन्शी के उस गुजराती भाषण का अनुवाद आपने न दिया जिसके बारे में मैंने आपको लिखा था। 'लम्बकर्ण' में नुक़्तों की बहुत-सी भयानक ग़लतियाँ हो गई हैं। जैसे मिजाज़ १; खोज़ ३४; धोखा ११०; ज़ल्दी १४ इत्यादि। नुक़्ता लगाने की प्रथा उठा देनी चाहिए, हिन्दी में ग़लतियाँ हो ही जाती हैं। चतुप्रेहर ५३, यश विमुख ६६-चतुःप्रहर, यशोविमुख चाहिए था। चान्द्रोयन ४६, चान्द्रोयण, शौण्डिक की साक्षी, तस्कर की साक्षी, का साक्षी चाहिए. साक्षी (४८) गवाह को कहते हैं, गवाही को नहीं। कहीं-कहीं बंगाल-विहारवत् लिंग प्रत्यय भी है, अच्छी पुस्तक में ऐसे दोष खटकते हैं। संस्कृत न जानने से ऐसी भूलें होती हैं। आपने हाली आदि के पत्र-संग्रह का अता-पता पूछा था सो इस प्रकार है—मकतूबाते हाली, पहला हिस्सा १); दूसरा ३); ख़तूत शिबली १); अमीर मीनाई २); आज़ाद १॥)। ये पुस्तकें आपको अल्नाज़िर बुक एजेन्सी, लखनऊ से मिल सकेंगी। अकबर के ख़तूत भी वहीं से मिलेंगे। १।!) मूल्य है।

द्विवेदीजी से पत्र-संग्रह-प्रकाशन के बारे में आपने पूछा ?

पुस्तकों पर कुछ सम्मतियाँ छपवा ली थीं, भेजता हूँ। इनमें 'विशाल भारत' की समालोचना न जा सकी। उस वक़्त आगरे में मिली न थी।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१०८

हिन्दी प्रेस, प्रयाग

ता० २१-१०-३१, बुधवार

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आशा है, आप सकुशल आराम से सोते हुए यथासमय घर पहुँच गये। अफ़सोस यही है कि आपसे बातें करने का बहुत ही कम मौक़ा मिला। बहुत-सी जरूरी बातें रह गईं, जो अब याद आ रही हैं। 'प्रेम-प्रपंच' की चिट्ठियाँ तो 'विशाल भारत' में पढ़ ही चुका था, पुस्तक-परिचय और तुर्गनेव की जीवनी रात पढ़ी। बहुत सुन्दर लिखी है। तुर्गनेव के चरित्र का तो शब्द-चित्र खींच दिया है। मुझे याद पड़ता है इन

पत्रों की समाप्ति पर टॉलस्टॉय की लिखी 'फ़ास्ट' की समालोचना छपी थी। वह इसके साथ और जोड़ दी जाती तो सोने पर सुहागा हो जाता। 'फ़ास्ट' का परिचय भी पाठकों को मिल जाता। वह समालोचना मुझे बहुत पसन्द आई थी। मैंने उसकी उस समय भी दाद दी थी। 'बंगवासी' के शब्दों में "आपको याद रह सकता है"। उसका इसके साथ न होना मुझे तो अखर रहा है। खैर, अब क्या हो सकता है, दूसरे संस्करण में ध्यान रखिए। 'प्रेम-प्रपंच' के अनुवादक प० जगन्नाथप्रसादजी से तुर्गनेव की किसी छोटी-सी सुन्दर पुस्तक का अनुवाद और कराइये।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१०६

हिन्दी प्रेस, प्रयाग
१२-११-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आप ऊपर ही ऊपर उड़ गये। यहाँ आपके इन्तज़ार में लोग 'वासकसज्जा' बने राह देखते रहे! मामूली आदमी ही नहीं, साक्षात् परिव्राजकाचार्य श्री स्वामी सत्यदेवजी एक कविता के स्वयंवृत स्वामी यानी कवि! उत्सुक रहे। रात में रास्ता पूछते-पूछते यहाँ तक पहुँचे। जब बेचारों को मालूम हुआ कि आप नहीं आये तो बस "**खूं टपक पड़ा निगाह-ए इन्तज़ार से!**" अपने इस अत्याचार पर विचार तो कीजिए। उनकी बीमार आँखों को यह असह्य सदमा सहना पड़ा। उनकी बेकसी का यह सब्र किस पर पड़ेगा?

खैर क्या किया जाय। पर इस वादाखिलाफ़ी की उम्मीद न थी।

इस साल सम्मेलन का सभापति कौन होगा? आप 'सभापति-मेकर' हैं। क्या इरादा है? हक़ तो यह है कि हक़ वाजपेयीजी का है। कुछ उद्योग कीजिये। समय थोड़ा है। 'सुधा' में एक नोट निकला है, पढ़ा होगा। 'रत्नाकर' जी पर जो लेख आपने लिखा था, उस पर किसी काशीवासी ने कुछ ऊल-जलूल 'भारत' में लिखा था वह भी देखा होगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

११०

C/O **हिन्दी प्रेस, प्रयाग**
ता० २१-११-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आज 'विशाल भारत' पहुँच गया। श्रीरामजी का लेख और 'शब्दों की व्युत्पत्ति',

दो लेख मिलते ही पढ़ डाले। श्रीरामजी तो उत्तरोत्तर ग़ज़ब ढा रहे हैं। बन्दूक से बढ़कर इनका निशाना बैठता है। पढ़ने वाला तड़पकर रह जाता है। नज़र से बचाने के लिए इनके डण्ड पर भैरवजी का गंडा बाँध दीजिए। उनका यह शिकारनामा कब तक छपेगा, आजकल कलकत्ते में क्या कर रहे हैं? 'शब्दों की व्युत्पत्ति' वाला लेख भी बहुत सुन्दर है। 'शब्द-सागर' की भूलों का भाँडा फोड़ दिया है।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१११

हिन्दी प्रेस, प्रयाग

१८-१२-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आज जब आपको रजिस्टर्ड पैकट रवाना कर चुका तो चार बजे के करीब 'विशाल भारत' ने दर्शन दिये, यानी प्रेस की डाक में पधारे। कल इण्डियन प्रेस में ठा० श्रीनाथसिंहजी के पास थोड़ी देर यों ही उलट-पलट कर देखा था, ऐनक यहाँ भूल गया था, इसलिए कठिनता से हैडिंग देख सका था। मैं रात को इतमीनान से देखना चाहता था कि यहाँ अचानक एक उपद्रव खड़ा हो गया, यानी बाजे बजाने की कन्सर्ट पार्टी आ डटी; एक सज्जन सितार के ऐक्सपर्ट, दूसरे बेला के प्रवीण बजगर, तीसरे तबले के मास्टर, चौथे ताल और दाद देने में पटु और मजा यह कि सबके सब ग्रेजुएट और एल-एल० बी०। इनमें पहले हिन्दुस्तानी और बाक़ी बंगाली, सबके सब ब्राह्मण, एक द्विवेदी और बाक़ी मुकर्जी। मैं 'विशाल भारत' पढ़ना चाहता था उधर संगीत शुरू हो गया। मुझे पढ़ने का व्यसन तो है ही पर सितार सुनने के लोभ को भी संवरण नहीं कर सका। पार्टी में सम्मिलित न होना शिष्टाचार के विरुद्ध समझा, मंडली के पास बैठकर सुनना ही पड़ा। पर हाथ में 'विशाल भारत' लेकर बैठा। एक साहब बोले, "इसे रख भी दो, सुनोगे कि पढ़ोगे?" मैंने कहा, "दोनों काम साथ-साथ करूँगा। साहित्य और संगीत के आकर्षण की तुलनात्मक परीक्षा ही हो जायगी, देखूंगा किसमें अधिक आकर्षण है।" मुझे जब कभी ऐसा मौका मिल जाता है कि कोई अच्छी पुस्तक—वह भी काव्य पढ़ता हूँ और पास ही संगीत हो रहा हो तो एक अद्भुत आनन्द आता है। काव्य में जिसे उस समय देख रहा हूँ, नई-नई बातें सूझने लगती हैं। हाँ, हारमोनियम से मुझे कुदरती नफ़रत है। अच्छे-अच्छे बजाने वालों को सुना है, पर मुझे कभी अच्छा नहीं लगा, ख़ासकर सितार, सारंगी या बेला के साथ तो बहुत ही बुरा लगता है। खैर पहले सितार की गत बजी, उधर मैंने आपका सम्पादकीय पढ़ना शुरू किया। बड़े मजे में पढ़ता रहा, और आपके जोरे-क़लम की दाद देता रहा। 'सारनाथ में क्या देखा'

खूब लिखा है, मार्के की टिप्पणी है। श्री शंकराचार्य पर आक्रमण वाली बात मुझे भी बहुत ही बेतुकी और मूर्खतापूर्ण मालूम हुई। मैं आपके साथ मिस्टर (धर्मपाल) से मिलने गया होता तो उन्हें इतना फटकारता कि याद रखते, मैंने पत्रों में जब उनके भाषण की रिपोर्ट पढ़ी थी तो बहुत बुरी मालूम हुई। शंकराचार्य का मुकाबला तो संसार-भर के दार्शनिक नहीं कर सकते। मिस्टर (धर्मपाल) तो उनकी बातें समझेंगे भी नहीं। खैर, सितार के बाद बेला की बारी आई। बेला सितार से भी अच्छा बजा। बड़ा तैयार हाथ था। उस समय में नन्ददासजी वाला लेख देख रहा था, कान उधर लगे थे और आँखें लेख में; मन द्रुत गति से दोनों ओर बराबर काम कर रहा था। कई बार दो-चार मिनट के लिए आँख को भी कान का साथ देना पड़ा। गज इस सफ़ाई से फिर रहा था, हाथ इस तेज़ी से चल रहा था कि न देखना अन्याय था। बेला के साथ-साथ मैंने नन्ददासजी को समाप्त कर डाला। नन्ददासजी की कविता मुझे बहुत पसन्द है, आपने खूब लिखा है। तबीयत खुश हो गई। 'भारत मित्र' प्रेस की छपी रासपंचाध्यायी की एक प्रति मेरे पास है, जो स्वर्गीय श्री सत्यनारायणजी ने मुझे दी थी। उस पर उनके पेंसिल से लिखे नोट भी हैं इसीलिए मैंने उसे बड़े प्यार से रख छोड़ा है। सत्यनारायणजी ने उसी प्रति से सब रासपंचाध्यायी बड़े ही मधुर स्वर में पढ़कर सुनाई थी। उस पुस्तक को जब देखता हूँ तो वह दृश्य आँखों में फिर जाता है, हा!

बेला की जब द्वितीयावृत्ति हुई तब मैं उजड़ी वाटिका देख रहा था, वह कविता मुझे बहुत पसन्द आई। यह 'चकोरी' देवी कौन हैं? अच्छा लिखती हैं। मैंने पहली बार ही इनकी कविता पढ़ी है। तीसरे छन्द की अन्तिम पंक्ति पढ़ते वक्त धक्का-सा लगता है। उसमें छन्दो भंग या ध्वनि-भंग है। मात्राएँ तो गिनी नहीं पर धक्का ज़रूर लगता है, ज़रा पढ़ देखिए।

हाँ रत्नाकरजी के उस कवित्त का गोप्य अन्तिम चरण क्या है? ज़रा हम भी तो सुनें। श्री चिन्तामणि के सुपुत्र श्रीयुत् बालकृष्णरावजी अपनी पुस्तक मुझे दे गये हैं। जिस वक्त दोपहर को वह यहाँ पुस्तक देने आये उस दिन मेरी तबीयत अच्छी न थी, लेट रहा था। वह कुछ देर बैठकर और रघुनन्दनजी को पुस्तक देकर चले गये, मुझे किसी ने सूचना नहीं दी। फिर प० केशवदेवजी शर्मा की माफ़त उनकी इच्छा मालूम हुई कि मैं उस पर सम्मति लिख दूँ। मेरा विचार उसपर एक नोट 'विशाल भारत' में भेजने का है। बहुत अच्छी कविता है। बालकृष्णरावजी प्रोत्साहन के पात्र हैं। अस्तु, कन्सर्ट पार्टी की एक बात लिखना भूल गया। सितार और बेला के बाद हारमोनियम का नम्बर आया तो मैंने कहा कि भई, अँगूर खिलाकर यह निम्बोलियाँ क्यों खिलाते हो? **"जीभ निबौरी क्यों लगे बौरी! चाखि अँगूर"** सितार आदि बाजों के लिए यह हारमोनियम भी वैसी ही बला है जैसी तुलसीदास की रामायण के लिए राधेश्याम

की रामायण । भारतीय संगीत कला को इस हारमोनियम ने बड़ी हानि पहुँचाई है ।
पुनश्च :

१७-१२-३१ के 'भारत' में तीसरे पेज पर एक लम्बा लेख 'हिन्दी के विकास में बाधा' न पढ़ा हो तो पढ़ लीजिए, आपको सम्पादन-कौशल का सार्टिफिकेट भारत सरकार से मिला है, बधाई है बधाई !!!

भारत की ढिठाई पर प्रहसनात्मक लेख वर्माजी को लिखना चाहिए। रोग बढ़ रहा है, इलाज होना चाहिए ।

'श्याम-सगाई' सचमुच सुन्दर कविता । मैंने पत्र लिखने के बाद फिर पढ़ी । सताईसवें पद्य की दूसरी पंक्ति ठीक नहीं मालूम होती । 'जोरी' से पहले 'ये' या 'यह' हो और 'विधाता' की जगह 'विधना'. हो तो शायद ठीक हो जाय ।

श्री सम्पूर्णानन्दजी के विषय में लिखते हुए उपसंहार में जो कुछ लिखा है उससे मैं पूरी तरह सहमत हूँ। साहित्य-सेवी का सैनिक बनना उचित नहीं ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

११२

प्रयाग

१८-१२-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार ।

उस दिन जो पत्र भेजा है, पहुँचा होगा । मैं कल प्रातःकाल आगरे जा रहा हूँ । वहाँ से सम्भव है, वृन्दावन-गुरुकुल के और सम्मेलन के उत्सव पर झाँसी चला जाऊँ । २५ ता० तक तो आगरे जरूर ठहरूँगा । बलिया के ठाकुर गुरुभक्तसिंहजी 'भक्त' कवि यहाँ आये थे । अपनी पुस्तकों पर मुझसे सम्मति लिखवाई है । उनका चित्र, वह सम्मति, पुस्तकें और एक कविता 'विशाल भारत' के लिए भेज रहा हूँ । चित्र, सम्मति और यह कविता एक ही अंक में छाप दीजिए । उनकी पुस्तक भी पढ़ लीजिए ।

कल ठाकुर श्रीनाथसिंह 'बालसखा'-सम्पादक के पास नया 'विशाल भारत' देखा, यहाँ अभी नहीं आया, आगरे जाकर पढ़ूँगा ।

ठाकुर श्रीनाथसिंहजी ने 'बालसखा' के विशेषांक के लिए मुझसे एक लेख लड़कपन की एक घटना पर लिखाया है । लेख उन्हें पसन्द आया । लड़कपन का एक चित्र भी माँगने लगे । सन् १८९५ के एक चित्र का ब्लाक आपने बनवाया था; उसी का छपा हुआ एक चित्र उन्हें दे रहा हूँ । यदि वह उस ब्लाक को माँगें तो आप उनके पास भेज दें । काम होने पर लौटा देंगे । उत्तर आगरे के पते पर ।

पुनश्च :

हाँ, 'भारत' में इस हफ़्ते फिर आपको याद फ़रमाया है जनाबे वाजपेयी ने। आप नाहक लोगों की तारीफ़ कर-कर के हिन्दी के विकास में बाधा पहुँचा रहे हैं, बार-बार चेतावनी देने पर भी बाज़ नहीं आते। अपने मित्रों की तारीफ़ ही करनी है तो उस तरह कीजिए जैसी जनाब वाजपेयी अपने मित्रों की लंबी-लंबी लेखमालाओं में करते हैं। आप न किसी की शॉ (बनार्ड शॉ) से समानता सिद्ध करते हैं न शेक्सपीअर से, न रोम्याँरोलाँ से। इसी से तो हिन्दी के विकास में बाधा पहुँचती है! वाजपेयीजी का ('भारत' के) अनुकरण कीजिए तो एक बात भी हो। बेचारे भवानीदयाल संन्यासी पर भी भारत वाले बरस पड़े हैं। आप झाँसी-सम्मेलन में जायेंगे या नहीं?

भट्टजी के पास लिपि-समीक्षा की आलोचना वाला अंक भेज दीजिए। उत्तर दे सकें तो आगरे के पते पर दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

११३

राजामंडी, आगरा
२३-१२-३१

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

१८-१२ का कृपा-पत्र कल यहाँ मिला। मैं प्रयाग से २०-१२ को चलकर उसी दिन यहाँ आ गया था। प्रयाग में एक रजिस्टर्ड पैकट और एक लिफ़ाफ़ा और भेज आया था। पहुँचा होगा। आपका पत्र पढ़कर सन्तोष हुआ कि आप ठीक परिणाम पर पहुँचे हैं। मैं तो पहले ही से कहता आ रहा हूँ कि लातों के भूत बातों से नहीं माना करते। अस्तु, अब आप रास्ते पर आ गये। उसे भी रास्ते पर लाया जा सकेगा। हरिशंकरजी एक लेख शीघ्र ही भेजेंगे। मेरा परामर्श भी उसमें होगा। कार्तिक की 'सुधा' में श्रीयुत् सुधीन्द्रकुमार एम. ए., एल-एल. बी. का एक 'साहित्यिक दलबन्दी' नोट छपा है। उसे 'विशाल भारत' में अवश्य ही उद्धृत कर दीजिये। वह दम्भगढ़ पर बम्ब का गोला है। मैंने पहले भी इस ओर आपका ध्यान दिलाया था। जनवरी के अंक में उसे दे दीजिए। प्रारम्भ के मंगलाचरण की चीज़ है। आप पढ़ेंगे, तो खुश हो जायँगे। 'लोकमान्य' का नोट देखा, अच्छा लिखा है। हरिशंकरजी 'आर्यमित्र' में भी लिखेंगे। आप गोलाबारी शुरू कर दीजिए। सब लोग साथ देंगे। हो सके तो कोई नोट जनवरी के लिए भेज देने का प्रयत्न करूँगा। मेरा स्वास्थ्य अभी ठीक नहीं हुआ। अभी एक ज़रूरी काम से हरिशंकरजी ने तार देकर बुला लिया है,

आना पड़ा। २-१-३२ के बाद यहाँ से मकान जाने का विचार है। कल प्रिय पटेजी से जाकर मिला था, आज वह भी आये थे। प्रसन्न हैं। पढ़ने में लगे हैं। मैंने उन्हें संस्कृत पढ़ने का परामर्श भी दिया है।

भवदीय
प ्मसिंह शर्मा

११४

ज : आगरा
१२-१-३२

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

मेरे कई पत्रों की पहुँच तक आपने नहीं लिखी। खैर, आज अभी चि० पटे (प० बनारसीदास चतुर्वेदी के अनुज श्री रामनारायण चतुर्वेदी) से यह मालूम करें। बड़ी चिन्ता हुई कि आप ऑल इण्डिया लीडर बनने का बाँधनू बाँध रहे हैं। यानी जेल-यात्रा की तैयारी कर रहे हैं। ज़रा सोच-समझकर ! जेल से बाहर रहकर भी तो बहुत-कुछ काम किया जा सकता है। आपने कई बार किसी प्रसिद्ध विद्वान् का मत दोहराया है कि जो साहित्य-सेवी बन सके उसे पॉलिटिक्स में न पड़ना चाहिए। अभी पिछले अंक में आप सम्पूर्णानन्दजी के बारे में लिखते हुए इस बात को दृढ़ता से दोहरा चुके हैं, फिर यह सनक सहसा क्यों सवार हो गई ? परमात्मा आपको सद्बुद्धि प्रदान करे। ऑल इण्डिया लीडर बनने की लालसा के दौरात्म्य को दमन करें। हरये नमः।

आप तो प्रोपेगण्डास्त्र माँज रहे थे ? आप जेल चले गये तो 'विशाल भारत' कहाँ जायगा, यह भी सोचा है ? आप जेल न जायँगे तो देश का कुछ भी काम बन्द न होगा पर जेल जाने पर 'विशाल भारत' ज़रूर बन्द हो जायगा और कई अनर्थ होंगे। आप जेल कब जाते हैं, और कहाँ से जा रहे हैं ? हरिशंकरजी कहते हैं कि जेल जाना ही है तो आगरे से जायें और मेरी तो यह राय है कि कहीं से भी न जायें। साहित्य के द्वारा ही देश-सेवा करते रहें। 'विशाल भारत' का बन्द हो जाना सचमुच बड़े दुर्भाग्य की बात होगी और साहित्य-हत्या आप ही के सिर होगी। 'विशाल भारत' फिर जारी न हो सकेगा। सब बातें खूब सोच-समझकर इस आग में कूदिये। जल्दी न कीजिए। आपका यह विचार सुनकर मैं बहुत उद्विग्न हूँ। मुझे तो आपका यह विचार किसी भी दृष्टि से उचित नहीं प्रतीत होता। जल्दी न कीजिए। 'विशाल भारत' पर ही दया कीजिए, हम लोगों पर न सही।

आपके इस विचार से चकित, स्तम्भित एवं भी
पद्मसिंह शर्मा

११५

राजामण्डी, आगरा
गणेश चतुर्थी, सं० १९८८ भौम
(२६-१-३२ स्वतंत्रता दि०)

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

आपका कृपा-पत्र यथासमय मिला था, जिसकी पहुँच हरिशंकरजी के कार्ड में लिख दी थी। मैं इस बीच में एक बखेड़े में फँसा था इसलिए पत्र न लिख सका, मजबूरी थी। आप तो मेरे कई पत्रों को हज़म कर गये, डकार तक न ली यानी पहुँच तक न लिखी, ख़ैर अपनी आप जानें। मैं जिस झंझट में था उसका 'प्रूफ़' आपके पास भेज रहा हूँ। इसे अभी ख़ुद ही देखिए, बहिरंग अनधिकारियों से छिपाकर। परिशिष्ट को आप शुरू से आख़िर तक ध्यान से देख जाइए, इसमें आपको एक नवीनता मिलेगी। मैंने इसमें कुछ ऐसे लेखकों पर प्रकाश डाला है जो दलबन्दी की आँधी के कारण छिपे हुए हैं, जिन लोगों ने कन्वेसिंग, प्रोपेगेण्डा या दलबन्दी के सबब अपना सिक्का बिठा रखा है उन्हीं का गुणगान होता रहता है। चुपचाप काम करने वालों को कोई नहीं पूछता। इसमें आपको कई नाम मिलेंगे (विषय-सूची में देखिए), परिशिष्ट के २०वें नंबर को ख़ासतौर पर देखिए, और देखिए कि निशाना ठीक बैठा है कि नहीं। बात 'घणी चोखी' बावन तोले पाव रत्ती—यानी बिल्कुल सही और सच है। फिर '·· उछलती-कूदती ' भाषा का लाजवाब जवाब भी है। उस उछलती-कूदती भाषा की बात को उस वृथा पुष्ट पोथे से लेकर पोथे वाले के चेलों ने कई पुस्तकों में दोहराया है—'शृगाल रोदन न्याय' का परिचय दिया है—इसलिए इसकी और भी ज़रूरत थी, आप ही कहिए थी या नहीं? मैं तो समझता हूँ—थी, और ज़रूर थी, आपने तो प्रोपेगेण्डा-अस्त्र माँज-मूँजकर फिर भोथरा कर दिया, सोडावाटर का उबाल आकर रह गया पर मैं इस अनर्थ और अत्याचार को यों चुपचाप सह लेना नितान्त अनुचित समझता हूँ। प० श्रीरामजी को यह उनके बारे की बात सुना दीजिए या लिख दीजिए, वह अपना शिकार-संग्रह छपावें तो प्रेस में देने से पहले मुझे दिखला लें। मैं भाषा पर पालिश कर दूंगा, कहीं-कहीं उनकी भाषा टकसाली नहीं है। प० जगन्नाथप्रसाद मिश्र को भी उनके विषय की बात सुना दीजिए, उनका ज़िक्र ख़ैर भी मैंने ज़रूरी समझा। १५वाँ नंबर देखिए कितना अच्छा लिखा गया है × × × × × सोलहवाँ नंबर आप देखें या न देखें, वह आपके दिखाने को नहीं लिखा गया। परिशिष्ट को पढ़कर अपनी सम्मति ज़रूर लिखिए, यह क्रम ठीक है कि नहीं? प्रशंसात्मक विशेषण आपको शायद खटकें, पर मैं इस रीति को उचित समझता हूँ, फिर कोई विशेषण फालतू नहीं है। अंग्रेज़ी वाले इस बारे में कंजूसी करते हैं, उनकी

तारीफ़ रूखी, फ़ीकी, उखड़ी-उखड़ी होती है, संस्कृत कवि ऐसे विशेषण आवश्यक समझते हैं ! मैं उन्हीं का अनुयायी हूँ ।

शोला पर ब्रजमोहनजी भटनागर का लेख भेजता हूँ । मैं इसे देख तो गया हूँ ४-५ घण्टे खर्च करके, पर मूल पुस्तक जिससे यह अनुवाद किया है पास न थी। कविता का प्रूफ़ वर्माजी को दिखा लीजिए । लेख देने लायक है, शोला का नौहा पत्नी-वियोग आपको पसन्द आयगा। जनवरी का 'विशाल भारत' बहुत ही अच्छा निकला है, श्रीरामजी की स्मृति ग़ज़ब की है ।

९वां-१०वाँ फ़ार्म भी भेजता हूँ । इसमें एक पुराना लेख 'दिल्ली दरबार' है । एक पुरानी घटना का वर्णन समझकर ज्यों का त्यों रहने दिया है, फिर यह उस वक्त लिखा गया था जब महात्माजी और तिलक महाराज फ़ौज में रंगरूट भरती करा रहे थे, इसी दृष्टि से इसे देखिए। इसी के साथ लार्ड नार्थक्लिफ साहब हैं । वह उस फार्म में पूरे नहीं आ सके, अगला फार्म फालतू मिला नहीं । बाक़ी फिर भेजूँगा । 'विशाल भारत' की समालोचना 'आर्यमित्र' में छपेगी ।

यह जानकर सन्तोष हुआ कि आप अभी जल्दी जेल जाने का इरादा नहीं रखते । श्री वाजपेयीजी आजकल कैसे हैं ? वहीं हैं न ? श्री श्रीराम शर्मा कहाँ हैं ? बस अब गुंजाइश नहीं है ? बाकी फिर ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

११६

C/O **मध्य भारत हिन्दी साहित्य-समिति, इन्दौर**

स्वस्ति श्री सर्वोपमान योग्य सकलगुण निधान, प्रवासी भारतीयों की जान, परम सुजान, सद्गुण-रत्नों की खान, घासलेटी-आन्दोलन के महायान, गंगा-जल निर्मल, यमुना-जल शीतल, पावन पवित्र, अति विचित्र, ज्ञातिशिरोमणि इत्यादि विविध विरुदावली विराजमान श्री (एकसौ अनगिनत) मान् चतुर्वेदीजी उर्फ़ 'ऋखीजी' महाराज, जय जमना मैया की ।

अपरंच समाचार यह है कि यहाँ श्रीरामजी की कृपा से कुसल छेम है, आपका मङ्गल सदा जमना मैया से चाहते हैं । अग्रे वार्ता यह है कि बहुत दिनासुं आपको पत्र नहीं आयो, जे का बात है, जे आप चिट्ठिन को उत्तर भी नाँय देत ? क्या मटियाबुर्ज वालों नेहमला बोल दिया है, या किसी नये आन्दोलन का झंडा उठा लिया है, जो पत्रों का उत्तर देते भी नहीं बनता । मैं इस बीच में आधे दर्जन के करीब पत्र भेज चुका हूँ जिनमें बहुत-सी बातें उत्तरणीय और ज़रूरी थीं, पर आप सबका उत्तर

छायावादियों की मूक भाषा में ही देकर रह गये। मुझे डर है, छायावाद की मनहूस छाया आप पर भी पड़ रही है। "खुदा महफूज रक्खे इस बला से।"

मेरे पहले पत्रों में जिन किन्हीं बातों को उत्तरणीय समझते हों, तो मटिया बुर्ज वालों से कुछ देर को छुट्टी लेकर लिख दीजिए। पिताजी का और काव्य-कुटीर वाला ब्लाक अभी घर न भिजवाया हो तो काव्य-कुटीर के ब्लाक के लैटर पेपर ५०० तथा ५०० कार्ड काशीनाथ शर्मा काव्य-तीर्थ के नाम के तथा २,५०० सादे लिफ़ाफ़े छपवाकर ब्लाक सहित घर भिजवा दीजिए। ओझाजी चित्तौरगढ़ वाला लेख तैयार कर रहे हैं। कलकत्ते में आजकल क्या हाल है ? गर्मी तो खूब पड़ती होगी।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

११७

हिन्दी प्रेस, प्रयाग

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

पहला कार्ड पहुँचा होगा। नया 'विशाल भारत' यहाँ प्रेस में अभी तक नहीं आया। प० गौरीशंकरजी भट्ट की लिपि-समीक्षा और उसकी समालोचना 'विशाल भारत' में प्रकाशनार्थ भेजता हूँ। इसे शीघ्र प्रकाशित कर दीजिए। प० जयचन्द्रजी की पुस्तक की समालोचना भी शीघ्र भेजूंगा। आगरे में पटे आदि कवि-सम्मेलन करने जा रहे हैं। मुझे बुला रहे हैं। शायद २३ तारीख को वहाँ जाऊँ। आशा है, आप प्रसन्न हैं। प० महावीरप्रसाद द्विवेदी ने प० रघुनन्दन शर्मा को एक पत्र में लिखा है—"प० पद्मसिंहजी से मेरा प्रणाम कहिए। आपके प्रेस के किसी कर्मचारी ने उनके विषय में किसी लेख की बाबत मुझसे पूछा था। मैंने जवाब नहीं दिया। ज़रूरत न थी। उस दिन देवीदत्त शुक्ल से बातें कह दी थीं। शर्माजी को चाहिए किसी की बात पर विश्वास न करें। मेरी श्रद्धा और प्रेम उन पर जैसा था वैसा ही है। किसी की शरारत से वह कम नहीं हो सकता।"

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

११८

काव्य-कुटीर, नायक नगला (बिजनौर)

(कार्ड के बाद)

आपके कार्ड के उत्तर में कार्ड ही से काम लेना चाहता था पर पते का स्पेस भी बहुत-सा घिर गया। कार्ड पोस्ट करने के काबिल न रहा, छोड़ दिया। इसी बीच में अंगुश्ते शहादत (तर्जनी) दुखने लगी फिर पक गई, लिखना दूभर हो गया, इससे

गाड़ी रुक गई। इतने में अप्रेल का 'विशाल भारत' आ गया, उसे पढ़ने लगा। पत्र फिर भी न लिखा जा सका। आज इन्दौर जाने के लिए चाँदपुर आ गया हूँ। पत्र लिखना ज़रूरी समझकर पेन्सिल से दुखती उँगली बचाते हुए लिख रहा हूँ। कष्ट-सहिष्णुता का अभ्यास कर रहा हूँ। सुना है, यह भी एक तप है। दो जगह की समालोचना बहुत पसन्द आई। एक तो आपने वाजपेयी की हिंसक प्रवृत्ति के दौरात्म्य से जो दारागंज-निवासी साहित्यसेवियों के लिए ख़तरे का इशारा किया है वह बड़ा मजेदार है, गम्भीर हास्य है पर जैसा मठल्लू आदमी उसे समझे इसमें पौने सोलह आने शक है। दूसरा ललिता और कला के व्यभिचार की बात, पर मुझे ताज्जुब है व्यभिचार का घासलेटी नाम एक ऐन्टी घासलेट के क़लम से कैसे निकल गया। आश्चर्य 'तुर्गनेव' ख़ूब है, पर इस नाम का संस्कृतिकरण प० रामावतारजी की शैली पर कर लेना चाहिए था। **'तुरग नेव' तुरगा अथवा नेया नेतव्याः, शिक्षणीया वा यस्य**— अर्थात् चाबुक सवार ५१२वें पेज पर दूसरे कालम में—'शास्त्र-वचन जैसा अलीक था', यहाँ अलीक शब्द का आपने बिल्कुल उल्टा प्रयोग कर दिया। अलीक=मिथ्या, असत्य को कहते हैं, कोश देखिए। यह हिमालय जैसी भयानक भूल है। इसका प्रायश्चित्त एक दिन दूध न पीकर कीजिए। इसी कालम में तीसरे पैरे में मैंने यह 'ने' बिल्कुल वैसा ही जैसे प्रयोग की शिकायत आपने सम्पादकीय नोट में ५७४ पेज पर की है, ज़रा पढ़कर देखिये। तुर्गनेव में आपने एक पद्य लिखा है जिसके पढ़ने में ख़ास धक्का लगता है। इसकी रचना ट्रामवे के सफ़र में तो नहीं हुई थी। 'पत्रकार और नवयुवक' में एक बहुत ही ताड़ की बराबर बड़ी भूल रह गई है। नवयुवकों के लिए जो विषयों की लम्बी लिस्ट आपने दी है उसमें असली चीज़ को बिल्कुल ही छोड़ दिया है। यह नोट भूख में तो नहीं लिखा था ?

भाषा या साहित्य के परिपक्व ज्ञान का आपने उसमें नाम तक नहीं लिया। मैं तो हिन्दी पत्र-सम्पादकों में दो-एक को छोड़कर सबसे बड़ी भाषा की ही कमी देखता हूँ, इनमें से अधिकांश को न अनुवाद करना आता है न स्वतन्त्र लेख। जीती-जागती विशुद्ध भाषा में लिखना आता है। सम्पादन-क्षेत्र या लेखन-व्यवसाय में पड़ने के लिए सबसे मुख्य बात विशुद्ध भाषा का ज्ञान है, उसका आपने जिक्र तक नहीं किया। उस वक़्त छाने हुए तो नहीं थे। सम्पादकीय के प्रारम्भ में ही आपने आत्मघात का मार्ग दिखाकर अच्छा काम नहीं किया। यह तो आपके स्वभाव और सिद्धान्त के विरुद्ध मार्ग था इस पर कबसे चलने लगे ? याद कीजिए प० भीमसेनजी वाले संस्मरण में 'मित्रघात' को, उसे देखकर आप बिदक गये थे, काट दिया था ! मित्रघात और आत्मघात, कौन बड़ा 'घात' है यह आप ही सोच लें। मैं देख रहा हूँ और ख़ुश हूँ कि आप में तेजस्विता 'गरमी' का दौरात्म्य उत्तरोत्तर बढ़ रहा है, लक्षण शुभ हैं। इस बार एक

टक्कर बिजनौरी बकरे की बेचारे शास्त्री के चूतड़ों पर लगा दी है। भला उनके उस अफरीका वाले विस्मृत प्राय. व्याख्यान के याद दिलाने का यह कौनसा शुभ मुहूर्त था? लोगों पर अपनी याददाश्त और साफ़बयानी का सिक्का बिठाने की बात है क्या? कुछ भी हो आपकी यह अदा मुझे पसन्द आई। आप में भी यह 'हुड़ यूद्ध' की प्रवृत्ति बे तरह बढ़ रही है, इसे ज़रा रोकिए। ५१३ पेज पर '**उसके बगल से**'—बगल हिन्दी में स्त्री-लिंग है, 'उसकी' चाहिए था। एक जगह आपने 'उसके बाबत' लिखा है उसकी बाबत' चाहिए था। 'बगल' और 'बाबत' दोनों एक ही लिंग के जीव हैं। 'बाबत' की बाबत अक्सर बड़े-बड़े हिन्दी लेखक भूल करते हैं।

पूज्य द्विवेदीजी के सन्देश को देकर आपने व्यर्थ ही पेज नष्ट कर दिये। इसकी कोई ज़रूरत न थी, यह तो कई पत्रों में छप गया था, कापियाँ भी सम्मेलन पर काफ़ी बट चुकी थीं, यह भक्ति की बाढ़ है। इन पाँच पेजों में और पठनीय मैटर दिया जा सकता था, अस्तु।

'सिंदूर वाला' गल्प घणी चोखी छै, काबली वाला से टक्कर लेती है। तुरगनेय में आपने अकबर का एक मिसरा ख़ूब मौके से इस्तेमाल किया है '**सखु़ा सँवरता है**'।

इस बार स्वामी भवानीदयालजी का फोटो न देकर आपने उनके साथ अन्याय किया है, अपने जी में क्या कहेंगे? एक तो वह जेल गये, दूसरे प्रवासी परिषद् के मनोनीत प्रधान थे। एक रंगीन और एक सादा देना चाहिए था।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

११६

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)

प्रिय चतुर्वेदीजी, नमस्कार।

२२-१ का कृपा-कार्ड यथासमय मिल गया था। उससे सान्त्वना मिली। लोग मुझे लेक्चर लिखने को तंग कर रहे थे। लेक्चर का निमन्त्रण स्वीकार करके मैं एक आफ़त में फँस गया हूँ। हितैषियों के तकाज़ों से तंग आ गया हूँ। चारों ओर से लिखो-लिखो हो रही थी। किसे-किसे समझाऊँ कि क्या हाल है। एक आपने दिल की कैफ़ियत का अन्दाज़ा करके राम लगती कही है कि ऐसी दशा में लेक्चर लिखना सम्भव नहीं। मुझे इससे तसल्ली मिली कि एक आदमी तो दिल की नब्ज़ पहचानने वाला मिला। मैं मौलाना हाली का लेख-संग्रह देख रहा था। एक लेख यात्रा पर था

जिसमें वह आपके फ़ीरोज़ाबाद भी गये थे। सन् १८८० ई० की बात है। वह अंश नकल करके भेजता हूँ, शायद कभी काम आवे। एक महाकवि की सम्मति है। उसमें हाली ने चूड़ियों की तिजारत का ज़िक्र नहीं किया, शायद सन् १८८० में यह कारख़ाने जारी नहीं हुए हों। एक और पंखियों की तिजारत का हाल लिखा है। क्या आजकल भी पंखियाँ अच्छी होती हैं ?

प० बृजमोहन दत्तात्रेय 'क़ैफ़ी' की एक पुरानी नज़्म 'नया ज़माना' भेजता हूँ। इसे छाप दीजिए। 'क़ैफ़ी' पर एक लेख भी भेजूँगा। हिण्ट्स मँगवाये हैं। बड़े विद्वान् कवि हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२०

नायक नगला, चाँदपुर

प्रिय मित्र, प्रणाम।

कृपा-पत्र और पुस्तकें पाकर अत्यन्त अनुगृहीत और आनन्दित हुआ। मैं आपकी सौजन्य-भरी चातुरी का 'चेरा' हूँ। आपके लिए मेरे हृदय में जितना प्रेम, जितना सम्मान है, उसे लिखकर व्यक्त नहीं कर सकता। आजकल के हिन्दी-लेखकों में आपको 'एक काम का आदमी' समझता हूँ। आपने जिस चुपचाप ढंग से हिन्दी और ग़रीब हिन्दवालों की सेवा की है वह आप ही का काम है। जी चाहता है कि हृदय से लगाकर गले से चिमटकर प्यार करूँ, आपकी पीठ ठोकूँ, हाथ चूमूँ और चरण छूऊँ। आपकी तहरीर में ग़ज़ब का दर्द है। सचमुच ही आप 'भारतीय हृदय', एक ही भारतीय हृदय हैं। आपके अनेक अलौकिक गुणों से मुग्ध होकर हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के सभापति पद के लिए आपका भी नाम मैंने पाँच सज्जनों में लिखा है।

स्वर्गीय सत्यनारायण के सम्बन्ध में आपका पत्र जब आता है तभी मुझे रुलाता है। आज आपका पत्र पढ़कर मैं कोई दस-बारह बार रोया हूँगा, और अब पत्र लिखते समय भी बराबर रो रहा हूँ। नमालूम यह रोना कब तक ख़ून के आँसू रुलाएगा। हाय ! **"छन गया सीना भी कलेजा भी, यार के तीर! जान ले जा भी।"** सत्यनारायणजी के सम्बन्ध में मैंने बहुत कुछ लिखना चाहा था, पर नहीं लिख सकूँगा। आप जो कुछ उनके लिए उनके नाम पर कर रहे हैं, मैं समझता हूँ अपने किसी मित्र के लिए किसी ने न किया होगा। जीते मित्रों के लिए मरने का दम भरनेवाले मैंने बहुत देखे हैं, पर आपकी तरह मरे मित्र के नाम पर मरने वाला मैंने नहीं सुना। जो काम सावित्री को करना चाहिए था वह आप कर रहे हैं, जीते-जी जल रहे हैं और जो उनके किसी दुश्मन को भी न करना चाहिए था वह उसने किया। ज़माने का

इनक़लाब देखिए। किसी मुसलमान फ़ारसी शायर ने हिन्दू औरत की तारीफ़ में कहा है—

इसे पढ़िये और रोइये। 'हृदय-तरंग' की भूमिका पढ़कर मुझे बड़ी वेदना हुई। पर, परमात्मा उन्हें वैतरणी की तरंग में डुबो दे, जिन्होंने हमारे सत्यनारायण की 'हृदय-तरंग' को हड़प करके डकार तक न ली। इन चाण्डाल-चरित्र नराधम पामरों के लिए धिक्कारवाद के अतिरिक्त क्या कोई दंड-विधान नहीं रहा? सत्यनारायणजी की जीवनी का मसाला मैं जरूर देखूँगा। चतुर्वेदी पाठकजी (आगरा निवासी चतुर्वेदी प० अयोध्याप्रसादजी पाठक) का भी हाथ बटाऊँगा। जो कहिये सो करूँगा। मैं अभी हरदुआगंज शंकरजी से मिलने गया था। हरिशंकरजी ने आपका पैग़ाम सुनाया। दिल में आया कि आपसे मिलता आऊँ। फिर सोचा कि आप इन्दौर चले गये होंगे। इसलिए आगे न बढ़ा। आज ही मकान पर लौटा हूँ। हिन्दी लेखकों के जीवन-चरित बेशक लिखे जाने चाहिएँ। आप पाठकजी (श्रीधर पाठक) की जीवनी लिखिये और मैं शंकरजी की लिखूँगा। मुझे जीवनी लिखनी नहीं आती। इस कूचे में कभी क़दम रखा ही नहीं। पर शंकरजी का पवित्र चरित्र लिखकर अपनी कलंकित क़लम के पापों का प्रायश्चित्त करूँगा, परमात्मा मुझे शक्ति दे कि मैं यह कर सकूँ। एवमस्तु।

सम्पादकाचार्य पर कुछ लिखने के लिए मैं आपको पेशगी धन्यवाद देता हूँ। लिखिए, जरूर लिखिए और जल्द लिखिए। उनकी एक अप्रकाशित अपूर्ण पर भावपूर्ण कविता मेरे पास है। 'आर्यमित्र' में जो उनके विषय में मैंने लिखा था, वह भी मेरे पास है। मुझे भी आप भारतीय हृदय का एक टूटा हुआ टुकड़ा समझिये। फिर भारतीय हृदय के स्वर में स्वर मिलाकर क्यों न रो सकूँगा? आप लिखकर भेजिये तो। मैं इसी काम के लिए सम्पादकाचार्यजी के मकान पर, धामपुर, भी गया था पर कुछ हाथ-पल्ले न पड़ा। पुराना आदमी कोई मिला नहीं, नये जो थे वह मुझसे ज्यादह नावाकिफ़, फिर भी एक बार जाऊँगा। 'ढोल में पोल' आपने पढ़ी है या नहीं। उसमें एक लेख 'नामानन्द' है। न पढ़ा हो तो भेज दूँ? मुरादाबाद की 'प्रतिभा' वहाँ कहीं जाती है? उसके दिसम्बर और जनवरी के अंकों में 'समालोचक' की लिखी दो समालोचनाएँ[1] निकली हैं। न पढ़ी हों तो भिजवा दूँ या भेज दूँ?

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१. ये लेख और रचनाएँ आचार्यजी द्वारा ही लिखे गये थे।

५

प० श्रीराम शर्मा को लिखे गये पत्र

१२१

C/O प० हरिशंकर शर्मा,
राजामंडी, आगरा
१२-३-१९३१

प्रिय प० श्रीरामजी, नमस्कार।

आपका तारीख़ ३ का कृपा-पत्र मुझे उस दिन चाँदपुर में मिला था, जब मैं इधर सफ़र में आ रहा था। परसों यहाँ आया हूँ। अभी ८-९ दिन यहाँ रहूँगा।

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप अपने लेखों का संग्रह छपा रहे हैं। मैं आपके लेख बड़े चाव से पढ़ता रहा हूँ। आपके वर्णन में एक आकर्षण होता है। मैं शिकार का न शौकीन हूँ, न समर्थक, न विरोधी। हिंस्र जन्तुओं के बध को अवश्य उचित समझता हूँ। फिर भी आपके लेख इसलिए पढ़ता हूँ कि उनमें वर्णन की रोचकता होती है। संग्रह का नाम कुछ सूझ जाएगा तो लिखूंगा। 'विशाल भारत' में आपके कई लेख अच्छे निकले हैं। मैं आपको पत्र लिखने वाला था। चतुर्वेदीजी से पता पूछा था। पर वह चुप रहे। आजकल आपका हेडक्वार्टर कहाँ रहता है? श्री प० बाला-प्रसादजी[1] से सप्रेम नमस्ते कहिए। आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२२

लसकाक कुटी,
दारागंज, इलाहाबाद
१६-२-३२

प्रिय प० श्रीरामजी, नमस्ते।

आपका कृपा-पत्र अभी मिला। आप अपनी एक धोती यहाँ भूल गये हैं। रक्खी है। आपकी याद दिलाती रहेगी। फ़रवरी का 'विशाल भारत' किसी से लेकर पढ़ूँगा। इस समय लेक्चर का भूत सिर पर सवार है। रात के दो-दो बज जाते हैं। बिखरे खयालात सिमटने मुश्किल हो रहे हैं। रात थोड़ी है। राग बहुत है। साथ ही

---

१. प० श्रीराम शर्मा के बड़े भाई।

साथ जुकाम-खाँसी का दौरा भी चल रहा है। विना नहाये भी नहीं रहा जाता। रोटी बनाने को एक बुढ़िया लगाई थी। रोटी तो राम का नाम ही बनाती थी, पर किसी तरह पेट भर जाता था, कुछ वक्त बच जाता था। आज वह भी नहीं आई। खैर, यह १५-२० दिन संकट के हैं। किसी तरह कट जायेंगे। तब पुस्तक का मसाला आप निःसंकोच भेज दीजिये। मैं खूब ध्यान से देख जाऊँगा। यह तो अपना खास काम है। ग़ैर लोग भी ऐसा काम लेते ही रहते हैं। रघुनन्दनजी को क्या किसी को भी बिना पुरस्कार लिये एक पंक्ति भी न दीजिए। यह व्यवहार का परमधर्म बना लीजिए। यह बात मैंने उनसे कह भी दी थी, और कान खोल दूँगा। रीडरों[1] के लिए जो लेख आप लिखेंगे उस पर भी पुरस्कार प्रकाशक से दिलवाऊँगा। इस समय जल्दी में हूँ। थोड़ा ही लिखकर ख़त्म करता हूँ। प० बालाप्रसादजी से नमस्ते कहिए और उनके कृपा-पत्र के लिए धन्यवाद। मैं ज़रूर उनके अनुरोध का पालन करूँगा। उनकी कुटीर पर हाज़री दूँगा। कभी कलकत्ते आना हुआ तो उन्हीं के पास उतरूँगा। चौबेजी से नमस्कार कहिए। प० मंगलदेवजी नमस्कार कहते हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२३

लसकाक कुटी,
दारागंज, प्रयाग
१-३-१९३२

प्रिय शर्माजी, नमस्कार।

आपके पत्र के उत्तर में एक कार्ड भेजा था। आपने दूसरा पत्र भेजने की बात लिखी थी जो नहीं मिला। 'विशाल भारत' में 'शिकार' का नोटिस देखा। अगले अंक में नोटिस की जगह 'गद्य गौरव' वाली सम्मति दे दीजिए तो ठीक हो। कानपुर से 'गद्य गौरव' की तीन कापियाँ प्रकाशक ने भेजी होंगी। उनमें एक आपके लिए है, दूसरी चतुर्वेदीजी के और तीसरी प० जगन्नाथप्रसादजी मिश्र के लिए है। आपके जाने के बाद 'भारत मित्र' मेरे नाम से आने लगा है। शायद आपने 'भारत मित्र' वालों से चर्चा की होगी। श्री श्रद्धेय वाजपेयीजी से पूछकर आपने उस बात की सूचना न दी। चतुर्वेदीजी की छाया आप पर भी पड़ गई। वह अवसर पत्रों की पी जाते हैं, ज़रूरी बात का भी जवाब नहीं देते। ला० हरदयालजी का पता मालूम होने पर लिखिए। आजकल घर से प्रिय काशीनाथ और रामनाथ भी यहाँ आ गये हैं। मेरे

---

१. उन दिनों आचार्यजी एक प्रकाशक के लिए पाठ्य-पुस्तक लिख रहे थे।

साथ ही मकान को लौटेंगे। आपको नमस्ते लिखाते हैं। आपके लेखों के ये लोग भी भक्त हैं। अपने भाई साहब से और चतुर्वेदीजी से प्रणाम कहिए। आशा है, आप सानन्द हैं। चतुर्वेदीजी से कहिए 'उर्दू' त्रैमासिक बहुत दिनों से नहीं पहुँचा। इस बीच के दो अंक नहीं मिले।

लेक्चर तैयार हो गया। फ़ेयर कापी हो रही है। २०० पेज होंगे। ५, ३ को होगा।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१२४

लसकाक कुटी,

दारागंज, इलाहाबाद

७-३-३२

प्रिय पण्डितजी, नमस्ते।

आपका ५ ता० का कार्ड, पैकट और पत्र सब एक साथ आज मिले। लेक्चर आशा से अधिक लम्बा और अच्छा हो गया। श्रोताओं ने बहुत पसन्द किया। पहले दिन श्रोताओं में जस्टिस सर अब्दुल क़ादिर (लाहौर), चीफ़ जस्टिस सर सुलेमान (इलाहाबाद) भी थे। उन्होंने भी ख़ास तौर पर दाद दी। ५ और ६ तारीख को लेक्चर हो चुका है। अन्तिम भाग आज पढ़ा जायगा। श्रोताओं की यही इच्छा हुई कि लेक्चर सब ही पढ़ा जाय। तीन-तीन बजे रात को जागकर परिश्रम तो बहुत करना पड़ा। बीच-बीच में विघ्न भी पड़ते रहे; पर सन्तोष इतना ही है कि किसी तरह लेक्चर पूरा हो गया। आज लेक्चर के बाद आपके लेख देखने शुरू करूँगा। देखकर एक-दो दिन में लौटा दूँगा। 'उर्दू' त्रैमासिक के इस बीच में जितने अंक आये हों वह सब यहाँ के पते पर न भेजकर घर के पते पर भेजिए। परसों तक यहाँ से चल देने का विचार है। 'उर्दू' के सब अंक और 'रूस की चिठ्ठी' घर के पते पर भिजवाइए।

'भारत मित्र' वालों से कह दीजिए, अब घर के पते पर पत्र जारी कर दे। यहाँ न भेजें। लालाजी का पता मालूम होने पर जरूर लिखिए। श्री वाजपेयीजी मिलें तो उनसे प्रणाम कह दीजिए।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१२५

दारागंज, प्रयाग

११-३-३२

प्रिय श्रीरामजी, नमस्कार।

पैकट की पहुँच का कार्ड उसी दिन लिख दिया था, पहुँचा होगा। परसों 'उर्दू' तिमाही भी मिल गया। धन्यवाद! इससे पहली दो संख्याएँ नहीं पहुँचीं, ढूँढ़-भालकर वह और घर के पते पर भिजवाएँ। व्याख्यान तीन दिन पढ़ा। ५-६ को एक-एक घंटा और ७ को दो-ढाई घंटे, फिर भी पूरा न पढ़ा जा सका। अच्छा-खासा लंबा हो गया है। उस पर 'लीडर' में कुछ लिखने को प० केशवदेव शर्मा ने लेक्चर की कापी नोट करने को ली थी, कल उनसे लेकर हिन्दुस्तानी एकेडमी वालों को सौंप दूंगा।

शिकार की १२ कापियाँ (लेख) मैंने देख दी हैं। 'खलीफ़ा के हाथ' नहीं देखा। उसे 'गद्य गौरव' से ठीक कर लीजिए।

एक स्लिप में लगे लेख अभी नहीं देख पाया। लेक्चर के बाद दो दिन काशीनाथ आदि को सैर कराने में लगे। कुछ थकावट भी हो गई है। पीछे देखकर भेज दूंगा। यह तो पुस्तक के अन्त में जाएँगे न? लेखों की क्रम-संख्या ठीक समझ में न आई। आपने कापियों पर पुराने अंक दिए हैं और वह भी कटे-फटे। मुझे इन अंकों से चिढ़-सी है। क्रम आप ठीक कर लीजिए। मेरे पास सिर्फ़ स्लिप की कापियाँ हैं। मैं दो-तीन दिन बाद यहाँ से चल दूंगा। दो-एक दिन कानपुर ठहरकर घर पहुँचूंगा। यहाँ अब एक मिनट रहने को भी जी नहीं चाहता। थक गया हूँ और ऊब गया हूँ। मसल है चमार को अर्श से बेगार उतर आती है।

साढ़े तीन सेर का पोथा जयपुर से आया पड़ा है। उसे देखना है। समझता था छोटी-मोटी कापी होगी, देख दूंगा। अत्यन्त आग्रह करने पर मानना पड़ा था। अब जो देखता हूँ एक पहाड़ सामने है। दूसरा बोझा (पुस्तक) सम्मेलन से मिला है, वह भी उतना ही बड़ा है। उसे पढ़कर सम्मति देनी है। एक महाशय 'वृन्द-सतसई' की टीका लिखे बैठे हैं। ४००, ५०० पेज की है इसे देख दो और भूमिका लिख दो। उन अन्तिम महाशय का तो आग्रह है कि इनकी पुस्तक देखकर ही यहाँ से उठूं। एक नहीं कई मुसीबतों में फँसा हूँ—

"मुझको तबाह चश्मे मुरव्वत ने कर दिया,
मिल जाय तो चुराऊँ किसी की नज़र को मैं।"

यहाँ से चलते वक़्त पत्र लिखूंगा। अब यहाँ के पते पर पत्र न भेजिए। हाँ, आपकी धोती जो यहाँ रह गई थी, उसे किस तरह आप तक पहुँचाया जाय? ३-४

दिन के बाद आप लिखें तो केयर ऑफ़ प्रो० गंगाशरण शर्मा, एम० ए०, पुराना कानपुर, के पते पर भेजिए। चौबेजी और प० बालाप्रसादजी से नमस्कार।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२६

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)
२१-३-१९३२

प्रिय पण्डितजी, नमस्ते।

मैं कल दोपहर यहाँ पहुँचा हूँ। १५ ता० को यहाँ से चला था। रास्ते में तीन दिन कानपुर ठहरा। प्रयाग से लेख रजिस्ट्री द्वारा भेज आया था। कानपुर में आपके पत्र की प्रतीक्षा की। आशा है, पुस्तक छप रही होगी। बाकी लेख भी दो-चार दिन बाद भेजूंगा। यहाँ गाँव में प्लेग फैल रही है। आठ महीने बाद गाँव में लौटा हूँ। प्लेग से परेशानी है। आशा है, आप प्रसन्न हैं। चतुर्वेदीजी से और प० बालाप्रसादजी से नमस्ते कहिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२७

काव्य-कुटीर, नायक नगला
४-४-३२

प्रिय प० श्रीरामजी, नमस्ते।

इलाहाबाद छोड़ते वक्त आपको एक पत्र लिखा था। कुछ आवश्यक लेख लौटा दिये थे। उसके बाद आपने कोई पत्र नहीं लिखा। उन परिशिष्ट लेखों की सामने आते ही अक्सर याद आ जाती है। घर पहुँचकर मैं २६-३-३२ को प्लेग की बीमारी से बीमार हो गया। अभी आराम नहीं हुआ। हमारे ज़रा-से गाँव में प्लेग ने बड़ा नृशंस नाच खेला है। चतुर्वेदीजी से प्रणाम कहिए। रामनाथ का प्रणाम स्वीकार कीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

६

प० हरिदत्त शास्त्री को लिखे गये पत्र

१२८

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
फाल्गुन सुदि १५, १८८५, शुक्रवार

हरये नमः।

तुम्हारा १०-३ का कार्ड परसों मिला था जिसकी पहुँच में एक संक्षिप्त पत्र आत्माराम के हाथ भेज चुका हूँ। आज भगीरथ शास्त्री वाला कार्ड मिला। वेदना देखकर तुम्हें 'प्रबन्ध-मंजरी' के टाइटिल के बारे में वेदना हुई, यह कुछ आश्चर्य की बात नहीं है। संसार आडम्बर का उपासक है। संस्थाओं में काम करने वाले लोगों में यह रोग और भी अधिक है क्योंकि उनकी दूकानदारी ही आडम्बर से चलती है। ढँढोरा सादगी का पीटते हैं और काम··· ।

"**विक्रीयन्ते न घण्टाभिर्गावः क्षीरविवर्जिताः**" की बात पहले कभी ठीक होगी, आज-कल तो बाँझ और निर्दुग्धा गायें गले में बड़े-बड़े घंटे बाँधकर बेची जा रही हैं। पुस्तक के (और संस्थाओं के भी) भीतर चाहे कुछ न हो; टाइटिल रंगीन हों, कुछ चित्र हों, पढ़ाई-लिखाई खाक न हो, मकान बढ़िया हों (रँगी हुई धोतियाँ हों) आँखों के अंधे लोग लट्टू हो जायेंगे। चाकचिक्य ने लोगों की आँखें चौंधिया दी हैं, सादी चीज पर ठहरतीं नहीं। अब तो इसकी परिणति यों होनी चाहिए—"**विक्रीयन्ते सुघण्टाभिर्गावः क्षीरविवर्जिताः**"। अब तो घण्टे की पूछ है गाय की नहीं।

प्रबन्ध-मंजरी के चित्रों और टाइटिल पेज आदि की छपाई का अभी ८०) के लगभग देना बाकी है। टाइटिल रंगीन ब्लाक का होता तो कम से कम ५०) और खर्च आते। बकरी जान से गई और खाने वाले को मजा न आया वाली बात है। तुम्हें क्या मालूम है किन दिक्कतों से इस रूप में भी प्रबन्ध-मंजरी निकल सकी है। दस-बीस मिनट लड़कों को बहका दिया, नहर की पटड़ी पर घूम आये, आचार्यजी और बड़े पण्डितजी से गप्प लड़ा ली, बस हो गया।

८ महीने बाद अभी परसों आकर बैठा हूँ। अभी दम नहीं लिया इस पर भी पूछते हो घर पर कब तक रहोगे। यह प्रबन्ध-मंजरी वाली ही अन्तिम लड़ाई थी। इससे तुम्हारा क्या मतलब है? दूसरी लड़ाई किससे छेड़ूँ? काशीनाथ से मिलने के लिए तुम

बड़ बेताब हो। तुम तो इस बीच में एकाध बार मिल भी लिये होगे। मैं तो ८-९ महीने बाद आया हूँ। इत्तफाक की बात थी कि वह यहाँ मौजूद थे। वरना मुझे अलमोड़ा जाना पड़ता, ऐसा मतालबा करते जरा तुम्हें सोचना चाहिए था। तुम्हारे पास गप्पें लड़ाने वालों की तो कमी नहीं है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२९

१२, आशुतोष दे लेन
गांगेय भवन, कलकत्ता
१९-११-२८

हरये नमः स्वस्ति वा।

पत्र की पहुँच में एक कार्ड पहुँच का लिख चुका हूँ। महारण्य पर्यवेक्षण के बाकी पेज भी भेजता हूँ। तुमने जो अशुद्ध प्रयोगों पर नोट दिये हैं, उन्हें एक जगह जमा करके लिख दो, उसकी सूचनिका में लिखो कि प्रबन्ध मंजरी के यह प्रयोग पाणिनीय व्याकरणानुसार असाधु हैं, बंगाल में सुपद्म व्याकरण का प्रचार है, शास्त्रीजी ने भी वहीं पढ़ा था, जैसा कि उनकी जीवनी में लिखा है। सम्भव है, ऐसे प्रयोग उस व्याकरण के अनुसार साधु हों, या लेख कापी करने वाले का प्रमाद हो, बहुत-से लेखों की कापी बंगला से नागराक्षरों में हुई थी। जिन लेखों में शास्त्रीजी ने परिवर्तन-परिवर्धन किया था या अपूर्ण लेखों की पूर्ति की थी वह बंगाक्षरों में ही की थी, उसी से देवनागराक्षरों में नकल की गई, इससे भी भ्रम होना संभव है। शास्त्रीजी को फिर कापियों के देखने का अवसर न मिला, यदि वह निबन्धों की कापियों की पुनरालोचना करते तो इन्हें ठीक कर देते। सम्पादक ने यह उचित न समझा कि मूल लेखों में कुछ परिवर्तन किया जाय, यथास्थित पाठ रहने दिया, पर पाठकों को, खासकर विद्यार्थियों को, ऐसे शब्दों के सम्बन्ध में भ्रम न हो इसलिए पृथक् तालिका दे दी है, इसके अनुसार यथास्थान ठीक कर लें। इससे शास्त्रीजी की बात भी रह जायगी और सम्पादक की भी। एक बार खूब ध्यान से पढ़कर ऐसे शब्दों के साधुरूप एकत्र कर लो, वह शुद्धि-पत्र से पूर्व दे दिये जायेंगे। शुद्धि-पत्र में सिर्फ़ छापे की अशुद्धियाँ ही रहें। मैं समझता हूँ मेरा मत अब तुम समझ गये होगे। शास्त्रीजी के दो पत्र भेजता हूँ, एक पत्र में बंगाक्षरों से नकल होने की बातें उन्होंने स्वयं लिखी हैं। एक पत्र में मंगलाचरण के सम्बन्ध में शंका-समाधान है, इसे भी मंगलाचरण के श्लोक की उस टिप्पणी में शामिल कर लो जो तुमने रामनाम पर दी है। और भी कहीं ऐसी टिप्पणी

की ज़रूरत समझो तो दे दो, जिससे विद्यार्थियों को समझने में सुगमता हो। ऐसा प्रायः कोर्स की किताबों में होता है। इन निबन्धों के विषय की संक्षिप्त समालोचना—सौष्ठव-प्रदर्शन—भी होनी चाहिए। महारण्य पर्यवेक्षण में मनुष्य-जाति की निकृष्टता सिद्ध की है। इसकी पुष्टि एक अंग्रेज़ लेखक के लेख से होती है। 'विशाल भारत' में उसका अनुवाद है जो वह भी भेजता हूँ। "वर्तमान युग का प्रथम कूटनीतिज्ञ" महारण्य पर्यवेक्षण के बाक़ी पेजों का प्रूफ़ भी भेजता हूँ, पूरा लेख पढ़ने से सम्मति स्थिर कर सकोगे।

लेखों की संक्षिप्त समालोचना ज़रूर होनी चाहिए। समर्पण का पद्य ठीक किया हो तो भेजो। पहुँच लिखो। लिफ़ाफ़े भेजता हूँ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३०

१२, आशुतोष दे लेन
२०-१२-२८

हरयेनमः

सिकन्दराबाद से पोस्ट किया हुआ और इसके बाद का दोनों पत्र यथासमय मिले। १०-१२ दिन से मैं कुछ बाक़ायदा बीमार हो गया हूँ। ज्वर और ज़ुकाम ने तंग कर रखा है, इसी से भूमिका आदि के फ़ार्म न छप सके। मैटर तो सब आ गया है। दो-एक सम्मतियाँ और मिल गई हैं। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री और महामहोपाध्याय अनन्तकृष्ण शास्त्री की भी मिलने वाली है। पर अस्वस्थता के कारण इन सबका सम्पादन करके प्रेस कापी तैयार नहीं हो सकी, इसी से गाड़ी अटकी है। शुद्धि-पत्र तो ठीक हो गया है। तुम्हारी समालोचना और सम्पादकीय वक्तव्य सब दो फ़ार्म से ज़्यादा का मैटर हो गया और शुद्धि-पत्र, सम्मति आदि सब मिलाकर दो फ़ार्म से अधिक की गुंजाइश नहीं। काट-छाँटकर ठीक करने की सोच रहा हूँ। यह समस्या भी आड़े आ रही है। तबीयत ठीक नहीं, काम परिश्रमसाध्य है। समालोचना का शीर्षक तो 'किमस्यांप्रतिपादितम्' ही ठीक रहेगा। भूमिका का 'निर्मथं निवेदनम्' या 'निवेद्यते', उन्हीं के शब्द रहें तो ठीक होगा न। स्मरयति 'स्मारयति' के अर्थ भेजता हूँ, शुद्ध है 'च' बेचारे को क्यों निकाला जाय। वह तो समुच्चयक है—ज़रूरी है। शब्दों की व्याख्या या निरुक्ति देने का विचार नहीं है इससे और दो-चार पेज बढ़ जायेंगे। 'दीर्यन्तेऽमीभिर्दाराः' पर कुछ न कहा जाय तो क्या हर्ज है। 'दार' शब्द के पुंस्त्व और बहुत्व की अपेक्षा से यह निरुक्ति की गई मालूम होती है—"दीर्यन्ते भेदबुद्धिमुत्पाद्य पृथक् क्रियन्ते पुरुषा अर्थात् भ्रातरोऽमीभिर्दारै रित्यर्थः"। एक इस

विषय का श्लोक है—"**भ्रातॄणां सततं भेदः कथं नाम न जायतां। अध्यापितानां पत्नीभिर्द्वेषविद्यां सदा निशि॥**" चंडीदास को चंडिदास क्यों किया जाय जब ङ्यापोः संज्ञा-छन्दसोर्बहुलम् में बहुलम् है। 'धर्म वृषभः यमराजविचारस्थ' को तुमने खींच-तान कर यमराज का भैंसा क्यों बना डाला ? वृषोत्सर्ग में छोड़े हुए बिजार का पारिभाषिक नाम धर्मवृषभः है, हिन्दी में धर्म सांड बोलते हैं, मिट्टी के तेल के कनस्तरों की एक छाप ट्रेडमार्क है, धर्म साँड बिजार की मूर्ति के नीचे यही लिखा रहता है। 'नृपकुमारी' यह समस्त पद ही कवि को अभीष्ट है। बंगाल में एक राजकुमारी 'विद्या' की कथा प्रसिद्ध है, इस पर बंगला और संस्कृत में कई नाटक और काव्य भी हैं जिनमें विद्या के विशेषणों में श्लेष द्वारा आदि विद्या का दुर्गा से साम्य दिखलाया है, उसी ओर कवि का इशारा है। 'पुंसामविमृश्यका रिताम्' के व्यंग्य की ओर तुम्हारा ध्यान नहीं गया इससे उल्टा समझ गये। मनुष्यों के विचार और आचरण के वैषम्य पर चुटकी ली है। जिन्हें स्त्रियों का स्वाछन्द्य या विधवा-विवाह पसन्द है उन्हें सीता-सावित्री का आदर्श स्त्रियों के सामने न रखना चाहिए और जिन्हें सीता-सावित्री का आदर्श मान्य है, उन्हें विधवा-विवाह या स्वच्छन्दता का प्रचार न करना चाहिए। बात बहुत ठीक और पते की कही है, इस पर एतराज न होना चाहिए। उसे एक बार फिर पढ़ो। 'कियत्तिथे' नहीं बनता तो मजबूरी है **'तदेकं मंगलार्थमाचार्यस्य मृश्यताम्'** की कोटि में पड़ा रहे, ऐसे बीसियों शब्द दंडी आदि के काव्यों में भरे पड़े हैं, जिन्हें व्याकरण साधु नहीं मानता।

'पुंसामविमृश्यकारिता' की समालोचना ठीक नहीं हुई उसे फिर ठीक करना चाहिए।

हृषीकेशजी के फोटो के नीचे एक परिचायक अनुष्टुप् समर्पण की शैली का और चाहिए। सूझ जाय तो भेज दो, पर जल्दी है। हाँ, ११६ पृ० पर 'स्त्री पुंसानां' और १३२ पृ० पर 'स्त्री पुंसयोः' को कोई पण्डित उस दिन कहते थे कि 'पुंसां' और 'पुंसोः' चाहिए। क्या यहाँ समास में अच् प्रत्यय न होगा। होना तो चाहिए, मैं तो समझता हूँ प्रयोग शुद्ध है। **'पाणिनीय स्मृत्यवाकृतानां पदानां सूचनिका'** के पदों को ३५ प्रार्थमहे—प्रार्थया महे; ३७ अनुवर्तध्वम्—अनुवर्त्तन्ताम्; ४२ समाकर्षयन्ति—समाकर्षन्ति; चाकास्त—चाचकाद्; ६३ वरी वृद्धते—वरी वृद्धयते; ६७ सन्दिग्धव्यम्—सन्देग्ध०; १६४ विललसुः—विलेसुः; १५४ परीक्षांचकार—परीक्षां चक्रे; ११८ तं वर्ज—तं वर्जयित्वा, इत्यादि को तो शुद्धि-पत्र में ही स्थान दे दिया जाय, पृथक् सूचनिका ठीक नहीं। ऐसे शब्दों की सूची १२६ पृ० तक ही है, उसके आगे के फ़ार्मों में अन्त तक एक दृष्टि और डाल जाओ। कोई ऐसा और शब्द दीख पड़े तो नोट करके भेज दो। कोई भयानक अशुद्धि रह न जाय।

यहाँ से निपटकर दो-चार दिन घर रहकर या असौड़े उतरकर वहीं से इन्दौर जाने का इरादा है। वहाँ के महामन्त्री किसी काम से बुला रहे हैं । कन्हैयासिंह भी वहीं हैं बहुत दिनों से बुला रहे हैं और जल्दी कर रहे हैं ।

यह काम—पुस्तक सम्पादक का अच्छा तो है, पर, बड़े झंझट का है, करोगे तो मालूम पड़ेगा । नहर के किनारे बैठकर नहीं हो सकता । २४ ता० को पूरे ५ महीने हो गये और अभी काम बाक़ी है । बस, अब थक गया ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१३१

८८-बी० बलराम दे स्ट्रीट,

कलकत्ता ८-१०-२६

हरये नम: ।

उस दिन का रजिस्टर्ड पैकट तुम्हें कल मिला होगा, पत्र और लेख पढ़ लिया होगा । एक उपन्यास—'कसौटी' की भूमिका लिखी थी वह भी भेजता हूँ, इसे भी पढ़ लो । भगवानदास दवे नामक किसी विद्यार्थी ने पत्र भेजकर कुछ शंका समाधान पूछा है, वह तुम्हारे पास भेजता हूँ इसका समाधान उसे लिख भेजो । बहुत पाण्डित्य मत बघारना, सीधी तरह से लिख देना जिससे बेचारा समझ जाय । विद्यार्थी विनयी मालूम होता है, जिज्ञासा रूप से लिखा है इसलिए उसे उत्तर मिलना चाहिए । जो उत्तर उसे भेजो उसकी नकल मेरे पास भी भेज देना, में भी देख लूँ क्या लिखा है । भगीरथ शास्त्री ने पद्मपराग पर बड़ा पत्र लिखा है, बड़ी दाद दी है और लिखा है कि इसे 'विशाल भारत' में छपवा दो । मैंने वह चतुर्वेदीजी को दे दिया है, दे क्या दिया है वह खुद ले गये हैं कि हो सकेगा तो समालोचना में इसका कहीं कुछ उपयोग करेंगे । तुम्हारा पत्र भी उन्होंने पढ़ा था, वह उन्हें ज्यादा पसन्द आया । कहने लगे कि समझदार मालूम होते हैं । समझ-बूझकर पते की बातें लिखी हैं । मैंने कहा कि देख लीजिए, आप लोग कहा करते हैं कि संस्कृत पण्डित निरे बुद्धू हुआ करते हैं, संस्कृत वालों में ऐसे लोग भी हैं जो तुम्हारी हिन्दी को भी खूब समझते हैं । चतुर्वेदीजी कल घर चले गये, बीस-पच्चीस दिन बाद कहीं लौटेंगे । अक्तूबर का 'विशाल भारत' रवाना करा गये हैं, तुम्हारे पास भी पहुँचेगा । वह साहित्यांक हो गया है । प्रबन्ध-मंजरी की छपाई का काम शुरू हो गया, पहला गेली प्रूफ़ आ गया पर लक्षण दीखते हैं कि यह पद्मपराग से भी अधिक जान मारेगा या मारेगी । मंजरी है न । पाँच दिन में एक फार्म सो भी अधूरा कम्पोज हुआ है यही गति रही तो कार्तिकी पर भी उधर न आ सकूँगा । मैं तो कहता हूँ पुस्तक छपाने से बड़ी मुसीबत और नहीं है । वही लोग अच्छे रहे जो इस छापे के युग

से पहले ही मर गये, कहीं व्यासजी को अपने पुराण और महाभारत छपाने पड़ते तो चीं बोल जाते, एकदम मर्त्य-लोक छोड़कर भाग जाते । और कहीं दुर्वासाजी का प्रेस से काम पड़ जाता तो कष्ट कंटक कट जाता। शाप देकर प्रेस वालों की सातकुलों को भस्म कर देते। कहीं दुर्वासाजी मिल जायें तो ख्याल रखना किसी तरह इन प्रेस वालों से उन्हें भिड़ा दिया जाय तो संसार का उद्धार हो जाय । पहले लोग हाथ से लिखते थे तो पुस्तक की कद्र जानते थे, पढ़ते थे, याद करते थे और आदर से रखते थे। आज के लोग हैं पैसा फेंका, पुस्तक खरीदी, फाड़-तोड़ कर अलग की, इसीलिए कुछ आता-जाता भी नहीं। ग्रन्थ-चुम्बक ही रह जाते हैं। ज्यों-ज्यों प्रेस से काम पड़ता है मेरी तो यही धारणा दृढ़ होती जाती है कि वह युग अच्छा था जब लोग श्रौत (कानों से काम लेने वाले) और स्मार्त (स्मृति से याद रखने वाले) होते थे। लिखना-पढ़ना सब फिज़ूल है और यह प्रेस-सिस्टम तो एकदम जहन्नुमी चीज़ है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३२

८, रॉयल एक्सचेंज प्लेस, कलकत्ता
९-१०-१९२९

हरये नम :

उस दिन एक रजिस्टर्ड पार्सल भेजा था, कल एक पत्र और भेजा है। संस्कृत निबन्ध छप रहे हैं। मुझे (यानी सम्पादक को) हृषीकेश शास्त्री की लेखशैली आधुनिक संस्कृत लेखकों में सबसे अधिक पसन्द थी। अपनी छात्रावस्था से सन् १८९३ ई० से ही मैं 'विद्योदयाक' ग्राहक था। जब तक वह निकला मैं उसे बराबर मँगाता रहा, पढ़ता रहा और उसके अंकों का सुरक्षित संग्रह करता रहा। उसी समय से यह इच्छा थी कि 'विद्योदय' के कुछ लेख यदि पृथक् पुस्तकाकार छप जायँ तो संस्कृतज्ञों के लिए एक चीज़ हो जाय, विद्यार्थियों के लिए एक आदर्श पाठ्य-पुस्तक हो जाय। संस्कृत गद्य की बहुत कुछ कमी इससे पूरी हो जाय। सन् १९१३ ई० में जब मैं महाविद्यालय ज्वालापुर में था तो 'विद्योदय' के कुछ निबन्धों को पुस्तकाकार छपाने का विचार हुआ। मैंने मुख्याध्यापकजी (श्री प० भीमसेन शर्मा) से अपना संकल्प प्रकट किया, उन्होंने अनुमोदन किया फिर प्रश्न उठा कि इन्हें छपाने का खर्च कहाँ से आवे और इन्हें खरीदेगा कौन ! इस पर यह बात तै पाई कि अपने मिलने वाले कुछ समर्थ संस्कृत-प्रेमियों से सहायता ली जाय। मुख्याध्यापकजी (श्री प० भीमसेन शर्मा) ने ऐसे सज्जनों की लिस्ट बनाई। उस वक्त कोई तीन सौ साढ़े तीन सौ रुपये का खर्च कूता गया था।

पन्द्रह-बीस आदमियों से थोड़ी-थोड़ी सहायता लेकर यह रक़म वसूल करने का प्रोग्राम बना। फिर हृषीकेश भट्टाचार्यजी से मैंने अपना यह इरादा प्रकट किया और प्रार्थना की कि यदि आप प्रकाशयिष्यमाणनिबन्धों की एक बार पुनरालोचना कर जायें, जो निबन्ध अधूरे हैं उन्हें पूरा कर दें, तो हम इस काम में हाथ लगावें। उन्होंने सहर्ष यह प्रस्ताव स्वीकार किया। मैंने उन निबन्धों की कापी उनके पास भेज दी। उन्होंने उस वृद्धावस्था में बड़ी तत्परता से निबन्धों का संशोधन, परिवर्धन और पूर्ति करके वापस भेज दिये और बड़ी प्रसन्नता प्रकट की। अब प्रेस की चिन्ता हुई कि कहाँ छपावें। शास्त्रीजी चाहते थे कि लास्ट प्रूफ़ वह स्वयं पास करें। इधर आस-पास का कोई प्रेस इतनी दूर प्रूफ़ भेजने को सम्मत न हुआ, बड़े-बड़े प्रेसों ने रेट बहुत माँगा। कलकत्ते के प्रेसों पर निगाह डाली, सौभाग्य से उन दिनों मेरे परिचित बाबू दुर्गाप्रसादजी गुप्त बी० एल० प्रेस के मैनेजर थे उन्होंने सस्ते रेट में, नये टाइप में छापना, स्वीकार किया। मैटर प्रेस में भेज दिया गया, अभी पहले फ़ार्म का प्रूफ़ तैयार हो ही पाया था कि शास्त्रीजी सहसा बीमार हो गये और चल बसे! उनकी यह आन्तरिक और अन्तिम इच्छा पूरी न हो सकी। प्रूफ़ पढ़ने के लिए शास्त्रीजी के सुपुत्र प० भवविभूति भट्टाचार्यजी को लिखा गया कि आप वहाँ प्रूफ़ पढ़ने का प्रबन्ध करें। शास्त्रीजी के कलकत्ते में और भाटपाड़े में कई विद्वान् शिष्य और आत्मीय थे, पर उन्हें प्रूफ़ पढ़ने का अभ्यास न था, और वह भी नागराक्षर लिपि का। लाचार होकर प्रूफ़ मुझे अपने पास मँगाने पड़े, मैं उन दिनों अहार में 'सतसई' की टीका लिख रहा था। अहार रेल से दूर है। प्रूफ़ पहुँचने में और फिर पढ़कर लौटाने में दस-बारह दिन लग जाते थे। कोई दो-ढाई महीने में डिमाई आठपेजी साईज़ के सिर्फ़ छै फ़ार्म छपे थे कि बा० दुर्गाप्रसादजी ने उस प्रेस से सम्बन्ध छोड़ दिया। नये प्रबन्धकर्ता ने इतनी दूर प्रूफ़ भेजना स्वीकार न किया, छपाई का काम बन्द हो गया। उसके बाद यूरोप का महासंग्राम छिड़ गया। काग़ज़ बहुत महँगा हो गया। प्रेस रेट दुगुने बढ़ गये, फिर आगे काम न हो सका। सिर्फ़ प्रारम्भ के छै: फार्म छपकर रह गये। प्रेस से छपे हुए फ़ार्म मँगा लिये। पड़े-पड़े उन्हें दीमक चाटने लगी। छपे हुए फ़ार्म खंडित हो गये। किसी फ़ार्म की चार सौ कापियाँ और किसी की तीन सौ बचीं। बाक़ी सब अग्निप्रभिर्भक्षितानि कीटैः कवलितानि। निबन्धों के छपाने का विचार बार-बार उठता रहा और बैठता रहा। जिन सज्जनों ने सहायता देने का वचन दिया था उनमें अनेक परलोक पधार गये। अन्त में मुख्याध्यापकजी चल दिये, जिनके प्रोत्साहन और साहाय्य-प्राप्ति पर प्रकाशन निर्भर था। मैं बड़े असमंजस में था कि निबन्ध किस तरह छपें। छपी हुई कापियाँ दीमकों की नज़र हो गईं। बाक़ी लिखी हुई कापियाँ जीर्ण-शीर्ण होकर फटती जा रही हैं, शास्त्रीजी इस इच्छा को अपने साथ ले गये। उनके निबन्ध जो उन्होंने इतने परिश्रम और

उल्लास से ठीक किये थे, उन्हें अपने जीवन-काल में मुद्रित न देख सके। मेरी जिन्दगी में भी शायद ये न छप सकेंगे। ये निबन्ध जिनके प्रकाशन का संकल्प जीवन के प्रारम्भ में किया था यों ही बरबाद जायँगे। यह अन्तर्वेदना मुझे व्याकुल कर रही थी। 'पद्मपराग' छपाने के लिए मुझे कलकत्ते आना पड़ा तो उन निबन्धों को भी साथ लेता आया। इस विचार से कि सम्भव है, इनके छपने का कुछ प्रबन्ध हो जाय। मैंने अपनी यह इच्छा 'विश्वमित्र' के सम्पादक श्रीयुत् मूलचन्द्रजी अग्रवाल से प्रकट की कि इसके लिए कुछ कीजिये। परोपकार का काम है, उन्होंने बड़े हर्ष से यह प्रस्ताव स्वीकार किया, उन्हीं की प्रधानभूत सहायता और सहयोग से यह प्रकाशित हो रहे हैं, इसके लिए उन्हें जितना धन्यवाद दिया जाय कम है। किस्से-कहानियों के लिए तो सहायता मिलना सुलभ है, पर, संस्कृत के लिए इस युग में कौन सहायता देता है। यह सोचकर यह सहायता और भी बहुमूल्य प्रतीत होती है। बस 'प्रबन्ध-मंजरी' की जीवनी लिख दो। कागज़ के एक ही ओर जिससे मुझे कापी न करनी पड़े उसे ही प्रेस में दे दूँ। ज़रा छोटी लिखना और विस्पष्ट लिखना। उत्तर लौटती डाक से दो। पहले पत्रों की पहुँच लिखो। बस, अब बन्द करता हूँ। प्रूफ़ आ गया।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३३

शान्ति निकेतनम् : विश्वभारती विद्यालय;
बोलपुर बीरभूमि
२-२१-२६

हरये नमः

परसों १०वाँ फ़ार्म, पत्र और शुद्धि-पत्र भेजा है, पहुँचा होगा। कल यहाँ आया था, आज लौट जाऊँगा। बहुत दिनों से 'विश्वभारती' देखने की इच्छा थी। श्री रवीन्द्र कवीन्द्र से आज भेंट हुई, बड़े प्रेम से मिले, बहुत-सी बातें हुईं। परिचय हो गया। श्री विधुशेखर भट्टाचार्य शास्त्री भी यहीं रहते हैं। बड़े अच्छे विद्वान् हैं। संस्कृत, प्राकृत, अंग्रेज़ी, तिब्बती आदि अनेक भाषाओं के पण्डित हैं। 'मित्रगोष्ठी' के सम्पादक यही थे, हिन्दी के पण्डित हैं और प्रेमी हैं। मेरे लेख बड़े चाव से पढ़ते हैं। 'विशाल भारत' में प्रकाशित लेखों का पारायण करते रहते हैं। मुख्याध्यापकजी के सम्बन्ध का लेख बहुत पसन्द किया। मिलते ही उसकी चर्चा की, महाविद्यालय का समाचार भी पूछा, मिलकर जी खुश हो गया। 'पद्मपराग' भेंट किया, 'प्रबन्ध-मंजरी' के फ़ार्म सम्मति के लिए दिये, लिखेंगे। यहाँ कोई ३०० छात्र-छात्राएँ हैं। कुछ हिन्दी पढ़ते हैं। रवीन्द्र-

नाथजी ने कहा, हमें हिन्दी साहित्य की शिक्षा के लिए सहायता दिलवाइये, जिसके लिए एक 'चेयर' क़ायम हो जाय। हमने कहा, बहुत अच्छा, आप एक अपील लिखिए। उसका समर्थन करके छाप देंगे। बहुत प्रसन्न हुए, कहा—कभी-कभी यहाँ आकर हिन्दी साहित्य पर व्याख्यान दिया कीजिए। 'विश्वभारती' पर एक लेख लिखने का विचार है। जगह अच्छी है। चंडीदास बंगीय कवि और जयदेव की जन्मभूमि यहाँ से पाँच-छः कोस पर है। आज ही लौटना है, नहीं तो देखते। तुमने बंकिम का 'लोकरहस्य' देखा है, न देखा हो तो देख डालिये। महारण्यपर्यवेक्षण से कुछ तुलना करनी होगी। पहले पत्र की पहुँच लिखा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३४

१२, आशुतोष दे लेन
६-१-३०

हरये नमः।

३-१-३० का खर्रा कल मिला। चंडीदास वाले उस पद्य पर मेरी नज़र न गई थी। मैं समझ रहा था 'चंडीदासस्य' इस हैडिंग की ही इसलाह तुमने शुद्धि-पत्र में की है। उस पद्य में तो ह्रस्व चाहिए ही। दारा शब्द की निरुक्ति तुम्हें पसन्द आई या उसका इस प्रकार उपहास किया गया है, बात समझ में न आई। वह निरुक्ति तुम्हें अभिप्रेत हो तो तुम्हारी समालोचना में सन्निविष्ट कर दी जाय। नहीं तो नहीं।

'पुंसामविमृश्यकारिता' के बारे में तुम्हें व्यर्थ ही भ्रम हो गया है। उसमें तो मुझे कोई ऐसी बात दिखाई नहीं देती जिस पर हाय-तोबा की जाय जैसी तुमने पहली समालोचना में की थी। लेखक ने विधवा-विवाह की उपादेयता या अनुपादेयता का उपदेश उसमें नहीं दिया। उसमें उपदेश और व्यवहार के वैषम्य पर कटाक्ष किया गया है, विधवा-विवाह विधेय है तो सीता-सावित्री के आदर्श के अनुकरण का उपदेश न देना चाहिए। मन्दोदरी और तारा के आदर्श का प्रचार करना चाहिए, ऐसा अगर कहा तो कहो क्या बुरा कहा। उस लेख का व्यंग्य दोनों ओर समान रूप से काम कर रहा है, यही उसमें चमत्कार है। इसकी दाद मिलनी चाहिए। मैं न दोषैकदृक् हूँ न गुणैकदृक्। मेरा व्यक्तिगत कोई द्वेष नहीं है, न कभी था, मेल की दशा में भी मेरी यह राय थी जिसे मैंने कभी छिपाया नहीं। उसने मुझे व्यक्तिगत रूप में कभी कोई हानि नहीं पहुँचाई। मेरे साथ उसका व्यवहार सम्मानपूर्ण रहा है। उसका कारण चाहे जो हो, मुझे उससे कभी स्पर्धा या ईर्ष्या नहीं हुई। मुख्याध्यापकजी के साथ उसके दुष्ट व्यवहार ने मुझे प्रकट

रूप में विरोध करने के लिए विवश कर दिया और मुझे इसके लिए ज़रा भी पश्चात्ताप नहीं है। बल्कि हर्ष है कि मैंने अन्याय का प्रतिकार करके अपने कर्तव्य का पालन किया। किसी को ऊपर चढ़ाने या नीचे गिराने के अभिप्राय से न मैंने कभी किसी की प्रशंसा की है न निन्दा। जैसा कि तुम समझ रहे हो यह तुम्हारी भूल या लड़कपन है। नातजर्बेकारी है। किसी की निन्दा या प्रशंसा में मैं कभी मक्कारी या ज़मानासाज़ी से काम नहीं लेता, जो हृद्गत भाव होता है उसे छिपाता नहीं। छिपाना मक्कारी या बुज़दिली समझता हूँ, मेरी निन्दा या स्तुति सदा यथार्थ ही होती है। इसका मुझे दावा नहीं, उसमें भ्रान्तियाँ या भूल हो सकती हैं, पर बदनीयती या चाटुकारिता नहीं। मैं 'भाट' नहीं हूँ कि किसी की यों ही प्रशंसा करता फिरूँ, न 'चाँद' के सम्पादक की तरह किसी समाज या व्यक्ति को बदनाम करके स्वार्थ-सिद्धि का जाल फैलाता हूँ। फिर मैं अपनी निष्पक्षता सिद्ध करने के लिए किसी की कृति में व्यर्थ की दोषोद्भावना **"गुणन केनापि जने नवद्यो दोषान्तरोक्तिः खलुतत्खलत्वम्"** वाली बात है इससे बेशक बचता हूँ। अस्तु, 'पुंसामविमृश्यकारिता' की जो नई समालोचना तुमने की है वह मेरी समझ में नहीं आई। यह बात नहीं कि मैं विधवा-विवाह का विरोधी हूँ, पर मुझे उसमें विधवा-विवाह का विरोध नहीं दीखता। इसलिए डाक्टर अन्सारी के शब्दों में कहना पड़ता है कि मैं क्या करूँ मेरी राय तुमसे नहीं मिलती।

२०५ पृष्ठ पर 'सीता सावित्री प्रमुखाइव' की जगह, प्रमुखानामिव क्यों किया जाय। **"सीता सावित्री वद् युष्माभिः पातिव्रत्यमवलम्भ्यतामिति वयं उपदिश्यामहे, यूंय सावित्री साता प्रमुखा इव पातिव्रत्यपरायणा भवत, इतियावत्।"** यथास्थित पाठ का क्या ऐसा अर्थ नहीं हो सकेगा। जो वास्तव में अशुद्धि हो उसे तो ज़रूर शुद्धि-पत्र में दिखाना चाहिए, वे कौनसी बेचारी अशुद्धियाँ हैं जिन्हें पुस्तक में छपनार्थ जगह मिलनी कठिन हो रही है। जो अशुद्धियाँ हैं उन सबको जगह मिली है पर श्री गुरुजी की तरह यथास्थित पाठ की संगति बिठाना ही मुझे अच्छा मालूम होता है, किसी प्रकार भी संगति न बैठ सके तो फिर मजबूरी है। **'इयं प्रतिकृतिः श्री मद्हृषीकेशस्य शास्त्रिणः'** तक तो ठीक है पर उत्तरार्थ **'तस्मै त्वदीय न्यायेन मंजरीयं समर्थ्यते'** क्यों ठीक नहीं, यह तुम्हें क्यों न सूझा। 'प्रबन्ध-मंजरी' उन्हें समर्पित तो नहीं हो रही। इसलिए उत्तरार्द्ध 'यल्लेखनीसमुद्भूता (प्रसूताहि) मंजरीयंप्रकाश्यते (विराजते)' ऐसा कुछ होना चाहिए था, इसलिए तुम इसमें फेल हो गये। उत्तरार्ध ठीक करो तो पास होगे। 'यदुपत्रं यदुपत्रं' यथास्थित ही रहेंगे। तुम्हारी व्याख्या का द्राविडी प्राणायाम तो पूरा गोरखधन्धा हो गया है।

स्त्री पुंसयोः स्त्रीपुंसानां के साधुत्व में मुझे स्वयं सन्देह नहीं था। 'अचतुरविचतुर' सूत्र तो याद नहीं आया था पर साधु है, यह धारणा अवश्य थी। उस दिन एक व्याकरणाचार्य

दबी ज़बान से इनके साधुत्व पर सन्देह-सा प्रकट कर रहे थे, ये वैयाकरण भी निरे ठुंठ खसूची होते हैं, जो उदाहरण जिस रूप में किसी सूत्र की व्याख्या में आ गये हैं, बस वहीं तक इनकी गति है। वह भी पुस्तक सामने हो तब, नहीं तो आयँ बायँ शायँ, जो है सो, बूंकने लगते हैं।

सम्पादकीय वक्तव्य में नये सिरे से लिख रहा हूँ, समालोचना तुम्हारे या तुम दोनों के नाम से जायगी। पहला सम्पादकीय वक्तव्य मैंने अब देखा तो मुझे बहुत पसन्द न आया। बड़ा बहुत है, शब्द कठिन भी हैं छोटा-सा टूटा-फूटा जैसा बन जायगा दे दूँगा। तबीयत उकता रही है। लिखने को जी नहीं चाहता पर लिखना पड़ रहा है। कभी सोचता हूँ, सम्पादकीय न रहे तो क्या हानि है? भूमिका आ गई। समालोचना मिल गई। सम्मतियाँ भी दो-एक प्राप्त हो गईं, बहुत हैं। भूमिका, समालोचना और सम्मति-प्रदाताओं का धन्यवाद देकर छुटकारा पाऊँ।

मस्त मतवाला की सूचना तुमने नहीं दी थी। शायद पढ़ा भी नहीं, नहीं तो किसी लेख की दाद तो देते, कम से कम 'मेरी तो बस यही मान्यता' और 'पंजाब मेल में' की चर्चा तो जरूर करते।

हाँ, सच कहना इन जाड़ों में किसी दिन तुम न्हाये हो?

'श्वेत प्रदर' की प० मुरारीलाल वाली दवा याद नहीं आती। दवा है तो अनुभूत। एक काम करो कि वैद्यजी प० रामचन्द्रजी के पास चरकोक्त योग, योगकाष्ठादि है, इस रोग की सिद्ध औषध है। नाम इस समय याद नहीं आता। काशीनाथ की चाची को उसी से आराम हुआ था। उससे अच्छी दवा इस रोग की नहीं है। लो नाम भी याद आ गया, पुष्पानुग चूर्ण नाम है, बनी-बनाई मिल जायगी। दस-पन्द्रह दिन के सेवन से रोग शान्त हो जायगा। जाओ और वैद्यजी से ले आओ। जिस पथ्य और अनुपात से बतलावें, सेवन कराओ। सिर्फ़ कनखल तक जाना पड़ेगा। प्रदर बड़ा बुरा रोग है। इसकी उपेक्षा करना ठीक नहीं है। फ़ौरन इलाज होना चाहिए। खटाई-मिठाई, मिर्च-मसाला न खाना चाहिए। पुष्पानुग से अवश्य ही लाभ होगा। चरक में देख लो इसकी कितनी प्रशंसा लिखी है। वास्तव में प्रशंसनीय है। मैं समझता हूँ, खर्रे की सब बातों का उत्तर दे दिया। कोई बात छूट गई हो तो फिर याद दिलाओ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३५

गांगेय भवन
१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
१३-२-३०

हरये नमः ।

विचित्र पत्र आज मिला । इस नये आविष्कार के लिए बधाई है ।

सम्मतियाँ श्री गुरुजी की और श्री विधुशेखर भट्टाचार्य, प० सकलनारायण पाण्डेय, प० योगेन्द्रनाथ भट्टाचार्य, प० दुर्गाचरण, प० कान्तकृष्ण शास्त्री, प० हरिप्रसाद शास्त्री की भी प्राप्त हुई हैं । शंकराचार्य की सम्मति अभी नहीं आई, आ जायगी तो दे दी जायगी । नहीं तो नहीं । सब सम्मतियाँ कोई एक फ़ार्म की होंगी । धन्यवाद महामहोपाध्याय प० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी को और तुम दोनों को, सम्मति-दाताओं को, एक वाक्य में समष्टि रूप से सहायता देने-दिलाने वालों में बा० मूलचन्द्र ('विश्वमित्र'-सम्पादक), गांगेय भवनाधिप प० गांगेय नरोत्तम शास्त्री (संस्कृत हिन्दी के सुकवि), प० बनारसीदास चतुर्वेदी ('विशाल भारत'-सम्पादक) को देना है ।

और हाँ, भट्टाचार्यजी के सुपुत्र प० भवविभूति, एम० ए०, विद्याभूषण को भी । गोपाल ने भी कुछ सहायता कापी करने और प्रूफ़ पढ़ने में दी है । अशुद्धियों का कारण बंगाक्षरों से नागराक्षरों में प्रतिलिपि शास्त्रीजी फिर न देख सके, प्रूफ़ देखते वक़्त अशुद्धियों के निराकरण की उनकी कुछ इच्छा थी, जो पूरी न हो सकी । सम्पादक की अयोग्यता, प्रेस के भूतों की कृपा इत्यादि दो-चार कारण संक्षिप्त और तुले हुए शब्दों में । हाँ, इसके उल्लेख की भी ज़रूरत है कि शास्त्रीजी ने केवल प्रथम तीन निबन्धों को ही देखा था । बाक़ी छपाते समय वैसे ही 'विद्योदय' से उद्धृत कर दिये गये हैं । आत्मवायरुद्गार बहुत विस्तृत शतपृष्ठ काव्य निबन्ध है । बहुत ही उपादेय और शिक्षाप्रद है । उसमें बहुत थोड़ा भाग उद्धृत किया जा सका है, शेष विस्तरभिया छोड़ दिया है । दूसरे संस्करण की नौबत आई तो सब उद्धृत कर दिया जायगा इत्यादि बातें सम्पादकीय के उपसंहार में आ जानी चाहिएँ । जिससे पूर्वापर संगति मिल जाय, बहुत बढ़े भी नहीं । कई दिन से तबीयत ऐसी ख़राब है कि क़लम उठाने को जी नहीं चाहता । इस बीच में इतना ज़रूर हुआ कि छपाई के बिल चुकाने का प्रबन्ध हो गया और यह गांगेयजी के उद्योग से हुआ । बड़ी सुजनता और आत्मीयता का व्यवहार किया है ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३६

काव्य कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
८-४-३०

हरये नमः ।

४-४-३० का पत्र कल मिला । पहले पत्रों की पहुँच में एक कार्ड कई दिन हुए लिख चुका हूँ । तुम्हारी समालोचना-शक्ति जाग्रत या जागरित हो रही है, खूब समझते हो । 'विशाल भारत' की समालोचना अच्छी की है । तुम्हारा पत्र चतुर्वेदीजी को भेज रहा हूँ । चतुर्वेदीजी विचित्र प्रकृति के आदमी हैं, स्पष्टवादिता का कोई न कोई बहाना ढूंढ़ते रहते हैं । निष्पक्षता की छाप बिठाने का उन्हें कुछ खब्त है । अक्सर ऐसी ऊल-जलूल बातें कह जाते हैं जिनका सिर-पैर नहीं होता, पर हृदय के अच्छे हैं, ज़रा लम्बे हैं, इससे कुछ बेवकूफ़ी का अंश भी है । अरबी में एक कहावत है—**'कुल् उल् तवीलुल अहमकुन'** लम्बे आदमी बेवकूफ़ होते हैं । खैर, आदमी अच्छे हैं, लिखने भी अच्छा लगे हैं । सच तो यह है कलकत्ते में उनसे बड़ी सहायता मिली । तुम्हारा पत्र पढ़ेंगे तो खुश हो जायेंगे ।

वृन्दावन की जयन्ती पर जाने का कुछ-कुछ विचार तो था पर अब नहीं रहा । बीमारी से निर्बलता बढ़ गई, साहस नहीं पड़ता । संस्थाओं के उत्सवों पर कष्ट भी कम नहीं होता, कोई आकर्षण भी नहीं ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३७

नायक नगला
२०-१-३१

हरये नमः ।

स्मृति-अंक की समालोचना पहुँची । खूब लिखी है, मुझे खुशी हुई कि तुम्हें दाद देने की कला आ गई, बात की तह को पहुँच जाते हो, यह बात बहुत मुश्किल है **'कश्चितमाम् वेत्ति तत्वतः'** । प०चन्द्रदत्त में भी इस रोग का किसी तरह संचार कराओ । पत्रादि पढ़ने की चाट लगाओ । विद्यार्थी का यह अंक सत्यदेव (काँगड़ी) को भी पढ़ने के लिए दे देना, गौड़जी के पास तो यह अंक शायद आया हो । चिड़ियाघर के लिए हरिशंकरजी को लिख दिया है, तुम्हारे और गौड़जी के पास भेजेंगे, तुम भी लिख दो तो जल्दी आजाय ।

आजाय तो सत्यदेव को भी दे देना, पिपठिषु और श्रद्धालु हैं । 'मनई' का अर्थ पूरबिया है, पूर्व प्रयाग काशी आदि की तरफ़ मनुष्य को 'मनई' कहते हैं । प० श्रीरामजी का लेख पढ़ो तो रहस्य खुल जाय । प० महावीरप्रसादजी द्विवेदी के पास प्र० म० और 'पद्मपराग' भेजा था, उन्हें बहुत पसन्द आई । बड़ी अच्छी दाद दी है, नकल भेजता हूँ। पटना संस्कृत कालिज के सस्कृत-प्रोफ़ेसर प० देवदत्त त्रिपाठीजी ने भी अच्छी सम्मति भेजी है, अंग्रेज़ी में है । समस्याओं में अष्टाध्यायी और न्याय-दर्शन के सूत्र खूब फिट किये हैं ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३८

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)

हरये नमः ।

पत्र और निमन्त्रण-पत्र मिला, समाचार जाना, उत्सव पर आने में असमर्थ हूँ। परसों आगरे जा रहा हूँ । मौक़ा मिला तो वहीं से एक दिन के लिए अजमेर भी जाऊँगा ।

डाक्टर हरदत्त शास्त्री बड़े ही सहृदय सज्जन हैं । उनके लख में अशुद्धियों का होना सम्भव है । किसके लेख में अशुद्धियाँ नहीं होतीं ? निकालने वालों ने तो माघ और श्री हर्ष और कालिदास तक की अशुद्धियाँ निकाली हैं । रात-दिन जिस भाषा को बोलते हैं उसमें भी अशुद्धियाँ हो जाती हैं । फिर देववाणी में, जो मनुष्य की भाषा नहीं है, अशुद्धियाँ हों तो आश्चर्य ही क्या है । उनकी उपेक्षा करनी चाहिए । उनकी समालोचना को नकल करके और अशुद्धियों को ठीक करके 'मञ्जु-भाषिणी' में भेज दो या काशी से 'सुप्रभात' आदि जो दो-एक पत्र निकलते थे कोई भी निकलता हो तो वहाँ भेज दो । जहाँ भेजो प्र० म० की एक प्रति भी साथ भेज दो, तो अच्छा हो ।

गौडजी की एक कविता 'अब्दुल्ला' के नाम से 'अभ्युदय' में निकली है । तुमने पढ़ी ? जिस पर्चे में यह कविता निकली है उससे पहले पर्चे में भारत के विरुद्ध वह तीसरा लेख निकला है । 'अभ्युदय' गौडजी के पास या काँगड़ी में आता होगा । मिल जाय तो लेकर पढ़ लेना ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३८

नायक नगला

हरये नमः ।

कल ऐन रविवार के दिन तुम्हारा डाक-पत्र मिला, समाचार ज्ञात भये। सांख्यतीर्थ के विवाहतीर्थ बनने की तिथि पहले कार्ड में तो तुमने ३० अक्तूबर लिखी थी (कार्ड मौजूद है) अब ३० नवम्बर लिखते हो, यह क्या गोलमाल है ? तिथि और मास में तो वैदिक व्यत्यय या (बहुलम्) का विषय नहीं है, यानी नवम्बर स्थाने अक्तूबर नहीं होता, अबके पत्र में शायद दिसम्बर हो जाय। जब कि कोई महीना ही नियत नहीं है तो निमन्त्रण-स्वीकृति की सूचना कैसे दूँ ? सांख्यतीर्थ की बरात के बारे में एक बात सुझाता हूँ, बरात 'वेताल' के नेतृत्व में पैदल आवे, रास्ते में 'म० वि०' का भी नोटिस होता जायगा, खर्च भी बच जायगा। पत्रों में सूचना भी छप जायगी, धूम मच जायगी। एक खास बात होगी, तीन पड़ाव में आसानी से पहुँच जायगी, हर पड़ाव से पत्रों को तार समाचार भेज दिया जाय, बोलो तुम्हारी क्या राय है ? मैं समझता हूँ, श्री आचार्यजी इस प्रस्ताव को पसन्द करेंगे, लंका में रेलों का बायकाट हो रहा है। श्री उड़िया स्वामीजी कभी रेलों में चढ़ते ही नहीं, क्या 'म०वि०' के लोग इतना आदर्श भी लोगों के सामने न रख सकेंगे। रखना तो चाहिए आगे तुम जानो। प० लक्ष्मीनारायणजी की ओर से विश्वास दिलाता हूँ कि उन्हें पैदल वर-यात्रा पर जरा भी आपत्ति न होगी, बल्कि वह खुश होंगे। वह मेरे मिलने वाले और समझदार सज्जन हैं। हाँ, झंडियाँ सब के हाथ में हों, झंडियों पर मोटो हो—'विवाह करना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' और वेताल के गले में ताशा हो या ढप अथवा ढोल जो वह सँभाल सके, और हाँ, श्री महाप्रभुजी जरूर साथ में हों, बीच-बीच में कीर्तन होता आवे, महाप्रभुजी गावें, वेताल नाचें और तुम ताल दो, प० चन्द्रभानुजी को मँजीरे दे देना और सत्यव्रत को करताल, बस न भूतो न भविष्यति शिवजी की बरात का नया संस्करण होगा।

बंगाली दर्शनाध्यापक को भी प्र० म० दे दो यदि मुनासिब समझो, बाक़ी म० वि० में जो कोई लं १) से कम में न दो, गुंजायश नहीं है।

सं० प० पत्रिका का उत्तर बहुत ठीक है, पर वे दोनों संख्यायें भी पास हों तो देखूँ कोई बात रह तो नहीं गई है, भेज देना। वाजपेयीजी जो कुछ बुरा-भला लिखें मेरी तरफ़ से खुली छुट्टी है, मैं कुछ न बोलूँगा। न बुरा मानूँगा, पर ज़रा सोच-समझ कर लिखें, कहीं रग पर नश्तर न मार दें, अनर्थ न हो जाय, यही डर है उनकी प्रतिज्ञा बड़ी विचित्र है कि सतसई में अलंकार ही नहीं है। मालूम होता है वह 'सतसई' को

नये फ़ैशन की अलंकार-विहीना लेडी सिद्ध करके छोड़ेंगे, अच्छी बात है, बहुत-से आचार्यों के मत में अलंकार के बिना भी कविता हो सकती है, वह ठीक है। अनलंकृती पुनः क्वापि पर पहले ज़माने में ऐसे लोग भी थे जो अलंकारों पर जान देते थे, जयदेव का वह पद्य प्रसिद्ध है 'अनलंकृती ... ...'। बिहारी इस पिछले सम्प्रदाय के नहीं थे यह कौन कह सकता है। अस्तु, गौड़जी से मिलते रहो। परमात्मा करे उनके सत्संग से तुम्हारा यह अंग्रेज़ी का भूत उतर जाय, बस आज इतना ही, सुना था कि महाप्रभुजी उधर ही कहीं हैं। तुम उनकी बात को गोल कर जाते हो, कुछ नहीं लिखते, कहाँ हैं। क्या उनसे नाराज़ हो, जो पूछने पर भी उनकी चर्चा से ऐसे बचते हो जैसे लाहौल से शैतान डरता है, या राम-नाम से भूत भागता है।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

७

श्री राजेश्वरप्रसाद् नारायणसिंह को लिखे गये पत्र

१४०

गुरुकुल, कांगड़ी (बिजनौर)

प्रियवर राजेश्वर बाबू, नमस्कार ।

कल आपका लेखों वाला पैकट मिल गया । धन्यवाद । पैकट मिलने से पहले ही मैं एक पत्र रवाना कर चुका था । लेख आज लखनऊ भेज रहा हूँ । ये लेख आप ही के नाम से छपेंगे । यानी समालोचना, संकलन, जीवन, कवि और शीर्षक-शून्य सम्पादकीय टिप्पनी वाला नोट । यह नोट मेरी सम्पादकीय टिप्पनियों में नहीं छप सकेगा । इसमें अंग्रेज़ी और बंगाली साहित्य का उल्लेख है । मैं इनमें से एक भी नहीं जानता । कल के पत्र में भी पारसनाथजी को टिप्पनी के विषयों की सूची भेजी है । यदि वह उनमें से किसी विषय पर कुछ लिख भेजेंगे तो अच्छा होगा । अब और तक़ाज़ा करने का तो मुझे हक़ रहा नहीं । बहुत कुछ भेज दिया और ख़ूब भेज दिया । इतनी भी आशा न थी । पर 'लाभाल्लोभ: प्रवर्त्तते' के अनुसार अभी कुछ और भी आशा करना अनुचित नहीं कहा जायगा । आप अपना और पारसनाथजी का फ़ोटो शीघ्र लखनऊ भेज दीजिए । जिससे ब्लॉक बन जायँ । लेखों के साथ चित्र देने का भी नियम कर दिया है । लेखकों का संक्षिप्त परिचय भी दिया जायगा । और यह काम मैं खुद करूँगा । पारसनाथजी के परिचय के हिंट्स आप लिख दीजिए उनके आधार पर मैं लिखूंगा । अपना परिचय पारसनाथजी से लिखा दीजिए । इस तरह साध्य-साधक भाव से काम चल जायगा । इसमें कस्रेनफ़्सी से काम न लीजिए । यानी फ़ोटो अलग-अलग भेजिए और परिचय के हिंट्स भी ।

पारसनाथजी पटने से कहाँ जायँगे । इसकी सूचना आप ही दीजिए और उनसे नमस्कार भी कह दीजिए । आपकी कृपाओं का अनुगृहीत हूँ । इसमें पारसनाथजी को भी शामिल कर लीजिये तो मुज़ायका नहीं ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१४१

गुरुकुल कांगड़ी (बिजनौर)
७-३-२८

प्रियवर, नमस्कार।

५, ३ का कृपा-पत्र आज मिला। मैं असौड़ा (मेरठ) चौ० रघुवीरनारायण सिंहजी की पौत्री के विवाह में गया था। बरात बख्त्यारपुर के पास के एक गाँव से भूमिहार ब्राह्मणों की आई थी। यह इस प्रकार का पहला ही सम्बन्ध हुआ है। इसके घटक सर गणेशदत्त सिंह और श्री स्वा० सहजानन्दजी महाराज थे। इस प्रकार के दो-एक सम्बन्ध और भी शीघ्र ही होने वाले हैं। श्री पारसनाथजी को भी निमन्त्रण भेजा था। वहाँ पहुँचकर मैंने तार भी दिया, पर वह न आये। तार का उत्तर भी न मिला। असेम्बली के झंझट में फँसे हुए दीखते हैं। वह मिलते तो लेख-संग्रह के सम्बन्ध में भी बातें करता। कवि शंकरजी को भी बुलाया था, वह आये थे। उनकी कविता के बारे में भी बातचीत हो जाती। मुझे दिल्ली जाने का अवकाश न मिला। अब लेख-संग्रह के प्रकाशन में विलम्ब हो रहा है, शंकरजी की कविता भी तैयार है। उसे एक सज्जन और माँग रहे हैं, यदि आप प्रकाशित कराना चाहें जैसा कि पहले विचार था तो निर्णय हो जाना चाहिए। पारसनाथजी को अवकाश नहीं है। लेख-संग्रह का प्रकाशन भी खटाई में पड़ता ही दीखता है। अस्तु।

प० रामावतारजी तो महामहोपाध्याय हो गये अब तो उनका रोग शान्त हो जाना चाहिए।

हाँ, आपने ईसामसीह की उक्ति ठीक लिखी है। दो विरुद्ध काम एक साथ नहीं हो सकते। यानी पारसनाथजी बिडलाओं के यहाँ रहते हुए साहित्य-सेवा के लिए समय नहीं निकाल सकते।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१४२

गुरुकुल, कांगड़ी (बिजनौर)
२५-७-२८

प्रिय राजेश्वरप्रसादजी, नमस्कार।

सम्मेलन से लौटकर मैं कल शाम २४, ७ को ही यहाँ पहुँचा हूँ। आज आपके सब पत्र पढ़े। एक महीने की डाक यहाँ पड़ी थी। ३-४ घण्टे में मुश्किल से पढ़ पाया हूँ। कई ज़रूरी पत्रों का उत्तर आज ही देना है। पहले आप ही को पत्र लिख रहा हूँ।

मुज़फ़्फ़रपुर में आपकी अनुपस्थिति बराबर खटकती रही, आपके भाई साहब श्रीयुत् पारसनाथसिंहजी और श्री कार्यीजी के कारण वहाँ मुझे विशेष सुभीता रहा। बातें बहुत हैं, कहाँ तक लिखूँ। २७ ता० को आप मंसूरी छोड़ रहे हैं। आपसे मुलाक़ात न हो सकेगी। इसका मुझे अफ़सोस ही रहेगा। यहाँ से कनखल पहुँचना इन दिनों श्री शंकर शृंग की चढ़ाई से कम कष्टप्रद नहीं है। हिम्मत तो कर रहा हूँ कि २७ को कनखल पहुँचकर आप से मिलूँ। पर मनोरथ की सफलता में सन्देह ही है। आप हरिद्वार उतरें तो सीधे कनखल वैद्यराज प० रामचन्द्र शर्मा के पास पहुँचिये। उन्हें मैं लिख रहा हूँ। वह आपके ठहरने का प्रबन्ध कर देंगे। मैं आ सका तो वहीं आप से मिलूँगा। मैं न भी आ सका तो भी आपको हरिद्वार कनखल उतरकर ही जाना चाहिए। श्रावन की गंगा का स्नान करते जाइए।

'सुधा' की साहित्य-संख्या के लिए आपकी एक छोटी-सी भी गल्प मिल जाती तो अच्छा था। अभी दस-बारह दिन का समय तो है। आपने जो कविता भेजी है वह तो उसमें जायगी ही।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१४३

गुरुकुल, कांगड़ी (बिजनौर)
१८-८-२८

प्रिय राजेश्वर बाबू, नमस्कार।

लेख की पहुँच में मुश्तर्का पत्र लिख चुका हूँ। लेख के लिए आपको विशेष रूप से धन्यवाद देता हूँ। सचमुच आप न पकड़ते तो लेख न मिलता। अब इनका फ़ोटो और भिजवा दीजिए, और टिप्पनियाँ लिखवा दीजिए। टिप्पनियाँ लिखने में आप भी सहायता दीजिए यानी कुछ आप भी लिखिए कुछ इनसे लिखाइए।

प्रोफ़ेसर अवधबिहारीसिंहजी इस संख्या में न जा सके। इसका अफ़सोस है, उनकी जीवनी भी तैयार हो जानी चाहिए। यह काम आप अपने ज़िम्मे लीजिए। दुर्गा-पूजा की छुट्टियों में मुज़फ़्फ़रपुर जाकर उनके चित्र-चरित्र और काव्य का संग्रह कीजिए। 'ज़माना' (कानपुर) के जुलाई-नम्बर में सम्मेलन की चर्चा में मेरे भाषण से प्रोफ़ेसर साहब के सम्बन्ध की पंक्तियाँ उद्धृत हुई हैं।

फ़ोटो भेजने और टिप्पनी लिखाने का काम भी आपके सुपुर्द करके मैं निश्चिन्त हूँ। आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१४४

कलकत्ता

२३-१०-२८

प्रियवर, नमस्कार ।

बहुत दिन से आपका कुशल समाचार नहीं मिला। कहाँ हैं ? कैसे हैं ? क्या कर रहे हैं । आज 'सुधा' में आपका लेख दीख पड़ा । बहुत ख़ूब रहा । 'किस तरह मैं···' शेर मन्सूर का नहीं, ज़ौक़ का है । मन्सूर की जीवनी में उनके भाव का द्योतक समझकर लिखा गया है । अकबर के दो शेरों का आपने ख़ूब इस्तेमाल किया है । लेख बहुत अच्छा है । पर पारसनाथजी की तरह आप भी 'सुस्त' लिखने-पढ़ने में आलसी होते जाते हैं ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१४५

८८-बी० बलराम दे स्ट्रीट, कलकत्ता

२६-१०-२८

प्रिय महोदय, नमस्कार ।

२५-१० का कृपा-पत्र आज मिला, समाचार जानकर प्रसन्नता हुई । मैं समझता था मेरे कलकत्ते रहने का हाल आपको मालूम है । विनायक बाबू और झाजी के पास आपके पत्र आते थे, यहाँ से भी इन लोगों के पत्र जाते थे । समझा था कि शायद मुझसे ही पत्र-व्यवहार के लिए आपको फ़ुरसत नहीं है । उधर आप समझते थे कि शायद मैं चला गया । दोनों ओर से ग़लतफ़हमी हुई । मैं संस्कृत निबन्धों के झंझट में बेतरह फँस गया । समझा था कि १५ दिन में इस काम से छुट्टी पा जाऊँगा । प्रेस का वादा भी यही था, पर प्रेस के भूत तो बड़े ही शैतान होते हैं । आज २६ दिन में कुल चार फ़ार्म छापकर दिये हैं । अभी आठ बाक़ी हैं । बीच में छोड़कर जाना भी मुनासिब नहीं मालूम होता । मैं तो कलकत्ते को फ़ौरन छोड़ना चाहता हूँ, पर कलकत्ता ही नहीं छोड़ता । कलकत्ता इस बार कम्बल होकर लिपट गया है । एक महीने का काम समझकर आया था, परसों २४-१० को तीन महीने बीत गये । मेरे कारण आप लोगों को भी कष्ट हुआ । इसका मुझे स्वास्थ्य-संहार से भी अधिक खेद है ।

औषध बीच में आपके वैद्यराज की खाई थी । लाभ भी हुआ फिर वैसी ही हालत हो गई । औषध से तर्केमवालात कर रखी है । निबन्ध छप जाय तो यहाँ से भागूँ । तभी आराम होगा । वैसे तबीयत पहले की निसबत तो अच्छी है । पर साफ़ नहीं । ख़ैर, जहाँ इस हालत में इतने दिन कटे हैं, ये भी कट जायेंगे ।

आप यहाँ कब तक पधारेंगे ? अब कल या परसों यह मकान खाली हो रहा है। मैं गांगेय-भवन, १२ आशुतोष दे लेन, में चला जाऊँगा। निबन्ध छपने तक वहीं रहूँगा। उस शेर के मुतल्लिक 'सुधा' में नोट लिखने की जरूरत नहीं। यह शेर मैंने 'दिव्य प्रेमी मन्सूर' में भी उद्धृत किया है। शायद उसी से आपने ऐसा समझा है। पटने जाकर जल्दी मकान का इन्तज़ाम कीजिए। कम्पनी की रजिस्ट्री तो पहले ही करा लेनी चाहिए थी। यह तो क़ानूनी ग़लती हुई। अब देर न होनी चाहिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१४६

काव्य-कुटीर
नायक नगला (बिजनौर)
२३-४-३०

प्रिय राजेश्वर बाबू, नमस्कार।

बहुत दिन से आपका कुशल समाचार नहीं मिला। चिन्ता है। २५ मार्च को मैंने एक कार्ड वीरसिंह के पते पर आपको लिखा था। इसका उत्तर भी नहीं मिला। क्या कार्ड आपको मिला नहीं ? आप आजकल कहाँ हैं ? यह पत्र आप तक पहुँच जाय तो उत्तर दीजिए। पारसनाथजी का भी कुछ पता नहीं; कहाँ विराजमान हैं ? क्या कर रहे हैं ? पुराने 'जगत् सेठ' को पूरा कर रहे हैं, या वर्तमान जगत् सेठ-बिडलाजी के लिए कोई स्पीच तैयार कर रहे हैं ?

कौन्सिल के मेम्बरों के लिए सर्वसाधारण से पत्र-व्यवहार निषिद्ध न हो तो मुझे आशा है, आप उत्तर देने की यथापूर्व उदारता दिखाने में कृपणता न करेंगे। मैं सिर्फ कुशल समाचार जानना चाहता हूँ। (वर्तमान आन्दोलन में सहयोग देने की प्रार्थना नहीं करूँगा) हाँ, श्री जटाधर झाजी एक दम अन्तर्धान (अन्तर्हित) हो गये थे। उनका कुछ पता चला ? यदि अभी तक लापता हैं तो आपने उनकी गुमशुदगी की रिपोर्ट पुलिस में की ? समाचारपत्रों में कोई विज्ञप्ति निकाली ? भारती पब्लिशर्स लिमिटेड का क्या हो रहा है ? प० यमुना कार्यीजी (उनका वह सुन्दर-सा उपनाम याद नहीं आता, क्या था) आजकल कहाँ हैं ? बहुत दिनों से 'लोक-संग्रह' के दर्शन नहीं हुए। बन्द हो गया कि चलता है।

श्री स्वामी सहजानन्दजी का भी कुछ पता नहीं। अभी जेल-यात्रियों में तो उनका शुभ नाम निकला नहीं ? वह इस तरह खामोश बैठने वाले नहीं हैं। श्री हरदयालसिंह तो कृष्ण-मन्दिर में पहुँच गये। उधर बिरादरी के वीरों में और किस-किस ने उनका अनुकरण किया है ? इधर श्रीमान् चौधरी रघुवीरनारायणसिंहजी भी जेल पहुंच गये।

इस वर्ष आप गर्मियाँ कहाँ बितायेंगे ? परिवार के और सब लोग तो सानन्द हैं ? आपका स्वास्थ्य कैसा है ?

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१४७

इन्दौर
२०-५-३०

प्रिय राजेश्वर बाबू, सस्नेह नमस्कार।

आपका कृपा-पत्र घर होता हुआ मुझे कल ही यहाँ मिला है। इस यादआवरी के लिए शुक्रिया अदा करता हूँ।

इस बीच में मैंने आपको दो पत्र भेजे थे, पर एक का भी उत्तर न पाकर मैं चुप हो रहा। आप लिखते हैं कि बहुत दिन से पत्र नहीं मिला, मैं हैरान हूँ। मेरे दोनों पत्र आखिर कहाँ गये! एक वीरसिंह के पते पर, दूसरा मुज़फ़्फ़रपुर सुरसम्ड हाउस के ठिकाने पर भेजा था। खैर, मैं फिर भी आपको पत्र लिखने का विचार कर रहा था कि कहाँ भेजूँ ? मैं समझता था कि आप दार्जिलिंग या नैनीताल जा पहुँचे। ऊपर पहुँचकर नीचे के आदमियों को भूल गये। मुज़फ़्फ़रपुर में हैजे के उपद्रव का वर्णन पत्रों में पढ़कर चिन्ता हो रही थी, और अभी है। पारसनाथजी का परिवार इस समय कहाँ है ? पीर मुहम्मदपुर या अमनौरशरीफ़। चन्द्रशेखर के कुशल समाचार के लिए चिन्तित हूँ। वह कहाँ हैं। कुशली हैं ? आपको मालूम हो तो लिखिए। पारसनाथजी पटने में क्या कर रहे हैं ? कलकत्ते से परसों वाजपेयीजी यहाँ पधारे हैं। उनसे भी पूछने पर यही पता चला था कि पटने पहुँचने की खबर है। किसी को पत्र लिखना, पता देना तो उनके स्वभाव के ही विरुद्ध है। वह कहाँ विराजमान हैं। इसके लिए अटकल या अनुमान से एवं 'किल श्रूयते', कहकर ही काम चलाना पड़ता है। बड़े आदमी होने और बड़े आदमियों की संगति में रहने का फल यदि इतना भी न हो, तो फिर बात ही क्या।

"सर्वाणि नीति शास्त्रवचनानि व्याकुर्व्येरन्" बार-बार ध्यान दिलाने और प्रार्थना करने पर भी उन्हें 'पद्मपराग' पर चार पंक्तियाँ लिखकर किसी पत्र में भेजने की फ़ुरसत आज तक न मिली। और खड़े-खड़े उनसे कई लेख प० रामशंकर त्रिपाठी ने लिखा लिये। काश पारसनाथ-स्तोत्र मुझे याद होता। मैं उनसे कम से कम अपने पत्रों के उत्तर का ही वरदान प्राप्त कर सकता। पत्र बन्द हो गये और जो बाक़ी हैं वह बन्द होने को हैं। पर 'पद्मपराग' का नोटिस सिवाय लोक-संग्रह के कहीं देखने में नहीं आया। मैंने लिखा-पढ़ी करके अपने असर को काम में लाकर दस-पाँच जगह

समालोचना प्रकाशित कराकर 'कटिंग्स' भेजीं। वह भी दाखिल दफ़्तर हो गई। मुझे तो उनकी पहुँच तक न मिली।

५ मई के 'भारत'-प्रयाग में भारत-सम्पादक श्रीयुत प० वेंकटेश नारायणजी तिवारी, एम० ए० ने 'पद्मपराग' की समालोचना लिखी है, भेजता हूं। देख लीजिए, और इसे भी यथापूर्व दाखिल दफ़्तर करने के लिए सम्पादकजी के पास भेज दीजिये।

पटने आप मुझे क्यों बुला रहे हैं। मुझे न अवकाश है न अभी निकट भविष्य में (जाड़ों से पहले) वहाँ आने का साहस होता है। कलकत्ते की स्थिति में मेरे स्वास्थ्य का संहार तो हो ही चुका था। स्वास्थ्य-सम्पादन के लिए मैं कुछ दिन निरन्तर घर ही रहना चाहता था। पर मुझे कार्यवश ७ मई को यहाँ आना पड़ा। मिस्टर वापना गत अगस्त से, जब मैं कलकत्ते में था, बराबर बुला रहे थे। अब महाराज के अधिकार-प्राप्ति महोत्सव पर निमन्त्रित करके आने के लिए उन्होंने ज़ोर दिया। इसलिए आना पड़ा। मालवे के ऐतिहासिक तीर्थों के दर्शन की बहुत दिनों से प्रबल इच्छा थी। इस समय यहाँ आने में यह भी प्रबल कारण हुआ, एक चिरकालीन मनोरथ पूरा हो गया। भोज की धारानगरी और माँडू का महाक़िला महामहोपाध्याय गौरीशंकरजी ओझा के साथ देखने का अलभ्य अवसर मिल गया। ख़ूब देखा ओझाजी के सुपुत्र प० रामेश्वर ओझा, एम० ए०, यहाँ पुरातत्व विभाग के अधिष्ठाता हैं। उन्हें साथ लेकर परसों उज्जैन की भी सैर की। यहाँ से (उदयपुर) होता हुआ आगरे होकर घर लौट जाऊँगा। आगरे के शान्ति प्रेस में 'पद्मपराग' के द्वितीय भाग को छपाने का प्रबन्ध करना है।

श्रीयुत् अर्जुनदासजी केडिया की पुस्तक सम्मति के लिए मुझे ठीक उस दिन मिली जिस दिन मैं यहाँ के लिए प्रस्थान कर रहा था। सफ़र और गरमी का मौसम, ध्यान से पढ़ने का अवकाश न मिल सका। उस दिन रेल में कुछ अंश पढ़ा था। पुस्तक काम की है। बहुत परिश्रम और पांडित्य से लिखी है। संक्षिप्त सम्मति दो-चार दिन में लिख भेजूंगा। पुस्तक के साथ जो विस्तृत पत्र उन्होंने लिखा था उसमें आपके अनुरोध का उल्लेख था। पर, आप अब इतने दिन बाद अनुरोध कर रहे हैं। वह भी उनके चार-पाँच पत्र पहुँच चुकने के बाद। श्री पारसनाथजी का गुण, मैं देखता हूँ, आप में भी शनैः शनैः संक्रांत हो रहा है। होना चाहिए।

"जमाले हम नशीं दरमन असर कर्द"

मैं आठ-दस दिन यहाँ और हूँ। वाजपेयीजी भी आये हुए हैं। वह भी कुछ दिन ठहरेंगे। वह यहाँ काम करने की कोई स्कीम सोच रहे हैं। आप क्या इस वर्ष पहाड़ पर नहीं जायेंगे? आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१४८

काव्य-कुटीर
नायक नगला, (चाँदपुर)
२६-७-३०

प्रिय राजेश्वर बाबू, नमस्कार ।

आपका कृपा-पत्र २३-७ का आज मिला । मैं इन्दौर की यात्रा से २४-७ को मकान पर पहुँचा हूँ । इस बीच में कई बार आपको पत्र लिखने का ख़याल आया । मैंने इन्दौर से आपके पत्र के उत्तर में एक पत्र भेजा था । घर के पते पर उसका जवाब न मिलने से सन्देह हुआ कि आप मकान पर नहीं हैं । कहीं शैल-विहार कर रहे हैं । इसलिए पत्र न लिखा था । मेरे नाम आपका एक कार्ड यहाँ मेरे पीछे आया था, जिसमें आपने भगवतीशरणसिंहजी एम० एल० सी० के नाम सतसई भेजने का आर्डर दिया था । सतसई यथासमय भेज दी गई थी । आज गया से वी० पी० लौट आई, पते की चिट भेजता हूँ । यदि फिर भेजने की ज़रूरत हो तो लिखिए । भेंट में भेज दी जाये ?

दुकान पर आपके लेखानुसार सतसई की १५ प्रतियाँ रेलवे पार्सल से भिजवा रहा हूँ । स्टेशन का नाम आपने नहीं लिखा । अटकल से पटना स्टेशन पर भेज रहा हूँ । यहाँ कई दिन से अति वृष्टि हो रही है । गाँव के पास एक बरसाती नाला है, वह चढ़ रहा है । डाकखाना और रेलवे स्टेशन (चाँदपुर) ६ मील दूर है । कल मेह बन्द रहा और नाला उतर गया, तो पार्सल कल ही रवाना हो जायगा । वर्ना दो-एक दिन की देर होगी । इससे शीघ्र आर्डर की तामील न हो सके तो मजबूरी है । आप 'चरखा-संघ' के काम में जुट गये, यह जानकर हर्ष हुआ और आश्चर्य भी । आपके इस राष्ट्रीय अनुष्ठान की बात सुनकर स्वामीजी प्रसन्न होंगे ।

मैं ६-८-३० के आस-पास गाजीपुर जेल में श्रीमान् चौ० रघुवीरनारायण-सिंहजी से मिलने गाज़ीपुर जाऊँगा । साथ में चौधरी साहब के सुपुत्र रघुवंशनारायण-सिंह भी होंगे । तीन महीने की लम्बी यात्रा से थक गया हूँ । दूसरे आजकल मच्छरों की फ़सल के दिन हैं । इसलिए आगे न बढ़ सकूँगा । वर्ना आप से भी मिलता ।

हिन्दोस्तानी एकेडमी प्रयाग, निर्णयार्थ पुरस्करणीय पुस्तकें मँगवा रही है, १५ अगस्त तक पुस्तकें मँगाई हैं । चि० काशीनाथ पद्मपराग भेजने के लिए कह रहे हैं । एकेडमी का रंग-ढंग देख मुझे तो उचित निर्णय की आशा नहीं है । ७ पुस्तकें भेजनी होंगी । लाटरी का टिकट खरीदना है । अस्तु । 'पद्मपराग' की निकासी कैसी हो रही है ? दुकान से नई पुस्तकें कौन-कौन निकली हैं ? कोई पुस्तक मेरे काम की हो तो

वी० पी० से भिजवा दीजिए। श्री पारसनाथजी महाराज कहाँ विराजमान हैं, उनका समाचार आपने कुछ न लिखा। क्या बिड़लाजी को छोड़ दिया ? वह जो आप अंग्रेजी दैनिक निकालने जा रहे थे, उसका क्या हुआ, अपना कुशल समाचार लिखिए। भाई साहब से नमस्कार कहिए। इधर वर्षा ग़ज़ब ढा रही है। बहुत-सी खेती मारी गई और अभी खैर नहीं दीखती। उस पर टिड्डी दल का उत्पात फिर प्रारम्भ होने को है। लक्षण अच्छे नहीं हैं। उधर क्या दशा है ? आशा है, आप सपरिवार सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१४६

राजामंडी, आगरा
३-१०-३०

प्रिय राजेश्वर बाबू, नमस्कार।

आपका २८-८ का कृपा-पत्र जो हिन्दी प्रेस प्रयाग के पते पर भेजा था, मुझे यहाँ मिला। मैं २९-८ को यहाँ आ गया हूँ। श्रीयुत अध्यापक रामदास रायजी से मैं परिचित हूँ। उन्होंने अपनी कुछ पुस्तकें मुज़फ़्फ़रपुर सम्मेलन के समय दी थीं। अभिज्ञान शाकुन्तल के अनुवाद की भूमिका मैं खुशी से लिख देता, पर, इस समय मैं बहुत ही व्यग्र हूँ। हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद से एक लेक्चर फ़रवरी तक तैयार करना है। उसके लिए मसाला जुटा रहा हूँ। बा० पारसनाथजी से भी उस बारे में कुछ परामर्श करना था। प्रयाग से पटना आने का भी इरादा था। पर मौक़ा न मिला। इधर चला आया। सोमवार तक मकान पहुँचना है।

अभिज्ञान शाकुन्तल की भूमिका पारसनाथजी बहुत अच्छी तरह लिख सकेंगे। उन्हीं से लिखा दीजिए। मुझे मनोयोगपूर्वक सब पुस्तक पढ़ने का अवकाश न मिलेगा। इसलिए मजबूरी है।

रायजी गाज़ीपुर के रहने वाले हैं, यह मुझे मालूम न था। वर्ना मैं उनसे ग़ाज़ीपुर मिलता, चौधरी साहब से मिलने मैं २४-८ को ग़ाज़ीपुर गया था। अस्तु, अब चौधरी साहब ग़ाज़ीपुर से यहाँ आगरे आ गये हैं। सुना है, स्वामीजी छूटकर आ गये। आपकी संस्था का क्या हाल है ? आजकल कौनसी पुस्तक छप रही है ? कितनी पुस्तकें प्रकाशित हो गईं। पुस्तकों की बिक्री कैसी है ? आपका हेडक्वार्टर कहाँ रहता है ? श्री पारसनाथजी तो पटने ही होंगे ? आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५०

हिन्दी प्रेस, प्रयाग
२१-११-३१

प्रिय राजेश्वर बाबू, नमस्कार।

आपका १८-११ का कृपा-पत्र मिला। घर के पते पर भेजा हुआ पत्र मुझे नहीं मिला। मैं सितम्बर के शुरू से बाहर ही हूँ। एकेडमी के लेक्चर की तैयारी के लिए ही इधर आया था। पहले काशी गया था। वहाँ बीमार हो गया। एक महीना बीमारी और उसकी कमज़ोरी में गया। अब आकर लिखने-पढ़ने लायक़ हुआ हूँ। उसी में लगा हूँ, जनवरी के अन्त में लेक्चर होगा। आशा है, तब तक लेक्चर तैयार हो जायगा।

पारसनाथजी वहाँ जायँगे, जहाँ बिडलाजी ले जायँगे। बिडलाजी के साथ ही लौटेंगे। पहले आना सम्भव नहीं है। इस बार उनसे इस यात्रा पर आप पुस्तक लिखवाइए। लिख दीजिए, नोट करते रहें। लिख देंगे तो बड़ी रोचक होगी। उनकी अनुपस्थिति से भारती पब्लिशर्स कम्पनी को जो हानि पहुँची है उसकी पूर्ति हो जायगी। 'हिन्दी संसार' को एक अच्छी चीज़ मिल जायगी। इसके लिए उन पर अभी से पूरी ताक़त से ज़ोर डालिए। यह काम आप करा लेंगे तो मैं आपको भूरि-भूरि कोटिशः धन्यवाद और बधाई दूँगा। नये 'विशाल भारत' में वाजपेयीजी के संस्मरण छपे हैं। उसमें पारसनाथजी का भी ज़िक्रे ख़ैर है। पारसनाथजी यदि साहित्य-सेवा में जुट जाते तो, हिन्दी का भण्डार भर जाता। पर, इस पुण्य कार्य में बिडलाजी भरपूर बाधक हो रहे हैं, वह कुछ न करने देंगे। स्वराज्य गवर्नमेन्ट मिल जाय तो इसके लिए एक क़ानून बनवाया जाय कि पारसनाथजी सिवाय साहित्य-सेवा के और कुछ न करने पावें। इसके लिए ज़रूरत समझी जाय तो उन्हें कहीं नज़रबन्द कर दिया जाय। आशा है, मेरे इस विचार से आप सहमत होंगे। पारसनाथजी को आप पत्र लिखें तो इसकी उन्हें सूचना दे दीजिए। पारसनाथजी से लाला हरदयालजी का पता तो पूछिए, सुना है, वह लन्दन ही में हैं। उनके पास मुझे पुस्तकें 'पद्मपराग' आदि भेजनी हैं। यदि पता चल जाय तो मुझे सूचना दिलवाइए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५१

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
२५-३-३२

प्रियवर, नमस्कार।

बहुत दिनों से आपका कुशल समाचार नहीं मिला। 'गद्य-गौरव' की प्रति कानपुर से आपकी सेवा में भिजवाई थी, पहुँची होगी। श्री पारसनाथजी आजकल किस लोक की सैर कर रहे हैं? पर्यटन् विवधान् लोकान्। इस मर्त्यलोक में कब पधारेंगे?

मैं २०-३ को यहाँ मकान पर लौटकर आया हूँ। हिन्दुस्तानी एकेडमी का लेक्चर ५, ६, ७ मार्च को हो गया। विद्वान् श्रोताओं को पसन्द आया। मेहनत ठिकाने लगी। आपका आजकल क्य शुग़ल है? परिवार में तो सब प्रकार से कुशल है? यहाँ गाँव में आजकल, प्लेग का दौरदौरा है। और सब कुशल हैं। आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

८

श्री जगन्नाथप्रसाद 'मिलिन्द' को लिखे गये पत्र

१५२

१२, आशुतोष दे लेन,
गाँगेय भवन, कलकत्ता
२७-१२-२८

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

आपका २३-१२-२८ का कार्ड यथासमय पहुँचा। मेरी तबीयत इस बीच में कुछ ज्यादा ख़राब रही। इसलिए उत्तर देर से दे रहा हूँ। तबीयत अभी ठीक नहीं। फिर भी चिन्ता की कोई बात नहीं। दो-चार दिन में चंगा हो जाऊँगा। चतुर्वेदीजी प्रवासी-अंक के झमेले में मस्त हैं। कई दिन से मिले भी नहीं। न मालूम उन्होंने शान्ति-निकेतन को उस बारे में कुछ लिखा है कि नहीं। मैंने याद तो दिला दी थी। श्रीयुत् घनश्यामदासजी बिडला तो 'विश्व-भारती' के सम्बन्ध में संतुष्ट नहीं हैं। उनसे कुछ आशा नहीं। अब बड़े बिडला (श्रीयुत् जुगलकिशोरजी) से मिलने का विचार हो रहा है। पर अभी वह यहाँ हैं नहीं। इस बीच में आ गये तो मिलकर, नहीं तो पत्र द्वारा, 'विश्व-भारती' वाला प्रस्ताव उनके सामने रखा जायगा। 'सिद्धिस्तु दैवे स्थिता'। यहाँ 'चाँद' के मारवाड़ी अंक को लेकर नई हलचल मची है, जिसका समाचार 'स्वतन्त्र' के मारवाड़ी अंक से मालूम होगा। इसे पढ़िए। इसमें का 'जूते' शीर्षक लेख श्री शास्त्रीजी को भी सुनाइए। इसके लेखक वही 'पद्म-पराग' के सम्पादक महाशय हैं। समालोचनात्मक लेखों के छपाने का संकल्प तो है, पर सफलता कब तक मिलेगी, ठीक नहीं कहा जा सकता। हाँ, उस दिन वह जर्मन सज्जन ईश्वरदत्त विद्यालंकार का पता पूछते थे। उनका पता मैंने शास्त्रीजी को लिख दिया था। वह आजकल संस्कृत कालेज में (मुजफ़्फ़रपुर) डा० ईश्वरदत्त पी-एच० डी० के रूप में विराजमान हैं। मुन्शी अजमेरी को, जिनकी चर्चा उस दिन चली थी, कलकत्ते बुलाने का विचार है। पत्र लिखा है। यदि वह आ गये और मेरी मौजूदगी में आ गये तो उन्हें 'विश्व-भारती' में भी लाएँगे। उनके बुलाने का एक उद्देश्य यह भी है।

आश्चर्य और खेद है कि वहाँ रहते हुए बंगला पढ़ने का साधन भी आपके लिए सुलभ नहीं है। मैं तो कहने वाला था कि आप वहाँ रहते हुए संस्कृत का अभ्यास करें। श्री शास्त्रीजी से प्रणाम कहिये।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५३

१२, आशुतोष दे लेन,
गांगेय भवन, कलकत्ता
मार्गशीर्ष सुदी ५, ८६

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

कृपा-कार्ड मिला। धन्यवाद। 'विश्व-भारती' में हिन्दी-हित की दृष्टि से आपका कष्ट स्वीकार करके भी रहना वांछनीय है। हिन्दी के लिए उसका फल अच्छा ही होगा। हिन्दी छात्रों में हिन्दी के प्रति भक्ति और अनुराग का संचार कीजिए। अच्छे साहित्य के पढ़ने का चसका लगाइए। बाक़ी समय पर सब कुछ हो जायगा। 'विश्व-भारती' में हिन्दी को समुचित स्थान दिलाने के लिए आन्दोलन करना पड़ेगा। 'विश्व-भारती' के विधाताओं को झँझोड़ना पड़ेगा। हिन्दी वालों को भी राह पर लाना होगा। ऐसी ज़रूरी बातों की ओर उनका ध्यान ही नहीं है। कल बाबू राजेन्द्र-प्रसादजी मिले थे, उन्हें सब कथा सुना दी है। उनसे सहयोग की आशा है। जैसा कि उस दिन चर्चा हुई थी, गुरुदेव एक अपील निकाल दें तो ठीक है। उसके आधार पर हम लोग आन्दोलन करें।

'प्रबन्ध-मंजरी' का ११वाँ फ़ॉर्म आज छपकर मिला है। भेजता हूँ, श्री शास्त्रीजी को दे दीजिए। बस दो फ़ॉर्म और हैं। ३, ४ दिन में वह भी छप जायँगे। उनके अतिरिक्त सम्पादकीय वक्तव्य, सम्मतियाँ और शुद्धि-पत्र, कोई डेढ़ फ़ॉर्म होगा। कलकत्ते के प्रेस बड़े ही रद्दी हैं। प्रूफ़ पढ़ते-पढ़ते आँखों का तेल और कमर का कचूमर निकल गया। पर अशुद्धियाँ फिर भी न निकलीं। जो छपा हुआ फ़ॉर्म भेजता हूँ, इसमें भी इसका रोना रोया गया है कि कलकत्ते में शुद्ध पुस्तक नहीं छपती। श्री शास्त्रीजी महाराज से प्रणाम कहिए। श्री हरिहरनाथ और सुरेश्वरजी को यथा योग्य।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५४

१२, आशुतोष दे लेन,
गांगेय भवन, कलकत्ता
२१-१२-२६

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

आपका पत्र यथासमय पहुँचा। मैं इस बीच में ४, ५ दिन के लिए वैद्यनाथ धाम गुरुकुल के उत्सव पर चला गया था। वहाँ से आकर बीमार हो गया था। अभी तक तबीयत साफ़ नहीं है। इसी कारण पत्रोत्तर में विलम्ब हुआ। आपने जो लिखा

है ठीक तो है, पर कुछ-न-कुछ हो ही जायगा—

"रात दिन चक्कर में हैं सात आसमाँ,
हो रहेगा कुछ न कुछ घबरायें क्या।"

आन्दोलन, कहा-सुनी शुरू कर दी है। यहाँ अपने दो भाषणों में भी मैंने चर्चा की थी। हिन्दी प्रेमियों को 'विश्व-भारती' का ध्यान दिलाया था, किसी दिन बिड़लाजी से मिलकर कहूँगा। पत्रों में लिखा-पढ़ी करने का विचार है। चतुर्वेदीजी (प० बनारसीदास चतुर्वेदी) 'विशाल भारत' में व्यस्त हैं, ज़रा उधर उन्हें फ़ुरसत मिले, इधर मैं निबन्धों की झंझट से छुट्टी पा जाऊँ, तो कुछ आन्दोलन का प्रोग्राम बने। आशा है, आप सानन्द हैं। श्री शास्त्रीजी महाराज से प्रणाम निवेदन कर दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५५

१२, आशुतोष दे लेन,
गांगेय भवन, कलकत्ता
१४-१-३०

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

पत्र आपके यथासमय पहुँचे। मानसिक अस्वस्थता से उत्तर न दे सका। श्री शास्त्रीजी की जो संस्कृत कविता 'विशाल भारत' के लिए आई है, वह एन्ड्रूज साहब (देशबन्धु सी० एफ़० एण्ड्रूज़) की जीवनी में पढ़ चुका हूँ। कविता बहुत सुन्दर है। आजकल तो शास्त्रीजी संस्कृत से रूठे हुए हैं। प्राकृत के पाले पड़ गए हैं। संस्कृत का दुर्भाग्य है। मैंने याद तो कई बार दिलाई पर चौबेजी और ही उधेड़-बुन में रहते हैं। व्यर्थ का पत्र-व्यवहार तो बहुत करते हैं, पर मतलब की बात भूल जाते हैं। मालूम हुआ, उन्होंने अब तक नहीं लिखा, और अब लिखना बेकार-सा होगा। मुझे इसका अफ़सोस है। मैं अभी उलझन में हूँ। देखिए, यहाँ से कब तक छुटकारा होता है। तबीयत अच्छी नहीं रहती और काम खत्म होने में नहीं आता।

आप शास्त्रीजी से प्रणाम कह दीजिएगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५६

गांगेय भवन
१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
३१-१-३०

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते ।

बहुत दिनों से आपका कोई समाचार नहीं मिला । आशा है, आप कुशल से हैं । आपके विरुद्ध दो लेख 'अभ्युदय' में निकले हैं । एक 'भारतेन्दु' से उद्धृत है । शायद आपने न देखे हों । भेजता हूँ, पढ़ लीजिए । आपने नाहक इन लोगों को छेड़ दिया । आप ही के साथ बेचारे चतुर्वेदीजी को भी खरी-खोटी सुननी पड़ीं । चतुर्वेदीजी का तो इसमें कुछ क़सूर न था, सिवाय इसके कि आपसे परिचय है । जब तक मैंने 'त्यागभूमि' में आपका नोट नहीं पढ़ा था, मैं समझा था कि शायद उसमें आपने प्रसंगवश चतुर्वेदीजी का उल्लेख कर दिया है । पर, वैसी बात भी न निकली । फिर भी चतुर्वेदीजी धर लिए गए । अस्तु, क्या इस पर कुछ लिखेंगे ?

'प्रबन्ध-मंजरी' के दो फ़ार्म भूमिका आदि के और छपे हैं, जो भेजता हूँ । श्री शास्त्रीजी को दे दीजिए । दो बाक़ी हैं, छपने पर भेज दूँगा । इतने में इन्हें पढ़ लें । उनसे प्रणाम भी कह दीजिए । पहुँच लिखिए ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५७

नायक नगला, चाँदपुर
२०-३-३०

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते ।

१७-३ का कार्ड मिला । यह जानकर चिन्ता हुई कि आपका अर्द्धांग बीमार है, परमात्मा कुशल करे । 'पंखुड़ियों' का पैकट मैंने उसी दिन उसी रूप में बन्द ही लौटा दिया था । वह शान्तिनिकेतन ही पहुँचा होगा । सम्भव है, आपको मिल गया हो । उसकी भूमिका के बारे में प० बनारसीदास ने लिखा है कि वह प० माखनलाल चतुर्वेदी से लिखा देंगे । यही ठीक होगा । वह छायावाद के आचार्य्य हैं । उनके लिखने का कुछ अर्थ होगा । मैं लिख भी देता तो अनधिकार चर्चा होती । अपना कुशल-समाचार लिखिए ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५८

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर, (बिजनौर)
१४-४-३०

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

२, ४ का कृपा-कार्ड मिला। आशा है, आपकी पत्नी को अब आराम होगा। रोगी की. और वह भी अर्द्धांग की, परिचर्य्या बड़े पुण्य का काम है। इसे पूरी तत्परता से परम धर्म समझकर करना चाहिए। प्राय: साहित्य-सेवी, कवि, उपदेशक और लीडर सेवा-धर्म की डींग मारते हैं। पर घर में कोई बीमार पड़ जाय तो उसकी खबर तक नहीं लेते। कितना पाखण्ड है। मुझे यह जानकर प्रसन्न ता हुई कि आप रोगिणी की परिचर्य्या में संलग्न हैं। जब उन्हें अच्छी तरह आराम हो जाय, तभी कहीं जाने का विचार कीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१५६

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
२४-४-३०

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

१८-४ का कार्ड मिला। यह जानकर दु:ख हुआ कि आपका स्वास्थ्य भी खराब है। अपने स्वास्थ्य को सँभालते हुए गृहिणी की परिचर्य्या करते रहिए। जोशे शहादत को ज़रा रोके रहिए। इस दशा में सत्याग्रह में जाना महा पाप होगा। पाखण्ड में तो सन्देह ही नहीं। सत्याग्रह-संग्राम तो आपके विना भी स्थगित न होगा, पर रोगिणी की परिचर्य्या कोई सत्याग्रही आकर न करेगा। फिर आप स्वयं भी रुग्ण हैं।

मैं भी इस बीच में १०-१५ दिन बाक़ायदा बीमार रहा। अब कुछ आराम है, पर निर्बलता बहुत है। कुशल समाचार लिखते रहिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६०

C/O मध्य भारत हिन्दी साहित्य-
समिति, इन्दौर
२४-५-३०

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते ।

आपका १, ५ का पत्र मुझे यहाँ मिला । मैं प्राय: एक महीने से भ्रमण में हूँ ७, ५ को यहाँ आ गया था । मालवे के ऐतिहासिक तीर्थों के दर्शन की लालसा बचपन ही से थी, जो अब बुढ़ापे में आकर पूरी हुई । धार, माँडू और उज्जैन देख चुका हूँ । कालिदास की जन्मभूमि (मँदसौर) देखने की इच्छा और है । मौक़ा मिला तो चित्तौर और उदयपुर भी देखूँगा । आपका स्वास्थ्य अब अच्छा है, यह जानकर चिन्ता मिटी । पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ होने पर ही वहाँ जाइए । शान्ति-निकेतन में वेतन तो काफ़ी नहीं मिलता । मैं इस बार चतुर्वेदीजी को या शास्त्रीजी को भी लिखूँगा ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६१

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)
२२-५-३१

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते ।

'विश्व-भारती' से लौटा हुआ मेरा कार्ड मिला । 'विश्व-भारती' वालों के इस अज्ञान पर दया आई और क्षोभ भी हुआ । सचमुच बड़ी ही विचित्र बात है । जी चाहता है कि इस दुर्घटना को लेकर पत्रों में आन्दोलन किया जाय । इस पत्र को प० बनारसीदास चतुर्वेदी के पास भेज रहा हूँ । जरूरत समझेंगे तो वह इसकी चर्चा हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के उत्सव में करेंगे । क्या आप आजकल वहाँ नहीं हैं ? 'विश्व भारती' को छोड़ आये ? श्री प० विधुशेखरजी महाराज तो वहीं होंगे । आप आजकल क्या कर रहे हैं ? आपका जो सचित्र संग्रह प्रकाशित होने को था, उसका क्या हुआ ? आशा है, आप सानन्द हैं ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६२

आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
मार्गशीर्ष सुदि ३, बुधवार

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

हम लोग उस दिन यथासमय सकुशल यहाँ पहुँच गये। आपको और हिन्दी छात्रों को जो कष्ट हमारे आतिथ्य में हुआ है, उसके लिए क्षमा चाहते हैं और उस कृपाभाव के लिए अनुगृहीत हैं। श्रीमान् शास्त्रीजी महाराज से मेरा सविनय प्रणाम निवेदन कर दीजिए। उनके दर्शन और कृपा-व्यवहार से जो आनन्द प्राप्त हुआ, वह सदा याद रहेगा। शास्त्रीजी को 'पद्म-पराग' से हृषीकेश भट्टाचार्यजी की जीवनी सुना दीजिए और प्रार्थना कर दीजिए कि संस्कृत निबन्धों पर अपनी शुभ सम्मति लिखकर अनुगृहीत करें। निबन्धों के २-३ फ़ार्म और छपने बाक़ी हैं। छपते ही भेजूंगा। थोड़ा समय निकालकर शास्त्रीजी यदि इतने में उन फ़ार्मों को पढ़ जायें जो उनकी सेवा में पहुँच गये हे, तो बड़ी कृपा होगी। श्री हरिहरनाथ और विश्वेश्वर वर्मा को आशीर्वाद कह दीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६३

आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
मार्गशीर्ष शु० ८ सोम

प्रिय मिलिन्दजी, नमस्ते।

कृपा-कार्ड मिला। 'प्रबन्ध-मंजरी' का १२वाँ फ़ार्म भेजता हूँ। श्री शास्त्रीजी को दे दीजिए। एक फ़ॉर्म है, जो परसों छप जाएगा। बस फिर सम्पादकीय वक्तव्य, सम्मतियाँ और शुद्धि-पत्र बाक़ी रहेगा। सम्मति सिर्फ़ शास्त्रीजी की मिल जाय तो भी काम चल जायगा। लिखा तो दो एक जगह और भी है, पर ऐसी निरर्थकता पर पंडित लोग अपनी अमूल्य सम्मति नहीं देते। शारदा बिल के विरोध में चाहे जितनी सम्मतियाँ ले लो। खैर, कहीं से आ जाय तो अच्छा है। नहीं तो न सही। गुरुदेव को अभी लिखने के लिए चतुर्वेदीजी से प्रेरणा-पत्र लिखवाऊँगा। आन्दोलन का वही क्रम ठीक है, जो आपने लिखा है। यही हम लोगों ने सोचा था। 'विश्वमित्र' और 'स्वतन्त्र' के सम्पादकों को तो आन्दोलन में सहयोग के लिए राजी कर लिया है। पुस्तकालय की ओर से हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं के लि ए भिजवाइए तो कुछ पत्र-

पत्रिका पहुँचने लगें। जब तक रहने का संकल्प किया है, डटे रहिये। दिक्क़तें भी दूर होती जायेंगी। आपके बारे में भी चतुर्वेदीजी से लिखवाऊँगा। वेतन के अतिरिक्त कम से कम भोजन तो और मिले। भोजन-भण्डार में मासिक क्या लिया जाता है? यह मैं जानने के लिए—दूसरी संस्थाओं से मुक़ाबिला करने के लिए पूछता हूँ। आशा है, आप प्रसन्न हैं।

पुस्तकालय में 'सतसई' है या नहीं। यह आपने मालूम किया? न हो तो भिजवाऊँ?

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

९

श्री द्वारकाप्रसाद 'सेवक' को लिखे गये पत्र

१६४

श्रावण वदि ४, १८७३

प्रिय सेवकजी, नमस्ते ।

२३-७ का कृपा-पत्र मिला । मुझे प्रसन्नता हुई कि आपने उसे उसी भाव में समझा जिससे प्रेरित होकर मैंने उसे लिखा था । यह ठीक है कि कभी-कभी परिस्थिति आदमी को ऐसा काम करने के लिए विवश कर देती है जिसे वह हृदय से नहीं चाहता । पर अक्सर ऐसा भी होता है कि परिस्थिति किसी काम करने के लिए बहाना बनाली जाती है, प्रत्येक कार्य के लिए कारण अपेक्षित है । आजकल जितने काम देश और जाति-हित के नाम पर किए हैं, उन सबका कारण परिस्थिति ही होती है । वेदान्तियों की माया के समान परिस्थिति का कार्य अनन्त और निःसीम है । परिस्थिति पिशाची का परिवार बहुत बड़ा है । आजकल धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक जगत् में जो कुछ हो रहा है सब इसी का पसारा है । परिस्थिति का रचा रूप अनिर्वचनीय है । इसे मृग-मरीचिका समझो या गन्धर्वनगर । अनेक रूपों में धोखा देकर वह आदमियों को फँसाती है । पुलिस के समान अपनी ज़रूरत साबित करने के लिए यह कोई न कोई काण्ड रचती ही रहती है । क्या करें परिस्थिति ही ऐसी है । इच्छा न रहते हुए भी यह सब कुछ करना पड़ रहा है । प्रत्येक कार्य का औचित्य सिद्ध करने के लिए यह एक अकाट्य युक्ति है । वेदान्त-मत से माया का नाश हो जाता है, परिस्थिति ज्ञान ही के घेरे में पलती है । इसकी माया ने सबको मर्कट की नाईं नचा रक्खा है । पत्र भी परिस्थिति ही निकलवाती है, लीडर भी यही बनाती है और अनुयायियों को भी यही मुंडवाती है । प्रतिभा-शून्यों को सद्यः कवि और परलेखलुण्ठकों को लेखक-शिरोमणि बनाकर साहित्य-निर्माण और साहित्य-सेवा भी यही कराती है । जो कौंसिलों में जाना और गवर्नमेण्ट से किसी प्रकार का सहयोग करना पाप समझते थे ऐसे असहयोगियों को और परिवर्तनवादियों को कौंसिलों में यही भेज रही है । हिन्दु-मुस्लिम मेल से स्वराज्य का सुख-स्वप्न देखने वाले आल इण्डिया लीडरों को अज्ञान-पंक से यही नहीं निकलने देती । हिन्दू जाति में अनेक जयचन्द्र इसी परिस्थिति की कृपा से अवतीर्ण हो रहे हैं । आर्यसमाज का काया-कल्प इसी ने किया है । मज़ा तो यह है कि समान उद्देश्य और एक ही लक्ष्य रखने वाले एक ही समाज के व्यक्तियों

को उँगली दिखाकर यही भिन्न दिशाओं में सरपट दौड़ाती है, ग़र्ज़ यह कि सब अपनी-अपनी धुन में मस्त हैं।

"न वह मेरी सुनता न मैं नासहों की,
नहीं मानता कोई कहना किसी का।"

आप भी इसी परिस्थिति के चक्कर में पड़कर यह वेतालोत्थापन करने चले हैं, परमात्मा परिस्थिति को आपके अनुकूल रक्खे। कहीं दो क़दम चलकर यह कमबख़्त धोखा न दे जाय।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६५

बनारस
भाद्रपद सुदि ३, १८७५

प्रियवर महाशयजी, नमस्ते।

आपकी भेजी हुई 'प्रवासी भारतवासी' पुस्तक मुझे कल की डाक से मिली, इससे पहले आपकी भेजी हुई रिपोर्ट और सूचनाएँ भी मिली थीं। इस कृपा के लिए अनेक हार्दिक धन्यवाद। आपने 'प्रवासी भारतवासी' जैसी सुन्दर और अपने ढंग की अपूर्व पुस्तक प्रकाशित करके हिन्दी और हिन्दुस्तान का बड़ा उपकार किया है। इस स्तुत्य कार्य से आपने अपनी 'सेवक' उपाधि को सच्ची सिद्ध कर दिया है। धन्योसि-कृतकृत्योसि। पुस्तक को आद्यन्त पढ़कर इस पर अपनी विस्तृत सम्मति किसी पत्र में प्रकाशित कराऊँगा।

पुस्तक पढ़कर 'एक भारतीय हृदय' पर मेरी श्रद्धा बढ़ गई है। यदि कोई नितान्त गोपनीय 'रहस्य' न हो तो मैं इन महाशय का नाम-धाम जानने के लिए उत्कंठित हूँ। क्या 'एक भारतीय' और 'एक भारतीय हृदय' एक ही बात है?

इस अत्यन्त परिश्रमसाध्य और अत्यधिक महत्त्वपूर्ण सुन्दर पुस्तक लिखने के लिए आप उनकी सेवा में मेरे अनेक साधुवाद और धन्यवाद पहुँचाइए। मेरा दिल बड़ा कमज़ोर है। करुणाजनक दुर्घटना का वर्णन पढ़ते उसकी दशा बड़ी दयनीय हो जाती है। प० तोतारामजी की पुस्तक जब मुझे समालोचना के लिए पढ़नी पड़ी थी वह बात मुझे अब तक याद है। आपने तो यह रोने का इतना मसाला—'विश्व-कोश' भेज दिया है कि इसे देखने का ताब मैं ला सकूँगा, इसमें पूरा शक है।

पुस्तक में प० तोतारामजी का चित्र न देखकर खेद हुआ। उनका चित्र अवश्य होना चाहिए था और सबसे पहले चाहिए था। यह कमी बार-बार खटकती है। इस

कमी का कारण क्या है ? जिस वीर कुमारी बोलभमा के स्मरण में पुस्तक प्रकाशित हुई है उसका उल्लेख भी जरा विस्तृत होना चाहिए था। पर, इसका सर्वथा अभाव-सा है। पृ० २१२ पर एक बार उल्लख हुआ, सम्भव है किसी दूसरी जगह इसका विशेष वृत्तान्त दिया गया है। जो मेरी नजर अभी नहीं पड़ा।

(प्रवासी भारतीयों के नेताओं में 'प्रवासी भारतवासी' के लेखक की भी गणना होनी चाहिए। इनका यह उपकार किसी से कम नहीं है।)

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६६

आषाढ़ सुदि
७, १९८३

प्रिय सेवकजी, नमस्ते।

आपका १३,७ का प्रेमपूर्ण कृपा-पत्र पाकर आश्चर्य भी हुआ और खेद भी। आपको पत्र-प्रकाशन का उन्माद रोग फिर प्रबल हो उठा। फिर जनून जाग गया। पत्र और पुस्तक-प्रकाशन के व्यसन में सर्वस्व स्वाहा करके भी आपकी बुद्धि ठिकाने न आई। यही आश्चर्य है फिर आप उसी 'गलदघ्न' पंक में फँस रहे हैं। इसका खेद है। क्या आपका यह रोग 'क्षेत्रज' है ? इसकी कोई चिकित्सा नहीं। परमात्मा इससे आपका पिण्ड छुड़ावे। और आप शेष जीवन सुख, शान्ति से व्यतीत कर सकें यही प्रार्थना है। आखिर आप 'वैदिक संदेश' किसे सुनाना चाहते हैं? भैंस से बीन की दाद लेना चाहते हैं। बानर को दर्पण दिखाना चाहते हैं ? आर्यसमाज पर कुछ दम्भी और स्वार्थी लीडरों का कब्जा है। आपकी स्वतन्त्र आवाज कौन सुनेगा? किसी पार्टी का पक्ष-समर्थन करो तो सम्भव है कुछ दिन पत्र चल जाय। आर्यसमाज का इतिहास मुसल्लिमा लीडर लोग लिखते हैं। लीडरों का जीवन ही समाज का इतिहास है। उनका कथन ही समाज के सिद्धांत हैं। जिसे वह आर्य कहें वह आर्य है। नक्कारखाने में आपकी तूती की आवाज कौन सुनेगा ? अफ़सोस है इतने दिन आर्यसमाज में रहते हो गये और आर्य-समाज की गतिविधि का आपको ज्ञान न हुआ। मेरे लिए तो आर्यसमाज एक भूला हुआ राग है। कोई-कोई बोल याद रह गया है। भूली-बिसरी बातें याद दिलाकर अप्रिय प्रसंग क्यों छेड़ना चाहते हैं। क्षमा कीजिए, मैं अब इन बखेड़ों में नहीं पड़ना चाहता, अब आखिरी वक्त में पुराने लीडरों से कुफ्र का नया फतवा लेने की हिम्मत नहीं है। छेड़कर (वाइज) लीडर को नाहक (खुल्द) स्वर्ग से, बिस्तरा क्यों अपना फिंकवाते हैं आप।

आपकी रगों में अभी नया खून जोश मार रहा है। लड़िए-झगड़िए, पर मैं वह

दिल कहाँ से लाऊँ। मैं तो आपको यह सम्मति दूँगा कि इन बातों में कुछ नहीं रक्खा। गड़े मुर्दे न उखाड़िए। नाहक बदबू फैलेगी, साहित्य-सेवा के बिना नहीं रहा जाता तो कुछ अच्छी-अच्छी पुस्तकें (दो-चार ही सही) प्रकाशित कीजिए।

आपने जाने इतनी उम्र में क्या-क्या ऊधम मचाया। दर्जन-भर पत्र निकाले और पचासों पुस्तकें प्रकाशित कीं। पर मुझे सिर्फ़ एक चीज पसन्द आई वही तुम्हारी अब तक साहित्य-सेवा के नाम पर की गई सब भूलों का यही प्रायश्चित्त है। यानी 'प्रवासी भारतवासी'। उसे अप-टु-डेट सम्पादित कराकर फिर प्रकाशित कीजिए। जिससे आपके भी पल्ले कुछ पड़ जाए, और आपकी साहित्य-सेवा की भी एक क़ाबिल कदर यादगार बनी रहे। बाक़ी बातें फिजूल हैं, व्यर्थ के आन्दोलनों में पड़कर क्यों समय और पैसा नष्ट करते हो, इस अप्रिय सम्मति के लिए क्षमा चाहता हुआ—

आपका शुभचिंतक
पद्मसिंह शर्मा

१६७

२१ अगस्त, १६२६

प्यारे सेवकजी, नमस्ते।

चिट्ठी मिल गई। समाचार ज्ञात हुए·· आर्यसमाज के विषय में मैं किसी हद तक निराश हूँ। मेरा ख़याल है कि आर्यसमाज वेद, वैदिक धर्म और ऋषि दयानन्द को पीछे छोड़कर अधिकांश संस्था-सेवक हो गया है। मैं समझता हूँ, आर्यसमाज का यह संस्थावाद एक संक्रामक रोग की भाँति आम होता जाता है और कष्टसाध्य भी होता जाता है। इस समय आर्यसमाज का जितना भी कार्य है और उसमें जितनी भी शक्ति ख़र्च हो रही है उसका अधिक भाग अपनी पार्टी की दृढ़ता में लग रहा है। मैं यह मानता और जानता हूँ कि आर्यसमाज प्रचार का काम भी कर रहा है। और उस प्रचार-कार्य में वैदिक धर्म भी शामिल है। मगर आर्यसमाज के भीतर रहने वाला कोई भी ईमानदार आदमी अपने को धोखा नहीं दे सकता। और यह समझे बिना भी नहीं रह सकता कि इतना कुछ ऊपर वाली दोनों बातों के लिए ही है। और इस प्रचार के भीतर भी मुख्य उद्देश्य अपनी संस्था का संचालन और अपनी पार्टी की प्रभुता ही काम कर रही है। हो सकता है मेरा यह भ्रम हो, मेरी अपनी मानसिक निर्बलता का नतीजा हो। पर आर्यसमाजियों की वर्त्तमान अवस्था और उनके कार्यक्रम को देख कम से कम मेरे मन में जो भाव पैदा हो रहे हैं, वे ऐसे ही हैं और मेरे जैसे और भी कई मनुष्यों के निराश होने में सहायक हुए हैं। आर्यसमाज इस समय दो भागों में बँट गया है। एक भाग तो पुराने हिन्दूवाद में मिलता जा रहा है; और

दूसरा नये ढंग के—अंग्रेजी ढंग के नास्तिकवाद में। आर्यसमाज को पुराने हिन्दूवाद में मिलाने वाले उसके वे उपदेशक हुए हैं, जो वैदिकधर्मी न होते हुए वेतनभोगी प्रचारक थे और हैं। इसके विपरीत वेद, वैदिक धर्म और स्वामी दयानन्द को राजनैतिक हथियार बनाने वाले बाबुओं ने इसे अश्रद्धा, अविश्वास और वास्तविकता की खोह में ले जा फेंका है। फिर भी मैं स्वामी दयानन्द और उनके निर्मल परिश्रम पर विश्वास रखता हूँ कि वह सब अकारथ नहीं होगा, और कभी न कभी उसका सत्परिणाम अवश्य निकलेगा। आपका सन्देश यदि सचमुच 'वैदिक सन्देश' ही के रूप में आर्यसमाज को इस गहरे गढ़े से निकालने में काम कर सके और एक निर्मल दूत का-सा कर्तव्य-पालन कर सके तो मैं उसका जीवन सफल समझूँगा। ईश्वर से प्रार्थी हूँ कि वह आपके सन्देश में बल पैदा करे, जीवन पैदा करे और उसे चिरायु करे।

आपका एक अभागा भाई

पद्मसिंह शर्मा

१०

डॉक्टर हरदत्त शर्मा को लिखे गये पत्र

१६८

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)
१४-२-३१

प्रिय पण्डितजी, नमस्कार।

आपका ८-२ का कृपा-पत्र मिला, अनुगृहीत हुआ। आपकी कृपा सीमा का उल्लंघन कर रही है। जर्मनी के लिए दो पुस्तकें आपकी सेवा में भेजता हूँ, एक आपके जर्मन-निवासी गुरू महोदय के लिए, एक जर्मनी के उस पुस्तक-विक्रता के लिए। आप ही अपने पत्र के साथ वहाँ भेज दीजिये। 'प्रबन्ध-मंजरी' पर २०) रु० सैकड़ा कमीशन दिया जाता है वहाँ के लिए जो आप उचित समझें लिख दीजिये। 'प्रबन्ध-मंजरी' अर्थ-लाभ के लिए प्रकाशित नहीं की गई, इसका प्रचार अभीष्ट है। जर्मनी में एक सज्जन ने 'पद्मपराग' मँगाया था। उनके पास दो प्रतियाँ 'प्रबन्ध-मंजरी' की मुफ़्त भेज दी थीं। तीन महीने से ऊपर हुआ पहुँच नहीं आई। उनका पता भेजता हूँ. उन्हें भी एक पत्र आप मेरी ओर से लिख दें तो कृपा हो। 'प्रबन्ध-मंजरी' की एक कापी प० रामकिशोर शुक्ल एडवोकेट को इसमें से भेंट कर दीजिये। लखनऊ भी एक कापी श्रीवास्तवजी को भेंट में ही भेज दी जायगी। और जिन सज्जनों को आप भिजवाना उचित समझें भिजवा सकते हैं। आपके मित्रों को वी० पी० से भेजना उचित नहीं मालूम होता। 'सांख्यकारिका' की टीका पहुँच गई, अनेक धन्यवाद। उसकी भूमिका आपने संस्कृत में न लिखी। एक काम और है, और आप ही के करने का है। स्वर्गीय प० रामावतारजी ने 'सदुक्तिकर्णामृत' लाहौर से प्रकाशित कराया था। वह उसकी भूमिका लिखने न पाये थे कि स्वर्गवासी हो गये। दो वर्ष से पुस्तक छपी पड़ी है। मैं उसे देखने के लिए लालायित हूँ। प्रकाशक से मैंने अनुरोध किया कि उसे शीघ्र निकालो। उन्होंने लिखा कि डा० हरिश्चन्द्र भूमिका लिख रहे हैं। मैंने फिर लिखा कि वह भूमिका लिखने में विलम्ब करें तो किसी और से लिखा लो। उनका (प्रकाशक का) आज पत्र आया है। लिखा है कि भूमिका आप लिख दीजिए। पर, यह काम आप अच्छा कर सकेंगे। संस्कृत और अंग्रेजी में एक अच्छी भूमिका लिख दीजिए। कुछ

सहायता में भी दे दूंगा। शुद्धि-पत्र भी दूंगा। और भी यथामति परामर्श दूंगा। इस काम को जरूर कर दीजिये। बड़ा ही अद्भुत और अलभ्य ग्रन्थ है। संस्कृत में जितने संग्रह हैं उन सबसे श्रेष्ठ है। उसकी सिर्फ़ एक ही कापी प० रामावतारजी के पास थी। प्रकाशक ने पारिश्रमिक के लिए भी पूछा है। सो जो आप उचित समझें बतलाइए। उनसे तै कर लूं। लाहौर के प्रकाशक लोभी बहुत हैं। कुछ अधिक तो आशा नहीं, फिर जितना कम से कम उचित हो तै कर लिया जाय। पुस्तक ४२८ पेज की बतलाते हैं। सब तैयार है। सिर्फ़ शुद्धि-पत्र और भूमिका बाक़ी है। इस काम को आप कर ही डालिये। यश और परोपकार दोनों प्राप्त होंगे। विचारकर उत्तर दीजिए।

जर्मनी में पुस्तक भेजने का जो व्यय हो कृपया लिख दीजिये। भेज दिया जायगा। मेरे घर में पाँच-छः महीने से बीमार हैं। दशा चिन्ताजनक हो रही है। इसी कारण व्यग्रता की दशा में हूं। जल्दी-जल्दी पत्र घसीट रहा हूँ। क्षमा कीजिये जर्मनी का जो छपा हुआ पता भेज रहा हूँ, इसे देखकर लौटा दीजिये। इस पते पर २ प्रतियाँ 'प्रबन्ध-मंजरी' की १४ अक्टूबर सन् ३० को भेजी थीं। पहुँच नहीं आई। इन्हें आप एक पत्र लिख दें तो अच्छा हो। पुस्तकें पहुँचीं कि नहीं। आपको बहुत कष्ट दे रहा हूँ, क्षमा कीजिये। 'लीडर' में समालोचना भेज दूंगा। इसके लिए बहुत कृतज्ञ हूँ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६६

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
१७-४-३१

प्रिय डाक्टर साहब, नमस्ते।

आपका १४,४ का कृपा-पत्र अभी शाम के वक़्त मिला। इसी समय रात में पार्सल बँधवा रहा हूँ, जिससे कल पोस्ट हो जाय। क्योंकि परसों रविवार है। शार्ङ्गधर पद्धति में भूमिका है ही नहीं। सम्पादन पीयर्सन साहब ने किया है। उन्हें जो कुछ मालूम था वह सब सुभाषितावलि की भूमिका में लिख चुके हैं। कवीन्द्र-वचनसमुच्चय और सोसाइटी वाले दोनों अंक भेजता हूँ। 'सदुक्तिकर्णामृत' का सम्पादन और मुद्रण बड़ा भद्दा हुआ है। अशुद्धियां बहुत और 'पंकचुएशन' तो हैं ही नहीं। काग़ज़ की बहुत किफ़ायत की गई है। इसकी कोई कापी और मिल जाय तो जो कई पद्य इसमें खंडित हैं उन्हें ठीक कर दीजिये। मैं शुद्धि-पत्र बनवा रहा हूँ, बाक़ी बातें

फिर लिखूंगा। प्रकाशक भूमिका शीघ्र मांग रहे हैं। ये कापी उन्हें लौटानी होगी। दूसरी कापियाँ भूमिका छपने पर आवेंगी। ऐसा उन्होंने लिखा है। आप अधिक परिश्रम न कीजिये। चलता काम कर दीजिये। प्रकाशक पुरस्कार कुछ भी नहीं दे रहे। सिर्फ़ ५०) और चार कापियाँ देंगे। अस्तु।

जर्मनी से आपके मित्र प्रोफ़ेसर साहब ने 'प्रबन्ध-मंजरी' की पहुँच का एक कार्ड भेजा है, जो कल ही मिला है। आपकी कृपा से 'प्रबन्ध-मंजरी' की चर्चा जर्मनी में भी हो गई है। यह बड़ी बात हुई। 'मंजुभाषिणी' वालों का क्या उत्तर आया, अभी मालूम नहीं हुआ। प० हरिदत्त शास्त्री ने ज्वालापुर से समालोचना भेजी थी, उनसे पूछता हूँ। पुस्तकें डाक से भेजता हूँ, रेलवे से दिक़्कत होती है।

प्रहसन की कापी भेज रहा हूँ। इसे नागराक्षरों में लिखवाइये। फिर देख दूंगा। भाषा खासी है। पर यह प्रहसन विलायती समाज की चीज़ है। भारतीय संस्कृति के अनुकूल न होने से कुछ अटपटा-सा मालूम होता है। जर्मन भाषा से किसी अच्छे उत्कृष्ट साहित्य का हिन्दी में अनुवाद कीजिये। इन्फ़्लुएंजे की निर्बलता अभी बाक़ी है। आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७०

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)

स्वस्ति। श्रीमन्तं विनयार्जवादिगुणगरिष्ठं विद्वद्वरिष्ठं डाक्टर पण्डित श्रीहरदत्तशर्माणमन्तस्तलोद्भूतेनाशीर्वचसा नमस्कारेण चप्रीतिप्रह्वेन चेतसा सस्नेहं सभाजयति तत्सौजन्यवशीकृतस्वान्तः पद्मसिंह शर्मा। समवाप्य श्रीमतःकृपापत्रं हर्ष-पात्रमस्मि संवृत्त.। यत्सत्यं पठ्यमानं तत्प्रत्यक्षरं प्रक्षरति सुधासोदर्यं किमपि माधुर्यम्। विनयमहिम्नाऽनेन सर्वानपि समुत्तीर्णसागरान् दृष्टविद्यापारावारान् डाक्टरपण्डिता-नतिशेते भवान्। यदेवमसंस्तुतेऽपि मादृशि जने विनयमवरमात्मीयोचितं व्यवहरति, स्निह्यति, चाहैतुकं तदेतज् ज्ञापयति सहजं भवदौदार्यम्। दुर्लभा एवैवंविधा लब्धवर्णाः समुपलब्धपाश्चात्यदर्शनेषु विद्वत्सु। अचिन्तितचरमेतच्चकितं करोति चेतः। परः शतान धन्यवादानर्हति प्रेष्ठः श्रीहरिशंकर शर्मा, येन निर्मायं प्रशस्य यथार्थं परिचयं प्रापितः सौजन्यवान् भवान्। अपिच कार्यवशाद् असौडा ग्रामं गतेन श्रीमता साकमायुष्मतः काशीनाथ शर्मणः साक्षात्कारः समजनि, सोऽपीदानीं भवत्पत्रमनुवाच्य संस्मृत्य च तं साक्षात्कारसमयं सुतरां प्रशंसति भवद्गुणगणान्। एवमाप्तसाक्षिद्वयसद्भावे भवन्त-

मधि कःप्रतारणावसरः । भवानेवात्मनिह्नुत्या मामभिसन्धातुमीहते ।

इंग्लिशभाषामाघ्रायापि प्रायः संस्कृतज्ञा विपश्चितो दैवीं वाचं प्रति वीतरागा भवन्ति, सर्वत्र इंग्लिशभाषयैव व्यवहरन्ति । भवतस्तु तद्भाषापारदृश्वनोऽपीत्थं संस्कृतानुरागं विलोक्य परमःप्रमोदप्रवाहः समाप्लावयति हृदयक्षेत्रम् । वांछामि-चेममुत्तरोत्तरं वर्धमानं गीर्वाण-वाणीप्रेमाणं भवतः ।

मन्ये समवलोकिता समयेनैतावता प्रबन्धमंजरी श्रीमता । यदि तत्र सुरभारती-भक्तानां विदुषां विद्यार्थिनां वोपादेयं किमपि वस्तु प्रतीयेत, तर्हि 'माडर्न रिव्यू', लीडरादिके कस्मिश्चिद् इंग्लिशभाषापत्रे 'विशालभारते' वा तत्समालोचनां विधायोप-कुर्वन्तु सुरभारतीमिति । विनिवेद्य विरमामि

भवदीयः

पद्मसिंह शर्मा

पुनश्च—

मदीयो निबन्धसंग्रहः पद्मपरागाभिधो दृष्टिपथमुपगतः श्रीमतः ?अस्तिचेद्दिदृक्षा प्रेषयामि किम् ?

११
श्री वैद्य कल्याणसिंहजी को लिखे गये पत्र

१७१

'आर्यमित्र', आगरा
आश्विन पितृपक्ष, १०, १९८२

प्रियवर, नमस्ते ।

आपका वह कार्ड जिसमें आपने मुझे रात को आराम से सोने की सलाह दी थी और फिर पार्सल और मजेदार विस्तृत पत्र भी मिला । मैं इस बीच में बहुत ही व्यग्र रहा था । या आपकी सलाह पर अमल करके सोता रहा । जो कुछ हो, अब तक आपके पत्र का उत्तर और पुस्तक की पहुँच न लिख सका । इस जुर्म का मैं कोरे कागद पर इकबाल करता हूँ । मुझे भी ओझाजी की सम्मति दरकार थी । उसके लिए जल्दी थी । फ़ार्म रुका हुआ था । इस दशा में 'नार्तःकाल प्रतीक्षते' के अनुसार तकाजे की चुटकी आपकी ली थी । सो भई, तुम तलमला उठे । खाने वाले और परोसने वाले का ताना देने लगे । खैर, माफ़ कीजिए और सम्मति तथा पुस्तक भिजवाने के लिए अनेक धन्यवाद स्वीकार कीजिए । श्री ओझाजी महाराज से भी मेरा प्रणाम निवेदन कीजिए । कृतज्ञता प्रकाश पूर्वक मेरी ओर से ।

आशा है, आप सानन्द हैं । स्तक की छपाई से कल छुट्टी पा जाऊँगा । अभी दस-पाँच दिन यहीं हूँ ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७२

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)
असौज सुदि १, १९८४

प्रिय मित्र, नमस्ते ।

इधर बहुत दिनों से आपका कुशल समाचार नहीं मिला, आशा है, आप सपरिवार सानन्द हैं । श्रद्धेय ओझाजी से एक बात पूछकर शंका-समाधान कराइये ।

सम्राट् हर्षवर्धन वैश्य गुप्त बनिये थे कि विशुद्ध क्षत्रिय । बैस वंशी क्षत्रिय क्या वैश्य वर्ण का ही अपभ्रंश है, या केवल शब्द-साम्य के आधार पर बैस की शुद्धि करके 'वैश्य' बनाया जा रहा है । बा० भगवानदास एम० ए० ने अपने एक नवीन लेख में हर्षवर्धन और उज्जयिनी के गुप्तवंशी राजाओं को वैश्य वर्ण के पूर्व पुरुषा सिद्ध किया है और अपने अनुकूल प्रसिद्ध ऐतिहासिक विद्वान् वैद्य महाशय का भी यही मत लिखा है । श्री ओझाजी की इस बारे में क्या सम्मति है, सो मैं जानना चाहता हूँ, सो भी स्वान्तः सन्तोषाय, किसी विवाद में पड़ने के लिए नहीं । एक महाशय चौधरी धनराज सिंह बी० ए० हैं वह अपने लेखों में बड़ी-बड़ी अश्रुतपूर्व कल्पनाएँ उपस्थित करते रहते हैं । क्या उन पर आस्था की जा सकती है, श्री ओझाजी का उन कल्पनाओं के सम्बन्ध में क्या मत है यह भी मैं जानना सिर्फ़ जानना वह भी प्राइवेट तौर पर चाहता हूँ । माधुरी' में श्री ओझाजी ने रेऊजी को अच्छा पाठ पढ़ाया है । तबीअत ख़ुश हो गई ।

श्री ओझाजी की सेवा में मेरा प्रणाम निवेदन कीजिए ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७३

गुरुकुल, कांगड़ी,
(बिजनौर)
ज्येष्ठ सुदि १४, १९८५

प्रिय वैद्यजी, नमस्ते ।

आपका घर के पते पर भेजा हुआ १४-५ का 'बधाइयाँ वाला' कार्ड मुझे कल मिला । मैं कोई दो महीने से यहीं आ गया हूँ । सम्मेलन के सभापतित्व के लिए बधाई नहीं सहानुभूति चाहिए । परिस्थिति संकटमयी है । रंग-ढंग अच्छे नहीं हैं, जो कुछ हो ।

"बीम बादा बाद मा कश्ती दराब अन्दाखतम ।"

मौसम अच्छा नहीं, जगह दूर है, बहुत कम साहित्य-सेवी इस धर्म-संगर में सम्मिलित हो सकेंगे । आपके सम्मिलित होने की तो सम्भावना ही नहीं । उधर गर्मी का क्या हाल है ? यहाँ तो भयानक गर्मी है । बाढ़ के बाद शायद आप इधर नहीं आये, नकशा ही बदल गया । वह दिन याद आते हैं । आशा है, आप सानन्द हैं ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७४

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
अगहन सुदि ६, १९८५

प्रिय वैद्यजी, नमस्ते।

आपका २४-११ का कृपापत्र मिला। पढ़कर प्रसन्नता हुई। देश में महत्त्वाकांक्षा और प्रतिष्ठा-लोलुपता का दौरात्म्य बुरी तरह बढ़ रहा है। यह संक्रामक रोग क्षेत्रीय हो गया है। अस्तु, होने दीजिये। इलाज ही क्या है? आप यहाँ पधारे तो चश्मे मा रोशन दिले माशाद। उस वक़्त में ज़बाने हाल और ज़बाने काल से पढ़ूं—

"वह आयें घर हमारे खुदा की कुदरत है"

कभी में उनको, कभी अपने घर को देखता हूँ। यहाँ आने का मौसम तो यही जाड़ों का अच्छा है। गुड़-गन्ने की बहार है। इस वर्ष कुछ पौंड़े भी बोये हैं। दूध भी हो रहा है। चने, बथुए और सरसों का साग भी है। धान की रोटियाँ जो यहाँ की और सिर्फ़ यहाँ की खास न्यामत है। गर्ज़ कि अल्पव्ययेन...ग्राम्यजनो मिष्टमश्नाति का मामला है। हो सके तो आइए। मैं कल असौडे (हापुड़) काशीनाथ के पास जा रहा हूँ। पूर्णिमा के पीछे लौटूंगा। वहीं गढ़ में श्री स्वामी सोमतीर्थजी भी टिके हैं। दो-एक दिन उनके सत्संग में भी रहूँगा। इस वक़्त जल्दी में हूं। इस हड़बड़ी में आपकी अपेक्षित पुस्तक मिलनी दुर्लभ है। कई आलमारियाँ ठसाठस भरी हैं। सूचीपत्र और क्रम शुद्धचन्द्रोदय की तरह है नहीं, कहाँ ढूंढूं। प्राचीन काव्य-संग्रह की कुछ पोथियाँ इधर-उधर मँगनी भी गई हुई हैं। क्या अजमेर में कोई अच्छा पुस्तकालय भी है? कालिज में था तो सही। हाँ, आपने विद्यासागरजी की जीवनी पढ़ी है, न पढ़ी हो तो सौ काम छोड़कर जरूर पढ़िए। पढ़कर गद्गद् हो जाइएगा। आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७५

नायक नगला, चाँदपुर (बिजनौर)
२४-२-१९२८

प्रिय वैद्यजी, नमस्ते।

श्री ओझाजी महाराज यदि वहाँ हों तो उनसे प्रार्थना कर दीजिए। कुछ प्रसादस्वरूप इस संख्या के लिए भेज दें तो अनुग्रह हो। गुरुवर मुरारिलालजी घर पर ही हैं। १५-२० दिन से मिले नहीं। सर्वनाश का उपक्रम कर रहे हैं। यानी अब

इस उम्र में ब्याह करने की धुन सवार हुई है। लेई-कुचेई इसमें लगा देंगे। और रोने के लिए यादगार के तौर पर किसी अभागिनी को छोड़ जायँगे। मैंने जब यह सुनगुन सुनी थी तो समझाया था, मुझ से तो साफ़ मुकर गये पर उसी दिन से कन्नी काटने लगे। फिर एक बार समझाने की चेष्टा करूँगा। पर, वह मिलते नहीं। दुर्धर्ष खींच रहा है मानेंगे थोड़ा ही।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७६

गुरुकुल, कांगड़ी
२५-७-२८

प्रिय वैद्यजी, नमस्ते।

मैं सम्मेलन की यात्रा से एक महीने बाद परसों २४, ७ को ही यहाँ लौटकर पहुँचा हूँ। आकर आपका पत्र पढ़ा (७, ७ का)। आपको भाषण पसन्द आया। सन्तोष की बात है। आज की तरह दूसरे पत्रों ने भी भाषण पर अग्रलेख लिखे हैं। खूब दाद दी है। 'मतवाला', 'विश्वमित्र', 'भारतमित्र', 'लोक-संग्रह' इत्यादि ने बहुत कुछ लिखा है। सम्मतियों की कटिंग्स का फ़ाइल भाषण से कई गुना बढ़ गया है। 'बींडिया' शब्द टकसाली है, हाली ने भी इसका प्रयोग किया। हाली ने हैदराबाद की तारीफ़ में एक कसीदा लिखा है उसमें—

"दूसरे प्रान्तों में बेशक यह शब्द व्यवहृत नहीं है। पर 'बींडिया' जोता सब जगह जाता है, पूरब में बिहार तक मैंने देखा है। यह टकसाली शब्द प्रचार पाने योग्य है। इसीलिए मैंने इसका प्रयोग किया है। बनारस में बींडिया को शायद 'घोरा' कहते हैं।"

भाषण की समालोचना से छायावादी बहुत बिगड़े थे। पर, किसी भी समझदार विद्वान् और प्रतिष्ठित पत्र ने इस समालोचना को अनुचित नहीं बतलाया।

हाँ, मैं गुरुकुल में शाहपुर की चेयर पर ही नियत हुआ हूँ। आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७७

आर्यमित्र, आगरा
२९-८-१९५०

अजी वैद्यजी, नमस्ते।

मर्दे खुदा ऐसी भी क्या खुदगर्ज़ी। माना कि 'फ़सल के दिन हैं' फिर भी दीन-ओ-दुनिया से इतनी बेखबरी। गर्ज़मन्दों की अर्ज सुनने तक की फ़ुर्सत नहीं। जवाब

सक नदारद, लाहौल बिला कूवत, उस दिन एक दरख्वास्त भेजी थी, पहुँची जरूर होगी, मैंने खुद पोस्ट की थी। पता बहुत साफ़ लिखा था, न पहुँचती तो लौटकर आती। भेजने वाले का पता भी दर्ज था। इसलिए न पहुँचने का हीला नहीं बन सकता। आखिर आपने उत्तर क्यों नहीं दिया? खत तो 'जवाबतलब' जरूरी था। ओझाजी से सम्मति लिखाकर भेज देते कोई बड़ी बात न थी, इन्तजार करते-करते आँखें पथरा गईं जिस तरह रोगियों की हाय-हाय सुनते-सुनते तुम्हारा दिल पथरा गया है। अब भी परसों-परले दिन तक सम्मति भेज सको तो काम आजाय, बस टायटिल और सम्मतियाँ ही छपने को बाक़ी हैं, आशा है, आप भले-चंगे हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७८

१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
४-१२-२८

प्रिय महोदय, नमस्ते।

दिवाली की खुशखबरी का कार्ड मिला, खुशी से दिवाली बीतने पर बधाई है। पर मैं अपने को तो इसके लिए बधाई नहीं दे सकता। हम हैं गुरबत में और घर में बहार आई है। श्रावणी, जन्माष्टमी, दशहरा, दीवाली सब यहीं बीत गये। कातकी भी यहीं होगी। किसी में आनन्द न आया। यहाँ आकर बेतरह फँस गया। खैर, देह धरे का दण्ड है।

चि० रामनाथ ने घर से दो-तीन बार छाजन, दाद और मुहासों की दवा के लिए लिखा है। यहाँ इश्तहारी वैद्यों के नोटिसों पर विश्वास नहीं होता। किससे लेकर भेजूं। आपके पास कोई अनुभूत दवा इन रोगों की हो तो रामनाथ को भेज दीजिए, या लिख दीजिए। भूलिए मत।

मेरा स्वास्थ्य कई दिन से खराब है। मकान तो बहुत अच्छा है, पर वायु-मंडल कहाँ से लाऊँ।

श्री ओझाजी से मैंने अमरचन्द्र सूरि के सम्बन्ध में कुछ पूछा था। उत्तर नहीं मिला। 'विशाल भारत' जारी रहेगा। मूल्य जब सुभीता हो भेज दीजिए। आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१७६

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
१०-२-३१

प्रिय मित्र, नमस्ते।

४-२ का कृपा-पत्र आज मिला। बहुत दिनों बाद आपने पत्र भेजकर सुध ली। मैं कई महीने से एक संकट में हूँ। काशीनाथ[1] की माता मार्च महीने से बीमार हैं, दो महीने से कष्ट अधिक है। सारा परिवार दवादारू के चक्कर में है। लम्बी बीमारी, ग्राम का वास, आसपास कोई सद्वैद्य नहीं—एक मुसीबत का सामना है। ऐसे संकट में प० मुरारिलालजी याद आते हैं, और दिल से आह निकलती है। खैर, कर्मों का भोग है। प्रो० देवकीनन्दन शर्माजी से मैं सरसरी तौर से वाकिफ़ हूँ। हमवतन हैं। आपके मित्र हैं। यह दो रिश्ते काफी से ज्यादा हैं। 'पद्म-पराग' से लेख लेना मुबारक है। डर इसी बात का है कि काट-छाँट में कोई शह रग न कट गई हो। खैर, जो हो मुझे कोई आपत्ति नहीं, बल्कि इस इज्जत-अफ़ज़ाई पर फ़ख्र करूँ तो बजा है। सरदी यहाँ भी खूब है। निमोनिया चमक रहा है। वर्षा नहीं हुई। खेती के साथ किसानों के प्राण निकल रहे हैं। ज़िले में कहीं-कहीं वर्षा भी हो गई है। भयंकर समय है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१८०

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
२३-२-३१

मित्रवर, नमस्ते।

कृपा-कार्ड से आश्वासन मिला, अनुगृहीत हुआ। घर का हाल यह है कि मलेरिया के मौसम में जाड़ा-बुखार आना शुरू हुआ था। आराम भी होता रहा। बीच-बीच में आता भी रहा, कोई तीन महीने से ज्वर जड़ पकड़ गया। १०३ तक तापमान रहने लगा, कमजोरी बढ़ गई। मेरठ से वैद्य हरिशंकरजी को बुलाया। उन्होंने देखकर क्षय बतलाया, यह निदान उन्होंने देखकर रात्रि-स्वेद के आधार पर किया था। ८-१० दिन रात्रि के वक़्त पसीना आता रहा था। जिगर भी बढ़ गया था। उनकी चिकित्सा

१. आचार्य पद्मसिंह शर्मा के ज्येष्ठ पुत्र।

से इतना लाभ हुआ कि ज्वर छूट गया। अब २०-२५ दिन से तापमान ९७ रहता है, भूख लगती है। पसीना भी नहीं आता। जिगर भी कम हुआ है। पर, आश्चर्य है कि निर्बलता वैसी ही है। करवट तक नहीं ली जाती। उन्होंने एक योग सिद्ध मकरध्वज मोती, कस्तूरी आदि औषधों का बनवाया था। पर वह अनुकूल न पड़ा। गरमी को सुदर्शन चूर्ण दिया गया। और उसका सेवन जारी है यह अनुकूल पड़ा। प० शालग्रामजी शास्त्री को भी सब हाल लिखकर परामर्श लिया था। वह तो क्षय नहीं बतलाते। खाँसी आदि कोई उपद्रव न पहले था न अब है। अब तो कमज़ोरी की ही खास शिकायत है। आपको इतनी दूर से क्यों कष्ट दूँ। इलाज हो ही रहा है। फल ईश्वराधीन है। आशा है, आप प्रसन्न हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१८१

नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)

प्रिय वैद्यजी, नमस्ते।

आशा है, आप सानन्द हैं। आपके कृपा-पत्र के उत्तर में मैंने एक कार्ड भेजा था। पहुँचा होगा। पर उसकी पहुँच नहीं पहुँची। जो काम आप मुझसे लेने लगे थे, उसका पता भी न चला। अब मैं समझता हूँ आपकी प्रेरणा से और आपके ही अक्षरों से अंकित ऐड्रेस से 'शुद्धि चन्द्रोदय' की एक प्रति मेरे पास पहुँची है। इस कृपा के लिए आपको और ग्रन्थकर्ता को कोटिशो धन्यवादाः। मैंने पुस्तक अभी इधर-उधर से सरसरी तौर पर देखी है। पुस्तक की रचना में रचयिता ने स्वाध्यायशीलता और परिश्रम का प्रचुर परिचय दिया है। पुस्तक काम की है। विस्तृत सम्मति तो यदि हो सका तो पूरी पुस्तक पढ़कर पीछे से दूँगा। हाँ, कुछ छोटी-छोटी और मोटी-मोटी बातें अभी निवेदन कर दूँ तो उचित होगा। फिर शायद भूल जाऊँ। पुस्तक में 'फॉरन मैटर' बहुत हैं। संशोधन और करैक्शन के 'स्टीमबाथ' और 'सिटिजे बाथ' की ज़रूरत थी, किसी वैद्य कवि ने कहा है। **'कृशताभिमता लोके पीनता ननु शोथतः'**—पुस्तक पढ़ने से मालूम होता है किसी आर्य उपदेशक का लेक्चर सुन रहे हैं। इधर-उधर की सारी बातें एक ही प्रसंग में कह डाली हैं। विषय-विभाग शायद अविवक्षित हैं। एक विद्वान् ग्रन्थकर्त्ता की रचना में यह बात खटकती है। पुस्तक भर में छापे की और संशोधन सम्बन्धी अशुद्धियों की भरमार है। वैदिक प्रेस की ऐसी भद्दी छपाई को देखकर दुःख होता है। उर्दू-फ़ारसी शब्दों के नीचे नुक़्ते बेहिसाब हैं। 'जहाद' और

'मस्जिद' इसका एक छोटा-सा उदाहरण है। बहुत-सा कवितांश छन्दोभंग, दूषित और भ्रष्ट है। **'जिन्हों की भयभीत गर्जना से था कांपता यह तमाम आलम।'** जरा सोचिए तो जो 'गर्जना' स्वयं 'भयभीत' थी उससे तमाम आलम कैसे काँपता था। भयभीत क्रन्दन से करुणा आती है कि कँपकँपी। इसी तुकबन्दी का अन्तिम चरण छन्दोभंग से डगमगा रहा है। भाषा भी बहुधा संशोधनीय है। पुस्तक में कई चित्र ऐसे हैं जिनका पुस्तक के विषय में विशेष सम्बन्ध नहीं बादरायण सम्बन्ध भले ही हो। कई चित्रों का अभाव खटकता है। प० भोजदत्तजी और प० मुरारिलालजी शर्मा के चित्र क्यों नहीं दिये गये। आखिर ये लोग भी तो शुद्धि-सम्प्रदाय के महारथी थे। एक बात और ऐसी है जिसे कहते संकोच होता है, पुस्तक में जहाँ-तहाँ विज्ञापनबाज़ी की बू आती है। टाइटिल पेज पर ग्रन्थकर्त्ता का जो 'सरापा' दिया गया है वह यदि वहाँ न होकर उनकी जीवनी में होता तो इतना न खटकता। ये बातें विस्तार के साथ आपकी या रामपालजी की भूमिका में दी जा सकती थीं। ये बातें मैं आपको अपने तौर पर लिख रहा हूँ। इनमें से जिन बातों को आप ग्रन्थकर्त्ता के नोटिस में लाना चाहें, अपने तौर पर ला सकते हैं। नोचेन्न। वाजिब था सो अर्ज़ किया। आगे आप मालिक हैं। यहाँ सब कुशल है। अपना कुशल समाचार कभी-कभी लिखते रहिए।

हाँ, एक बात तो फ़रमाइए, 'शुद्धिचन्द्रोदय' में जो ऐतिहासिक बातें हैं, वे श्री ओझाजी (प० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा) महाराज को सुनाकर ठीक कर ली गई हैं? उनमें कोई बात निराधार या अटकलपच्चू तो नहीं। यह मैं अपने लिए जानना चाहता हूँ।

पत्र की पहुँच लिखिये। आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१२

श्री जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी को लिखे गये पत्र

१८२

महाविद्यालय,
ज्वालापुर
८-८-१६

माननीय चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

मैं इस 'दौरान' में बराबर इधर-उधर 'दौरे' में रहा, और अनेक झंझटों में फँसा रहा, इसलिए पत्र न लिख सका। क्षमा कीजिए। आपका श्रावण वदि ६ का कृपा-कार्ड कल घर से वापस आने पर मुझे मिला, इसीलिए उत्तर में विलम्ब हुआ, जो क्षन्तव्य है। तलाश, झंझट, पेशवाज़, दफ़ा, पीतल, मूंग और गेंद, ये सब बराबर स्त्रीलिंग में ही बोले-सुने जाते हैं। इधर देहली क्लास के अनुयायी किसी लेखक को इन्हें पुल्लिग में व्यवहार करते नहीं देखा न किसी शिक्षित या अशिक्षित को बोलते ही सुना। लखनऊ वालों की दुनिया बेशक दूसरी है। वह माला को भी पुल्लिग के डोरे में गूंथते हैं। मेरी नाचीज़ राय में हिन्दी वालों को भी इन्हें स्त्रीलिंग ही रहने देना चाहिए। मैं हिन्दी में देहलवी क्लास के अनुसरण का पक्षपाती हूं। यों तो बनारस और उसके आस-पास के हिन्दी लेखक लिंग-व्यत्यय में लखनऊ के उर्दू लेखकों से भी बहुधा बढ़ जाते हैं। प्रातःस्मरणीय भारतेन्दु और भट्टजी तक के लेखों में अनेक उदाहरण मिलते हैं। आगे जो पंचों की राय हो।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१८३

महाविद्यालय
ज्वालापुर
१७-८-१६

माननीय चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

आपके सलूनों के सलोने पत्र का माधुर्य पान कर अन्तःकरण आप्यायित हुआ। झंझट को गुप्तजी ने पुल्लिग माना है। लो यों ही सही उनका अदब भी लाज़मी है। 'झंझट' दोनों लिंगों में हो सकता है, सम्भव है, कुछ अहले जबान या ज़बानदां इसे

मुज़क्कर भी बोलते हों पर दफा, मूंग और पीतल कभी पुल्लिग नहीं, हर्गिज नहीं हो सकते। कभी ऐसा नहीं सुना गया है। 'मारवाड़ी' मुन्शीजी इस बात में 'सनद' नहीं माने जा सकते। मारवाड़ के 'उर्दू वाले' वैसा करते हों तो अजब नहीं। प्रमाण पीछे ढूंढ़-भाल कर लिखूंगा। विशेष श्री वाजपेयीजी की सेवा में प्रणाम।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१८४

महाविद्यालय,
ज्वालापुर
३१-८-१६

श्री चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम

कृपा-पत्र पहुँचा। कृतार्थ किया। 'पीतल' और 'झंझट' के बारे में मेरी राय नाकिस में यही आता है कि इन्हें स्त्रीलिंग में ही माना जाय। कोश की अपेक्षा लोक-यवहार प्रबल है। महाभाष्यकार भगवान् पतंजलि की आज्ञा है **"लिंगमशिष्यं लोकाश्रयत्वाल्लिंगस्य"** अर्थात् लिंगानुशासन की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि लिंग व्यवहार लोक के अधीन है। लोक में जो शब्द जिस लिंग में बोला जाता है वही उसका लिंग है। संस्कृत में कई शब्द ऐसे हैं जिनके लिंग का निर्देश कोशकारों ने दो लिंगों में किया है, पर कवि लोग उनका व्यवहार किसी एक ही लिंग में करते हैं। यदि कोई लेखक उन शब्दों का प्रयोग कोश के आधार पर उस लिंग में भी करे जिसमें कवियों ने नहीं किया तो वह दोष माना जाता । यही नियम हिन्दी-उर्दू शब्दों के लिंग-निर्णय में भी लागू हो सकता है। आगे जो जनाब की राय। 'राय मेरी है वही जो राय हो सरकार की'।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

१८५

महाविद्यालय, ज्वालापुर
श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, ७३

हिन्दी 'कृष्ण-चरित्र' के लेखक को कृष्ण-जन्म की बधाई है, चौबेजी महाराज, प्रणाम। कृपा-पत्र के उत्तर में एक कार्ड भेज चुका हूँ, आज और लिखता हूँ।

'झंझट' के झगड़े में आपकी सर्वतोमुखी जीत हुई। उर्दू के कोश का 'फ़रहंगे आसफ़िया' के लेखक देहलवी और जलाल तथा जलील, लखनवी, इसे मुज़क्कर, ही

मानते हैं, उदाहरण कोई नहीं मिला, पर प्रायः बोलचाल में इधर के पढ़-लिखे स्त्रीलिंग बोलते हैं। 'मूंग' निर्विवाद स्त्रीलिंग है, ऐसा ही बोलते और लिखते हैं, पर एक जगह 'सैयद इन्शा' ने पुल्लिंग में व्यवहार किया है। "**आशिया आबकी है चश्मतर अपनी जिससे, रोज छाती पै (पनचक्की में) ही मूंग दले जाते हैं**" पर 'इन्शा' सौदा के वक्त पुराने लोग थे। सौदा ने 'जान' और 'सैर' को भी पुल्लिंग लिख दिया है, 'सख्त जान है सौदा का', आह क्या कीजे तू आके सैर करें आज दिल के बाग़ों का'। इसी तरह मिर्जा ग़ालिब जो उस समय के कवि हैं, जब उर्दू भाषा मँजकर साफ़ हो गई थी, उन्होंने 'पेन्शन' और 'उर्दू' को पुल्लिग लिखा है और बारबार लिखा है। 'मेरा पेन्शन जारी हो गया' 'मेरा उर्दू फसीह है' यद्यपि उर्दू के अन्य किसी भी बुरे-भले लेखक ने पेन्शन और उर्दू को पुल्लिग नहीं लिखा इसी तरह 'इन्शा' का यह 'मूंग' भी गोराशाही उर्दू हो सकती है।

'पेशवाज़' या 'पिशवाज़' जिसे फ़ारसी वाले 'पेशबाज़' कहते हैं के स्त्रीलिंग होने में तो किसी को संदेह ही न होना चाहिए। खास औरतों की पोशाक है, सुप्रसिद्ध काश्मीरी कवि दयाशंकर 'नसीम' कहते हैं—

"पिशबाज़ किनारे होज़ उतारी
शब की पोशाक पहनी सारी"

'तलाश' का भी यही हाल है, 'सहर' ने लिखा है—'**हविस न जाही हशम की न मालोज़र की तलाश, ग़ज़ल की फिक्र है अल्फा ज़ेबा लमर की तलाश**'। 'गेंद' लखनऊ वालों के यहाँ पुल्लिग है। लखनवी लेखक पुल्लिग के बहुत ही शौक़ीन हैं। यथा '**सितारे मेरे देखे-भाले हुए हैं, ये सब गेंद उनके उछाले हुए हैं।**' (अमीर) पर दिल्ली वाले गेंद को चाहे वह गोराशाही फुटबॉल ही क्यों न हो कभी पुल्लिग ही नहीं कहते—

"जो नज़ाकत से कलाई को घड़कता है मेरा,
हाथ में गेंद उठा तुमने उछाली बेख़बर।" —ज़फ़र

'पीतल' को 'जलाल लखनवी' और 'फरहंगे आसफ़िया' वाले देहलवी पुल्लिग कहते हैं, पर मिसाल कोई नहीं देते, पर यह ज़बरदस्ती की बात है, पुल्लिग धातुओं के झुण्ड ने लोहा, कांसा, ताँबा, सोना आदि ने बेचारी पीतल को भी मरदानी पोशाक पहनाकर अपने गिरोह में मिला लिया। चाँदी ग़रीब अकेली ही स्त्री-पक्ष में रह गई। हमारी राय में पीतल को चाँदी की तरफ़ ही रखा जाय तो अच्छा है। इन कोशकारों को छोड़कर प्राय: पढ़े-लिखे ऐसा ही बोलते हैं, आगे जो पंचों की राय हो।

और जो आज्ञा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१८६

ज्वालापुर
७-४-२८

चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

मुरादाबाद से भेजा हुआ कृपा-पत्र और सिंहावलोकन मिला, कृतार्थ भया। मुझे अत्यन्त खेद है कि आपके मुरादाबाद आने की मुझे सूचना न मिली, वर्ना मैं उड़कर वहाँ पहुँचता, यह काँटा सदा खटकता रहेगा। सिंहावलोकन के लिए आपको भूरि-भूरि धन्यवाद और सफेद-सफेद बधाई देता हूँ। आपका सिंहावलोकन ब्रजभाषा के विरोधियों के लिए सचमुच सिंहावलोकन है, और कविता-प्रेमी रसिकों के लिए कामिनी का कमनीय कटाक्ष है। बड़ी चुभती चुटकियाँ हैं। हँसाने वाली गुदगुदियाँ हैं, दिल से दाद देता हूँ। परमात्मा आपकी इस चुलबुली तबीयत को हमेशा बरक़रार रखे।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१८७

हरदुआगंज
३०-५-१८

श्री चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

आपका पत्र उस दिन मिला था जिस दिन मैं इधर आ रहा था, इसलिए उत्तर में विलम्ब हुआ।

माताजी के स्वर्गवास का समाचार सुनकर दुःख हुआ, निस्सन्देह अब आपको गृहस्थ के झंझटों का अधिक सामना करना पड़ेगा, इससे स्वतन्त्रता और साहित्य-सेवा में भी बाधा पहुँचेगी, पर विधि के विधान में किसी की नहीं चलती, आप जैसे विवेकी विद्वान् को मैं क्या सान्त्वना दूँ?

मैंने आज यहाँ श्रीयुत् प० नाथूरामजी शंकर शर्मा को सिंहावलोकन की 'भीतरी दशा' विशेष रूप से पढ़कर सुनाई। सुनकर उन्होंने बहुत पसंद किया और इस विषय में अपनी अनुकूल सम्मति प्रकट की। इस सम्मति-सम्मेलन के उपलक्ष्य में अपना 'अनुराग रत्न' आपकी सेवा में भेजने को कहा, सो आज की डाक से भेजता हूँ। इसे स्वीकार कीजिए। अवकाश मिलने पर कभी इसे भी देख जाइए, उचित समझिए तो सम्मति भी लिख भेजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१८८

बनारस

१-११-१८

चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

कृपा-कार्ड मिला, अनुगृहीत हुआ, पुनीत हुआ, और 'आश्चर्यान्वित' एवं भयभीत भी हुआ। आपके विकट काफियों की टंकार ने डरा दिया। मैं बनारस में आकर, सच पूछिए तो एक दिन भी तन्दुरुस्त नहीं रहा। फिर भी न जाने अब तक यहाँ कैसे पड़ा रहा, अब यहाँ से जाता हूँ, कल घर जा रहा हूँ, देखिए फिर कब लौटता हूँ। 'बिहारी की सतसई' आज प्रेस से निकली है सो आपकी सेवा में पहली कापी भेजता हूँ, इसे अपनाइए, स्वीकार कीजिए, यानी कबूल फ़र्माइए। इसे कड़ा जी करके शुरू से आख़िर तक एक बार पढ़ जाइए तो बड़ी बात हो, सम्मति लिख सकें तो और भी अनुग्रह हो और बिहारीजी के सम्बन्ध में कोई छिपा भेद बतलावें तो क्या ही बात है। मैं अगले भाग में बिहारी की जीवनी देना चाहता हूँ, इसमें सहायता दीजिए। उनके वंशज सुना है बूंदी में या कहीं हैं। आपको यह बात अवश्य मालूम होगी। मेरी तो प्रार्थना है कि बिहारी की जीवनी आप ही लिख दें तो बड़ा अच्छा हो। बिहारी के विषय में आप जो लिखेंगे सो प्रामाणिक होगा, यह आपका एक 'क़ौमी फ़र्ज़' भी है। मैं आपसे इसकी अदायगी का मतालबा करता हूँ और सुनना चाहता हूँ कि आप क्या फ़रमाते हैं।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१८९

ज्ञान-मंडल, काशी

वैशाख सुदि ६-१७-७६

चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

कृपा-पत्र के साथ 'हिन्दी-लिंग-विचार' मिला, धन्यवाद, मैनी थैंक्स। बाबू शिवप्रसाद जी से 'लिंग-विचार' का सुसमाचार सुना था, वह बहुत तारीफ़ करते थे, मैं आपको लिखने वाला था कि आ गया। लिंग-विचार के प्रहार से बेचारे 'लिंग-भक्त' लोग बिलबिला उठेंगे। आप भी ग़ज़ब ढाते हैं, ख़ूब लिखा है! क्यों न हो, आपने लिखा है। आप सम्मेलन की हज्ज कर आये, मैं महरूम रह गया, इसका अफ़सोस है। अब बिहारी की बारी कब आयगी? आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१९०

नायक नगला,
पो० ऑ० चाँदपुर (बिजनौर)
चैत्र ३०, '७६

प्रणाम।

चैत्र वदि १० का कार्ड मिला। आपने मकान खरीद लिया, खुशी की बात है। यानी अब आप रईसे-कलकत्ता हो गये। बधाई है, पर भाई, अच्छा तो यह होता कि आप ब्रज में रहते, यू० पी० की शोभा बढ़ाते। बंगाले का 'जादू' आप पर चल गया। अब आपको 'जादूगर' कहा जाय तो बेजा नहीं है। 'दाग़' ने कहा था, 'तुमने जादूगर उसे क्यों कह दिया? देहलवी है दाग़ बंगाली नहीं'। अकबर ने कहा है और खूब कहा है— 'स्पीच बंगाली की सुन, बंगालनों के बाल देख।' आप भी इन्हीं में उलझकर रह गये।

मैं इस बीच में बराबर इधर-उधर फिरता रहा, एक बड़े झंझट में फँसा रहा, इस कारण पत्र न लिख सका, कटिंग्स पढ़ लिये। पाटलिपुत्र के 'किरानी' की करतूत पर अफ़सोस हुआ, क्या कहिये दुनिया में भी कैसे-कैसे विचित्र जन्तु भरे पड़े हैं, और यह हज़रत तो आपके मिलने वालों में थे। एक उर्दू के कवि ने क्या ही अच्छा कहा है—'है ये दुनिया ख़ुदगरज़ किस पै भरोसा कीजिए ? दोस्त दुश्मन बन के दग़ा दे तो फिर क्या कीजिए' हिन्दी वालों का बाबा आदम ही निराला है। साहित्य-सेवियों की क़द्र कैसे हो। इन्हें तो रायबहादुर, कोई बड़े भारी लीडर और लक्ष्मी-वाहन चाहिएँ। साहित्य-सेवी लोग तो यहाँ बेगारी और मजूर हैं। मेरी राय में तो साहित्य-सेवियों को चाहिए, यदि उनमें कुछ भी आत्मसम्मान का माद्दा है, कि ऐसे सम्मेलन का बायकाट कर दें, कितना अंधेर है चाहे जो सभापति बन बैठता है। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की मेम्बरी के लिए भी कुछ नियम हैं, यहाँ कोई नियम नहीं, जो दौड़-धूप करके वोट हासिल करले वही प्रधान। पहले सुना था प० गौरीशंकर ओझा चुने गये हैं। मुझे यह चुनाव दिल से पसन्द था, पर जाने यह चुनाव क्यों रद हो गया। इसमें भी कुछ भेद होगा। अब लिखने-पढ़ने से क्या होगा सिवाय 'नक्कू' बनने के। अब कुछ भी लिखने का अर्थ सम्मेलन की सफलता में विघ्न डालना समझा जायगा, लिखने वाले को नफ़रत से देखा जायगा और ख़ूब कोसा जायगा। इसके सिवाय कुछ नतीजा न निकलेगा। आन्दोलन करके सभापति के चुनाव के नियमों में कुछ विशेष परिवर्तन अवश्य कराना चाहिए, सभापतित्व के लिए साहित्य-सेवा और योग्यता की क़ैद लगाना चाहिए, इसके लिए आन्दोलन कराइये मैं भी इसमें योग दूंगा।

अनावृष्टिजन्य अकाल के लिए 'सूखा पड़ी' बोलते तो हैं, इस वक़्त कोई

मिसाल तो याद नहीं आती पर फ़साहत का फ़ैसला फ़सीह लोगों के इस्तेमाल पर है। यानी आप जैसे फ़सीह लोग बोलें तो फ़सीह है नहीं तो नहीं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६१

नायक नगला,
पो० ऑ० चाँदपुर (बिजनौर)
का० सु० ६, १९७७

श्री चतुर्वेदीजी महाराज, प्रणाम।

मैं बहुत दिनों से बीमार हूँ, सम्मेलन के दिनों में भी बीमार था, मुरादाबाद से कनखल सेहत की मरम्मत कराने चला गया था। आज ही यहाँ लौटा हूँ, अब कुछ अच्छा हूँ। कार्ड मिला, भाषण आपको पसन्द आ गया, इस पर मैं कुछ फ़ख़्र कर सकता हूँ। मेवा को उर्दू वाले प्रायः पुल्लिंग ही मानते हैं, पर किसी-किसी ने कभी स्त्रीलिंग में भी प्रयोग किया है। इधर ज्यादातर स्त्रीलिंग में ही बोलते हैं। चौबा सम्प्रदाय भी इसी पक्ष में है। यह और भी अच्छी बात है। ऐसे मामलों में—"राय मेरी है वही जो राय है सरकार की।"

आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१३

श्री प० ज्वालादत्त शर्मा को लिखे गये पत्र

१६२

नायक नगला

का० कृ० ५, '८४

प्रणाम ।

का० व० का कृपा-कार्ड पहुँचा । इस बीच में तीमारदारी के चक्कर में बहुत फँसना पड़ा । अब तक छुटकारा नहीं । कभी कोई और कभी कोई । बदाबदी से बीमार हो रहे हैं । मुझे परिचर्या और चिकित्सा दोनों करनी पड़ रही है । इसके अलावा बाहर के बीमार भी ठोक-पीट कर वैद्यराज बनाकर घेरे रहते हैं । तबीअत परेशान रहती है । हाँ, मैं तो फिर कहूँगा कि आप 'विद्यासागर' को अवश्य पढ़ें और शीघ्र पढ़ें । शुभस्यशीघ्रम् । यह टुकड़ा आपने सुना ही होगा । मुझे तो वह आनन्द आया कि कह नहीं सकता । यों तो मुझे पढ़ने का भस्मक रोग है । जाने क्या-क्या पढ़ डालता हूँ, फिर भी नीयत नहीं भरती । पर ऐसी सुन्दर पुस्तक बहुत दिन बाद पढ़ने को मिली । अफ़सोस हुआ कि अब तक क्यों न पढ़ी थी । आप मूल बंगला पढ़ें । एक बंगाली विद्वान ने मुझे लिखा है और ज़ोर देकर लिखा है कि इस पुस्तक के लिए आप बंगला पढ़ें । चंडीचरणजी बंगला के कोई नामी लेखक हैं । यों तो हमारे अनुवादक पुंगव श्री पांडेयजी ने अनुवाद भी अच्छा किया है, पुस्तक सब प्रकार से अच्छी हुई है । मूल और अनुवाद दोनों मँगवाइये और मज़ा ले लेकर पढ़िये ।

श्री महाप्रभुजी को चरण छूना जी । इधर पढ़ा कि श्री प० भवानीदत्तजी का स्वर्गवास हो गया है । हा हन्त ! बड़े विद्वान अध्यापक थे । मैंने भी उनसे पढ़ा था ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१६३

काव्य-कुटीर, नायक नगला,

विजयादशमी, १९८४ गुरुवार

प्रणाम ।

असोज सुदि ७ का पत्र परसों ही मिल गया था । रमेशचन्द्र की सगाई चढ़ गई, यह सुनकर प्रसन्नता हुई । इस प्रसन्नता की मात्रा इससे और बढ़ गई कि

श्री महाप्रभु-चरण उस दिन वहाँ स्वयं विराजमान हो गये। यह आपका नहीं रमेश-चन्द्र का सौभाग्य है, क्या हुआ जो उड़िया स्वामी न आये जब कि साक्षात् महाप्रभुजी उपस्थित थे। ऐसा योग और संयोग कभी-कभी आता है और "प्रसादचिन्हानि पुर: फलानि" की शुभ सूचना देने वाला होता है। श्री महाप्रभुजी को मेरा चरण छूना, पाँव लगना या पाँव लेना पहुँचे और ज़रूर पहुँचे। देखिये, अमानत में ख़यानत न कर जाइये यानी भूल न जाइये। मैंने इस बीच में इस बार और पहली बार विद्यासागर की जीवनी पढ़ी। उसे पढ़कर जो आनन्द पाया, बाणी से जाए वह क्योंकर बताया'। यह एक आर्यसमाजी-भजन का अन्तरा है, 'ईजादे बन्दा' नहीं है। मेरी तो धारणा हो गई है कि विद्यासागर-सा पर-दुख-कातर परोपकारपरायण महात्मा इधर इस कलियुग में नहीं हुआ। कोई हुआ हो तो आप बतावें। मैं समझता हूँ आपने विद्यासागर की जीवनी मूल बंगला में, पहले आश्रम में जब आपको पढ़ने-लिखने से इतनी अरुचि नहीं थी, ज़रूर पढ़ी होगी। न पढ़ी हो तो मैं जोरपूर्वक' प्रार्थना करूँगा जैसे भी हो सके, तबीयत पर ज़ब्र करके भी विद्यासागर पढ़िये। अद्भुत जीवनी है। एसी सुन्दर जीवनी मैंने इस जीवन में नहीं पढ़ी थी। इसी प्रसंग में थोड़ा-सा कष्ट और भी दूंगा। इस हफ़्ते का 'मतवाला' न पढ़ा हो तो पढ़ जाइये। बहुत ख़ूब है। अख़बारी दुनिया की सैर, चलती मछली, चंडूखाने की गप, सभी अच्छा है कि 'बौत अच्छा' है। 'सुधा' पर ९-१० पृष्ठ पर जो लिखा है, उसे पढ़कर आपकी तोंद, क्षमा कीजिए, फड़क जायगी। 'सुधा' वाले एक विशेषांक सम्पादन कराने के लिए बेतरह पीछे पड़े हैं। मैं इनकार करता हूँ अपनी अयोग्यता और अक्षमता की दुहाई दे-देकर और वह हैं कि मानते ही नहीं। कहिये, क्या करूँ, इस मसले के बीच में आप क्या फ़रमाते हैं? मिजाज अच्छे हैं। कहीं जाने का पहला प्रोग्राम तो है नहीं पर पता नहीं कब पाँव में गर्दिश आजाय। आबोदाना के हाथ बात है।

आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१९४

नायक नगला, चाँदपुर
भा० सु० १२, १९८४

प्रणाम।

कई दिवस व्यतीत भये जो है सो आपका एक कार्ड श्री काशीधाम से आइ रहिल। नई 'सरस्वती' में श्री साहित्याचार्यजी का छायावाद पर एक लेख

पठनीय निकला है। आपने पढ़ा ही होगा। ये छायावादी बड़ा अन्धकार फैला रहे हैं, आप देख रहे हैं। 'छायाश्चरन्ति परितः पिशिताशननाम्'।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१९५

महाविद्यालय, ज्वालापुर,
भा० सु० ७, १९८५

प्रणाम।

कल का पत्र आज मिल गया। आपका 'नवाह' देखने की इच्छा होती है। वह देखने की चीज़ होगी, यह मैं वहीं से कहे देता हूँ। 'नवाह' सफलता से समाप्त हो। आपको आसन-सिद्धि और तन्द्रा पर विजय प्राप्त हो। ······ का ध्यान बीच-बीच में चित्तवृत्ति को चंचल न करे, यही इस बारे में जगदीश से प्रार्थना है। मसूरी अकेले जाने को जी नहीं चाहता। आप आते तो देख आता। फिर देखा जायगा। हाँ, मुख्याध्यापकजी का श्राद्ध कर दिया। इस कर्तव्य-पालन ने मुझे बहुत ही अधीर कर दिया। बार-बार हृदय उमड़ता था और आँखों के रास्ते बह पड़ता था। इतनी विकलता मुझे किसी लेख के लिखने में नहीं हुई। एक-एक बात दिल से टकराकर निकली है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१९६

गुरुकुल, कांगड़ी
अगहन वदि ११, १९८५, शुक्रवार

प्रणाम।

कार्ड आज मिल गया। चिन्ता मिटी। 'सुधा' वालों को मैंने ८-१० दिन हुए एक कड़ा पत्र लिखा था कि लेखकों को यथेष्ट पुरस्कार दो जिनके लेख छप चुके हैं, बाक़ी वापस करो। चित्रों के बारे में भी लिखा था कि कुछ लेखकों के चित्र तो रंगीन छपे हैं, बाकी के ब्लाक भी भद्दे बने हैं। यह अन्धेर, याद रखो, काठ की हंडिया दुबारा नहीं चढ़ा करती। इत्यादि बहुत कुछ लिखा था, पर वह उसे पी गये। यहाँ से दो प्रोफ़ेसर लखनऊ गये थे। उनकी मार्फ़त ज़बानी सफ़ाई पेश की गई है। पुरस्कार के बारे में फ़र्माया है, "हमारा नियम है कि पुरस्कार सिर्फ़ उन्हीं लेखकों को देते हैं, जो पुरस्कार के लिए ही लिखते हैं, बाक़ियों को नहीं।" पुरस्कार के लिए कौन लिखते हैं, इसका निर्णय उन्हीं के हाथ में है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१९७

गढ़मुक्तेश्वर
१०-१२-२७

प्रणाम ।

आपका पिछला, सबसे पिछला, कार्ड पाकर मैं समझ बैठा था कि आप बम्बई में विराज रहे हैं । पर परसों हापुड से इधर आते हुए रेल में लोकल गांधी लीडर-उल् (मुरादाबाद) बदहवासाचार्यजी मिल पड़े थे। उनसे मालूम हुआ, अभी आप वहीं हैं और गौड़ महासभा की आयोजना में संलग्न हैं । सुनकर खुशी हुई । देखता हूँ हिरनों पर भी घास लदने लगी है ! यह भी सुना था कि इस मौक़े पर शंकरजी (महाकवि शंकर) को बुलाया जा रहा है । यदि ऐसा आप कर लें तो मैं भी बदूं । फिर आप भी साहिबे-मौजिज़ा समझे जाने लगेंगे । यानी स्थावर को जंगम बनाकर । हाँ, यह भी मैंने उनसे डरते-डरते सुना कि आप अब बम्बई जा रहे हैं । परसों चन्द्रग्रहण पर आपके दर्शनों की लालसा थी । जनाबे लीडर से भी मैंने कह दिया था कि आवें और स्नान से गंगा को पवित्र करें । पर यह न हुआ । यानी आप न आये । देखिए, कब दर्शन होते हैं । मैं कल यहाँ से असौड़े और वहाँ से घर पहुँचूंगा । आशा है, आप सानन्द हैं ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१९८

गुरुकुल, कांगड़ी
२०-८-२८

प्रणमामि महाराज ।

कहिये क्या बात है ? किसी बात पर नाराज़ हो गये ? एकदम यह चुप्पी क्यों साध ली ? सबब, वजह, कारण, हेतु आखिर कुछ तो फ़रमाइए । मसूरी की सैर कर रहे हैं कि चौपाटी के बंगले में विराजमान हैं ? या काशी में बैठे मौन अनुष्ठान कर रहे हैं । नसीबे दुश्मनां कोई ऐसी-वैसी बात तो नहीं ? कुशल तो है ?

"यां लब पै लाख-लाख सख़ुन इज़तराब में
वां एक ख़ामोशी तेरी सब के जवाब में ।"

१५ दिन हुए एक पत्र भेजा था, उत्तर नहीं मिला । चिन्ता बढ़ रही है ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१९९

गुरुकुल, कांगड़ी,
चैत्र सुदि १३, १९८६, रविवार

प्रणाम।

कृपा-पत्र मिला। शुक्लजी का उत्तर वास्तव में बड़ा विचित्र है। पुरस्कार में भी तमादी आरिज़ हो जाती है। यह नई बात मालूम हुई। बात यह है कि सम्पादक लोग लेखकों से सेंतमेंत में बेगार लेकर मालिक के सामने अपनी कारगुज़ारी दिखलाते हैं। सुर्खरू बनते हैं और मुट्ठी गरम करते हैं। गौड़जी (प्रो० रामदास गौड़) के एक लेख का पुरस्कार भी 'सरस्वती' वालों से आठ महीने के बाद भी हीलोहुज्जत के बाद मिला था। ख़ैर, जाने दीजिए। शुक्लजी को अधिक 'लज्जित' न कीजिए। बेचारे पहले ही पीले पड़ गये हैं। पुरस्कार के टके मिल भी गये तो क्या काल कट जायगा। शाकाय वास्याल्लवणाय वा स्यात्।

रामावतारजी और रघुवरदयालजी का उठ जाना बहुत बुरी दुर्घटना है। अफ़सोस।

"ज़ाहिर है वक़्त आख़िर हमारी क़ौम का।
मरसिया है एक का नौहा है सारी क़ौम का।"

हरद्वार आइए तो एक दिन यहाँ भी आकर रहिए। इस उजड़े हुए दियार की भी सैर कर जाइए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२००

८८-बी० बलराम दे स्ट्रीट
कलकत्ता
का० व० ५, ८६ बुधवार

प्रणाम।

सोम का कार्ड आज बुध को मिला। समाचार जानकर चिन्ता मिटी। मैं समझता था कि आप कहीं बाहर टूर पर हैं। क्या कहूँ मैं तो इस बार कलकत्ते में आकर मर मिटा। 'पद्म-पराग' के तैयार होने में देर देखकर मैंने प० हृषीकेश शास्त्री के संस्कृत-निबन्धों का काम शुरू कर दिया। एक प्रेस ने १५ दिन में छाप देने का वायदा किया था, पर प्रेस वालों और दर्जियों का वायदा एक-सा होता है। आज २० दिन में ३ ही फ़ार्म छापे हैं और अभी ७-८ और बाक़ी हैं। उसकी छपाई

का प्रबन्ध बा० मूलचन्द्रजी 'विश्वामित्र'-सम्पादक की सहायता से हुआ है । तीन सौ का खर्च है । निबन्ध १५-२० वर्ष से छपने को पड़े थे । फटकर नष्ट होने लगे थे । बड़े यत्न से संग्रह-संशोधनादि हुआ था । शास्त्रीजी छपने से पहले ही चल बसे ! उनकी प्रबल इच्छा थी कि ये निबन्ध प्रकाशित हो जायँ । इस बारे में जो उत्तेजना के पत्र उन्होंने मुझे लिखे थे, कभी सुनाऊँगा । तो आप कहेंगे, यह काम तभी हो जाना चाहिए था । मुझे इन निबन्धों की इतनी चिन्ता थी कि कह नहीं सकता, उनके प्रकाशन का सुयोग देखकर मैं इस काम में लग गया । पर पिण्ड छूटना कठिन हो रहा है । यहाँ से कब चलूँगा, क्या बतलाऊँ । कुछ पता भी हो । या तो मैं आऊँगा या समाचारपत्रों में आप खबर पढ़ेंगे कि कोई कलकत्ते में आया था । पुस्तक निकलते-निकलते जान न निकल गई तो आऊँगा । बस यही कह सकता हूँ । मेरे हक़ में दुआ कीजिए कि पुस्तक निकले या जान निकले । बहरहाल मैं किसी तरह कलकत्ते से निकलूँ । कल २४, १० को पूरे तीन महीने यहाँ आये हो जायँगे । स्वास्थ्य का संहार होगया । आप समझते होंगे यह कलकत्ते में यों ही पड़ा है । न किसी से मिलता हूँ, न कहीं जाता हूँ । न नाटक न सिनेमा, न सैर-सपाटा । बस प्रेस, प्रूफ़ और मैं । रात के एक-एक बजे तक आँखों का तेल निकल जाता है । बैठे-बैठे कमर का कचूमर निकल जाता है । फिर भी वक्त पर और ठीक काम नहीं होता । सोचता हूँ, कहीं व्यासजी को अपने पुराण प्रेस में छपाने पड़ते तो क्या करते । लोक छोड़कर भाग खड़े होते ! स्वर्ग में जाकर ही दम लेते । एक बात और भी सोचता हूँ, कहीं दुर्वासाजी मिल जाते और उन्हें किसी ढब से इन प्रेसवालों से भिड़ा दिया जाता तो इस दुःख-दायी प्रेस सिस्टम का अन्त हो जाता । साहित्य-सेवियों की एक बड़े संकट से रक्षा हो जाती ! कहीं मिलें तो खयाल रखिएगा ।

हाँ, शारदोत्सव में अबकी बार नटराज रवीन्द्र का अभिनय देखा । अलबत्ता यह काम हुआ । बाक़ी तो कलकत्ते रहकर भाड़ झोंकता रहा । आशा है, आप सानन्द हैं ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०१

गुरुकुल, कांगड़ी,
१-१-२६, मंगलवार

प्रणाम ।

बम्बई में नये वर्ष का नया दिन 'मंगल' हो । मैं वृन्दावन-गुरुकुल से लौटता हुआ दो दिन के लिए घर गया था । इसी संक्षिप्त समय में से आपके लिए भी वक़्त निकालकर कल ४ बजे मुरादाबाद दरे-दौलत पर हाज़िरी दी । पर "नसीब हो न

सकी दौलते-क़दम बोसो" अदब और हसरत से आस्ताना चूमकर चला गया। थोड़ा ताज़ा गुड खास तौर पर तैयार कराकर भेंट के लिए ले गया था, सो दे आया। और गुड़ बाद को पहुँचेगा, अभी अपने गन्ने नहीं चले। यह तो वैसे ही जल्दी में 'नमूनार्थ' बनवा लिया था। 'रिक्तपाणिनपश्येत्' इस शिष्टाचार के पालनार्थ। पर बना अच्छा था। आप चखते तो दाद देते, यद्यपि था निकृष्ट कोटि के गन्नों का, महाराजजी की घड़ी की तरह! इस बार रामनाथ को कह आया हूँ कि गुड़ बनवा-कर खुद मुरादाबाद पहुँचा आवें। इति गुड़ाध्यायः।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०२

१२, आशुतोष दे लेन
गांगेय भवन, कलकत्ता
१६-११-'२६

प्रणाम।

"ज़रा ध्यान धर के इधर कान दीजे"--आज एक चिन्ताजनक सूचना मिली है। यानी नायक-नगला', चाँदपुर पोस्ट ऑफ़िस से निकलकर नूरपुर पोस्ट ऑफ़िस में मिलने जा रहा है। इससे मुझे बड़ी असुविधा हो जायगी। चाँदपुर अकसर जाने-आने का काम रहता है। कोई-न-कोई किसी-न-किसी काम से आता-जाता रहता है, इससे डाक मँगाने और भेजने में आसानी रहती है। नूरपुर ग़ैर मुताल्लिक़-सी जगह है। नूरपुर पोस्ट ऑफ़िस में तार-घर भी नहीं है, चाँदपुर में है। कोई उपाय ऐसा होना चाहिए जिससे यह आई बला टल जाय, चाँदपुर पो० ऑ० से सम्बन्ध-विच्छेद न हो। कोई कोशिश ऐसी हो सकती हो तो कीजिए। मुरादाबाद या लखनऊ में कोई आपका परिचित डाक के महकमे में हो तो नज़र दौडाइए और कोशिश कीजिए। मेरी नज़र आप ही पर जा रही है। मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक वाली बात है। लोगों को स्वराज्य मिलने जा रहा है या मिल रहा है। क्या इस फ़ैयाजी के दौर में हम पर इतनी इनायत भी न होगी। आप ही इन्साफ़ कीजिए।

मामला बहुत अहम् है। इस पर मेरी नज़र से ग़ौर फ़रमाइये और कोई तदबीर, जो कारगर हो सके, सोचिए। कोशिश की शक्ल क्या होनी चाहिए, यह मैं नहीं सोच सका। यह मामला आप ही पर छोड़ता हूँ। आज इस ख़त में सिवा इसके और कुछ न लिखूंगा। और आप से यही दरख्वास्त करूंगा कि कुछ कीजिए। लिल्लाह

कुछ कीजिए और मुझे तसल्लीबख्श या 'सन्तोषबख्श' अथवा 'तसल्लीप्रद' (पंजाबी आर्य भाषा में ऐसा भी बोला जाता है।) जवाब दीजिए। ईश्वर करे यह पत्र आपको वक़्त पर मिल जाय। इसके पहुँचने के वक़्त आप कहीं दूर पर न हों।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०३

१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
२४-११-२६

प्रणाम।

२०-११-२६ का कृपा-कार्ड कल मिला। मेरे पहले कार्ड की सद्गति गंगाजी पर हो गई, यह जानकर खुशी हुई। कार्तिक पर मैं न पहुँच सका तो मेरा कार्ड ही पहुँच गया, मानो इस रूप में मैं ही पहुँच गया! मालूम होता है आप इस बार गढ़ नहा आये। यहाँ से छुटकारा पाकर तो मैं कुछ दिनों कहीं गंगा-तट पर धूनी रमाऊँगा। रेत में लोट लगाऊँगा। इस शहरी ज़िन्दगी से तंग आगया। जंगल का पंछी कलकत्ते के चिड़ियाघर में आ फँसा! क़यामत का सामना है। कब तक छुटकारा होगा, कह नहीं सकता। संस्कृत-निबन्धों के चार फ़ार्म और बाक़ी हैं। काम निहायत सुस्ती से हो रहा है। शायद बीच में ही छोड़कर भागना पड़े। परशुराम कृत्रिम नाम है बा० राजशेखर बोस का। यह बंगाल कैमीकल कम्पनी के डायरेक्टर हैं। हास्य-रस के आचार्य हैं। भेडियाधसान आपके पास दो-चार दिन में पहुँच जायगी। पढ़कर दो-चार शब्द लिख भेजिये। बस।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०४

१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
१२-१२-२६

प्रणाम।

दोनों कार्ड आगे-पीछे पहुँचे। धन्यवाद की विभूति तक़सीम कर दी है। सब ने सिर-माथे पर चढ़ाई, आँखों से लगाई। आपको 'भेड़ियाधसान' पसन्द आई, यह सुनकर अपने भाग्य की जो है सो 'विशाल भारत' वाले सिर धुन-धुन कर सराहना कर रहे हैं। आपकी दाद को वे ('विशाल भारत' वाले) छापना चाहते हैं। आपको कोई आपत्ति तो नहीं। छापने दूँ? आप उसमें से कुछ वापस तो नहीं लेना चाहते। हिन्दी

के भड़वे इस कड़वे सार्टिफ़िकेट से बिगड़ उठे तो जो होगा उसे आप सहर्ष स्वीकार करेंगे। इस प्रकार बेधड़क सम्मति देना आफ़त मोल लेना है, जरा सोचकर जवाब दीजिएगा। आज्ञानुसार परशुरामजी के दर्शन की चेष्टा करूँगा और चरण-धूलि मिल सकी तो बटोरकर थैली में भर लूँगा और जो 'भड़वा' रास्ते में मिलेगा, उसी पर बखेरता आऊँगा, यानी हास्य रस का बीज ऐसे बोता आऊँगा जैसे गया में जौ बोये जाते हैं।

आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०५

गांगेय भवन,
१२, आशुतोष दे लेन, कलकत्ता
'स्वातन्त्र्यस्थ तृतीय दिवसे' शनिवारे, ३० ई०

प्रणाम।

ता० २८ का कृपा-पत्र परसों ही मिल गया था। परसों आपके उस आर्डर की तामील में श्री परशुरामजी के दर्शन करने 'भेडियाधसान' के अनुवादक को साथ लेकर गया। मिले और बड़े तपाक से मिले। बड़े मिलनसार, गम्भीर पर प्रसन्नवदन हैं। एक बंगला डिक्शनरी 'चलन्तिका' लिख रहे हैं। लिख चुके हैं, छपा रहे हैं। एक चीज़ होगी। उसका बहुत-सा हिस्सा सुनाया। कई शब्दों की निरुक्ति पर परामर्श-विमर्श हुआ। उन मुरादाबादी पण्डितजी की परिभाषा में पूर्व पक्ष उत्तर पक्ष चला। वह मुलाक़ात उसी में ख़त्म हुई। उस दिन सवेरे साढ़े सात बजे पहुँचे थे। जगह तीन मील दूर है। कारख़ाना अभी खुला न था। आज देखने की बात ठहरी थी। तीन बजे हम लोगों को अपनी मोटर में लेने आये और लिवा ले गये। एक-एक चीज़ दिखाई और खूब दिखाई। तबीयत खुश हो गई। बहुत बड़ा कारख़ाना है। १५ सौ आदमी काम करते हैं। १९ लाख मूलधन से कम्पनी खड़ी की गई थी। आज चालीस लाख के ऊपर की सम्पत्ति है। शेयर होल्डरों को जो मिल चुका है वह उससे अलग है। परशुरामजी (श्री राजशेखर बसु) कम्पनी में मैनेजिंग डाइरेक्टर हैं। कम्पनी की उन्नति का श्रेय इन्हीं के सुप्रबन्ध को है। ऐसा कहा जाता है। मतलब यह कि कोरे 'हास्य-रसावतार' ही नहीं हैं। ठोस कामकाजी आदमी हैं। आपके उस पत्र का ज़िक्र किया। चरण-रज वाली बात कही। सुनकर मुस्कराने लगे। जब हम लोग कारख़ाना देख रहे थे, आपका ख़याल भर साथ था। आप होते तो और भी अच्छा होता।

'स्वतन्त्र' के मारवाड़ी अंक पर आपकी सम्मति मार्के की रही । वह मस्त मतवाले में उद्धृत होगी, पर नाम न रहेगा । उसे लोगों ने पसन्द किया है । मस्त मतवाले का पहला अंक भेजता हूँ । पढ़िए, ख़ासकर 'मेरी तो बस यही मान्यता' और 'पंजाब मेल में' !

लोक-संग्रह की कटिंग भी मुलाहज़ा फ़रमा लीजिए । पारसनाथसिंहजी का 'सन् सत्तावन की स्मृति' लेख देखिए, यह वही 'जूते' वाले पारसनाथजी हैं । अच्छा लिखते हैं । आप किसी यात्रा में बिठुर जायँ तो टोपे की कुञ्ज का भी दर्शन करें ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०६

नायक-नगला, चाँदपुर
ता० ७-४-१९३०

प्रणाम ।

अयोध्याजी का पेन्सली कार्ड मिला । मुरादाबाद से चाँदपुर पहुँचते ही मैं बीमार हो गया । उसी दिन मैं बिजनौर गया । रक्तातिसार का दौरा बढ़ गया, निर्बलता बहुत हो गई । पढ़ना-लिखना बन्द है । ग़ज़ब यह कि चायामृत-पान भी नहीं कर सकता । इसी से आप मेरी बेकसी और मजबूरी का अन्दाज़ा कर सकते हैं । बिजनौर में प० सुमित्रानन्दन पंत से भेंट हुई, वह अपने बहनोई प० दयानन्द जोशी मुन्सिफ़ के पास ठहरे हुए हैं । पन्तजी से मिलने का यह पहला ही मौक़ा था । आदमी जैन्टिलमैन हैं । आने पर व्यासजी की पोथी पढ़ूंगा और सम्मति लिख भेजूंगा । आप ख़ातिर जमा रखिए । समझ में न आयेगी तो भी सम्मति लिख भेजूंगा । इससे ज़्यादा और क्या होगा ? श्री शास्त्रीजी से बहुत-बहुत प्रणाम कहिए । और प० श्रीदत्तजी से भी ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०७

इन्दौर
७-७-३०

प्रणाम ।

आपके पत्र के उत्तर में एक पत्र इसी पते पर १०-१२ दिन पहले भेजा था । पर उसकी पहुँच न पहुँची । आपको अवकाश कहाँ होगा? स्वर्ग में पहुँचकर मर्त्य-लोक

की खबर किसे रहती है। अच्छी बात है। कभी तो लौटोगे ही। सदा काश्मीर में तो न रहोगे। न बोलो।

मैं आज यहाँ से उज्जैन जा रहा हूँ। वहाँ से चित्तौर, उदयपुर देखकर आगरे होता हुआ १०-१२ दिन में घर लौटूंगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०८

c/o **हिन्दी प्रेस, प्रयाग**
१-६-१६३० सोम

प्रणाम।

उस दिन का कार्ड पहुँचा होगा। 'लीडर' में आपने पढ़ लिया होगा कि परसों श्री प० रामजीलाल शर्माजी का सहसा स्वर्गवास हो गया। बीमार तो वह बहुत दिनों से थे, पर ऐसी आशा-आशंका न थी। पाँव के अँगूठे में मामूली चोट थी। बढ़ते-बढ़ते फैल गई। डाक्टर ने देखते ही झट काट दिया। पाँव कटेगा, ऐसे मामलों में डाक्टरों के हुक्म की अपील नहीं, सबकी राय एक ही होती है। एक डाक्टर ने कहा—सिर्फ़ अँगूठा कटेगा; दूसरे ने कहा—'नहीं, पंजा कटेगा; तीसरे ने कहा—पिंडली तक ऑपरेशन होगा। फिर ऑपरेशन के ऊपर राय हुई पाली से ऊपर तक। टाँग काट डाली गई और उसी दिन शाम को साढ़े सात बजे पण्डितजी चल बसे! बड़ी ही भयंकर दुर्घटना हो गई। शोक!

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०६

हिन्दी प्रेस, प्रयाग
२६-६-१६३०
(रात को ११½ बजे)

प्रणाम।

मैं अभी यहीं अटका हूँ। कहीं नहीं जा सका। इस बीच में इसलिए चुप रहा कि क्या लिखूँ, कोई बात ठिकाने की हो तो लिखूँ भी। जिस काम के लिए आया था वह तो हो गया। यानी पुस्तक छपकर कमेटी में पहुँच गई। बस। अभी इतना ही हुआ है। जिल्द बाक़ी है। इस बीच में एक और काम सिर पर आ पड़ा है,

हिन्दुस्तानी एकेडमी ने एक लेक्चर देने का निमन्त्रण दिया है जो लिखकर फ़रवरी या मार्च में देना सुनाना; होगा। इसकी फ़िक्र है। काम बड़ा है, वक़्त थोड़ा है। दुआ दीजिए। सफलता के लिए चंडी का पाठ कर दीजिए।

मैं कल शाम को या रात को यहाँ से चलूँगा। परसों लखनऊ रहूँगा और वहाँ से आगरे होता हुआ, हो सका तो शंकरजी के दर्शन करता हुआ घर पहुँचूँगा। इसके बाद मौक़ा मिलने पर आप से मुलाक़ात होगी। हाँ, इस बीच में यह काम मैंने और किये। अकबर के मज़ार की ज़ियारत, श्री मालवीयजी के जेल में दर्शन, यहाँ के अनेक प्रोफ़ेसरान से भेंट-मुलाक़ात इत्यादि-इत्यादि।

कल से यहाँ वर्षा फिर नये सिरे से शुरू हुई है। आज तो हद्द कर दी। ५ बजे से झड़ी लगी है और अब १२ बजने को हैं और मेंह है कि थमने का नाम नहीं लेता।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२१०

c/o हरिशङ्कर शर्मा,
राजामण्डी, आगरा
२६, १२, १९३१

प्रणाम, महाराज !

पत्रोत्तर न पाने से और बिना मिले लौट आने से मैं सचमुच चकित-स्तम्भित एवं भीत था, और सोच रहा था कि ऐसा क्या अपराध इस शरीर से बन पड़ा, जिसका यह गुरुतम दण्ड मिला है। अब आपका पत्र पाकर 'तन-तन' तसल्ली हुई है, वर्ना मैं बड़ी ही दुविधा में पड़ गया था। मैं इस बार बाहर आकर बराबर बीमार ही रहा। लेक्चर का काम अभी खत्म नहीं कर सका, कोशिश कर रहा हूँ। आशीर्वाद दीजिए। बम्बई की इस यात्रा में एक परोपकार का काम करते आइये तो बड़ा अच्छा हो। निर्णयसागर वालों या गुजराती प्रेस वालों से मिलकर मालूम कीजिए, प्रेरणा कीजिए, कल्हण की 'सूक्ति मुक्तावली' यह लोग प्रकाशित कर सकें तो मेरे एक परिचित विद्वान उसका सम्पादन कर देना चाहते हैं। ग्रन्थ उन्हें मिल गया है, जो अब तक कहीं नहीं छपा है। ग्रन्थ बहुत महत्त्वपूर्ण है। आपकी प्रेरणा से यह काम हो जाय तो बड़ा उपकार हो। इस पुण्य कार्य के लिए थोड़ा-सा समय जरूर निकालिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२११

C/O पं० हरिशंकर शर्मा
राजामंडी, आगरा
८, १, १६३२, शुक्रवार

प्रणाम, महाराज !

अफ़सोस के मारे में दो दिन तक पत्र भी नहीं लिख सका । उस दिन आप पधारे, हम लोगों का दुर्भाग्य कि दर्शनों से वंचित रह गये । घर पर गंगा आई और स्नान न कर सके । हम लोग ६½ बजे के बाद लौटे । पत्र पढ़कर राजामंडी स्टेशन पर पहुँचने के लिए दुबारा कपड़े पहन ही रहा था कि इतने ही में वह गाड़ी आ गई, जिसमें आप आ रहे थे, रह गया । मैंने इरादा किया था कि या तो आपको उतार लाऊँगा या सिटी स्टेशन तक बातें करता चला जाऊँगा । दिल की दिल में ही रह गई । बम्बई की ताज़ा-ताज़ा नई-नई बातें सुनते । महात्माजी के समाचार सुनकर आनन्द-लाभ करते । उन दिनों की बम्बई की वे घटनाएँ और आँखों देखा वह दृश्य और उस पर आपके कहने का ढंग । कुछ न पूछिए, दिल पर क्या गुज़री । मैं और पण्डित हरिशंकरजी बहुत देर तक पछताते रहे । हरिशंकरजी को मुझसे भी ज़्यादा मलाल रहा, वह आप से बहुत मुद्दत से नहीं मिले थे । आपका यों अचानक आना और न मिलना सपने की माया हो गई या दरिद्र के मनोरथ ! सचमुच बड़ा ही अफ़सोस रहा और रहेगा । आपने भी यह क्या किया ? न सूचना न ख़बर । एक कार्ड लिख देते तो कौन बड़ी बात थी ।

उस दिन हम उन रामायणी पण्डितजी की कथा सुनने गये थे, जिनकी कथा में आप गत वर्ष लखनऊ ले गये थे । वह बहुत दिनों से यहीं कथा कर रहे हैं । कई अभिज्ञ और पारखी नेताओं ने प्रशंसा की । गये तो देखा वही प्रशंसित पण्डितजी हैं । उसी वक़्त सोचा कि कल आपको बम्बई के पते पर उसकी सूचना दूंगा । जब तक मैं कथा में रहा, बराबर आपकी याद आती रही । कुशल समाचार लिखिये ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१४

श्री भवानीप्रसाद गुप्त को लिखा गया पत्र

१ [illegible] २

पंजाबी क्षेत्र

वं० कृ० १३, १६८२

प्रिय महोदय, नमस्ते ।

कार्ड का उत्तर कल दे चुका हूँ, आज लिफ़ाफ़ा मिला । दोहे का अर्थ स्पष्ट है । वंश और कोटि में श्लेष है । जिहि का अर्थ 'ज्या' करने की क्या जरूरत है ? जिहि—जिसका—या जिसके—(यस्य) के अर्थ में समझिए । मतलब यह है कि वह भले वंश का पुरुष है, जो बहुत धन पाकर भी झुके, इसी की पुष्टि उत्तरार्ध में धनुष के दृष्टान्त से की गई है । जिसके दो 'कोटि' (दो करोड़ और दो किनारे हैं) हैं वह संदेश का धनुष अच्छे बाँस का धनुष—झुकता है । जिहि 'जिह' का अर्थ ज्या भी सही हो सकता है पर यहाँ उसमें अर्थ-स्वारस्य नहीं प्रतीत होता । यदि जिहि का अर्थ 'ज्या' ही करना अभीष्ट हो तो यों कह सकते हैं कि 'ज्या' (चढ़ाने पर) दोनों किनारे (झुके) दिखाई देते हैं ।

एक करोड़ के दो करोड़ दीखने लगते हैं । पुरुष के पक्ष में यह अर्थ लगाना ठीक नहीं है । वहाँ तो 'बहुधन पाय' पड़ा ही है । दोहे में 'कोटि' और वंश के श्लेष का चमत्कार है, एक संस्कृत कवि ने भी इस मजमून को दूसरे ढंग पर बाँधा है, पूर्वार्ध इस समय याद नहीं आता, भाव यह है कि धनवान की तृष्णा धन-प्राप्ति से उत्तरोत्तर बढ़ती ही है । उत्तरार्ध है, पश्य कोटिद्वयोपेतं लक्षाय प्रवरं धनुः । धनुष के (प्रतीयमान पुरुष के) पास दो कोटिः (दो करोड़) हैं फिर भी लक्ष-लाख और निशाना-लक्ष्य के लिए झुका है । दो करोड़ पास हैं फिर भी लाख की तलाश में ताक लगाए, कमर झुकाए बैठा है । 'वृन्द-विनोद' किसी परीक्षा में है ? आशा है, आप सपरिवार सानन्द हैं ।

भवदीय

पद्मसीह शर्मा

पुनश्च—

भयानक भूल

लिफ़ाफ़े में पत्र बन्द करते समय भूल से आपका ही पत्र रख दिया, जब वह पोस्ट हो चुका तब इस पत्र पर दृष्टि पड़ी, इस भूल पर अफ़सोस भी हुआ, हँसी भी

आई। यदि दोनों पत्र एक साथ न पहुँचे, वह पहले पहुँचा और यह बाद को तो अपना ही पत्र अपने नाम लौटा देखकर आप क्या कहेंगे। मजाक, शोखी, गुस्ताखी, इन्सल्ट इत्यादि बहुत-से विकल्प उठ सकते हैं। डाक देवता से प्रार्थना है कि यह दोनों पत्र साथ ही पहुँचें। देखिए क्या होता है।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१५

श्री प० झाबरमल्ल शर्मा को लिखे गये पत्र

२१३

नायक नगला
पो० ग्रो० चांदपुर (बिजनौर)
श्रा० व० ३, ७७

प्रिय महोदय, प्रणाम ।

२६ जुलाई के सा० 'भारत-मित्र' में 'पुस्तकालयों को सूचना' पढ़कर में आपसे अनुरोध करता हूँ कि भारतीय प्राचीन लिपि-माला[1] की १ प्रति महाविद्यालय ज्वालापुर को प्रदान कराने की कृपा कीजिए। म० वि० एक उपयुक्त और दान-पात्र संस्था है। उसका एक पुस्तकालय भी है। में वहाँ के पुस्तकाध्यक्ष को सूचना दे रहा हूँ। यह भी इस विषय में आपसे प्रार्थना करेंगे।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२१४

कनखल
आषाढ़ वदि १८८२, शुक्रवार

श्रीमत्सु, सादर प्रणाम ।

१०,६ का कृपा-पत्र आज मिला। एतदर्थं भूरिशोधन्यवादा:।

स्वर्गीय प० गणपति शर्माजी के सम्बन्ध में 'गणपति-वियोग-विलाप' और 'स्थावर में जीव विचार शास्त्रार्थ' नामक दो ट्रैक्टों में मैंने लिखा था, उनके लिए आज घर को पत्र लिख दिया है। वहाँ से आपकी सेवा में पहुँच जायँगे। न पहुँचें तो एक हफ़्ते बाद मुझे फिर याद दिलाइये।

---

१. भारतीय प्राचीन लिपिमाला रायबहादुर महामहोपाध्याय स्व० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा महाशय रचित। इस पुस्तक का मूल्य २५) है। इन पंक्तियों के लेखक का अनुरोध स्वीकार कर इस पुस्तक की प्राय: ६० प्रतियाँ सार्वजनिक पुस्तकालयों को श्रीमान् बा० घनश्यामदासजी बिड़ला महाशय ने प्रदान करने की उदारता दिखाई थी।

श्री प० चन्द्रधरजी गुलेरी के लेखों का संग्रह जितनी जल्दी प्रकाशित हो जाय उतना ही अच्छा। मैं उनके विषय में अवश्य अपने विचार श्रद्धा-भक्ति सहित प्रकट करूँगा। पर आप लेखों का संग्रह तो कराइये। यह बहुत ज़रूरी काम है कि प० माधवप्रसादजी मिश्र और प० चन्द्रधरजी गुलेरी के लेख एकत्र किये जायँ। यह हिन्दी साहित्य की एक स्थायी सम्पत्ति है, और यही उनकी सच्ची जीवनी है। खेतड़ी नरेश स्वामी विवेकानन्द के मित्र राजा अजीतसिंहजी की जो जीवनी आपने तैयार की थी वह भी प्रकाशित हो जानी चाहिए। आजकल क्या लिख रहे हैं? हाँ, इधर वर्षा तो कुछ हो गई है, पर अभी जी ठिकाने नहीं हुआ, "जी ठिकाने हो तो सब कुछ हो सके।" विवाह की मीमांसा भी तभी होगी।

जिस पत्र का मुझे उत्तर नहीं मिला या जो आपको नहीं मिला, उसमें मैंने अपनी पुस्तक छपाने की बाबत पूछा था। इधर मैं इसी उद्देश्य से आया था। यहाँ भी एक प्रेस खुला है, पर वह ठीक नहीं निकला। सुदर्शन प्रेस को कह-सुनकर ठीक किया है, पर वहाँ काम देर में होगा और कोई इधर अच्छा प्रेस नहीं। मेरी पुस्तक का भूमिका-भाग समाप्त हो गया है उसे कहीं जल्द छपवाना चाहता हूँ, यही चिन्ता इस समय परेशान किए हुए है।

सुना है, 'कलकत्ता-समाचार' फिर कलकत्ते से निकलने वाला है। एक ही समय में विष्णु के भी दो अवतार भगवान् रामचन्द्र और परशुराम के रूप में हुए थे। यह भी कुछ ऐसी ही बात है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२१५

C/O **'आर्यमित्र'-सम्पादक, राजामंडी, आगरा**
भादों सुदि १८८२, शुक्रवार

श्री पण्डितजी महाराज, प्रणाम।

आज आपको अपने मतलब की सुनाता हूँ। तवज्जअ के कानों से सुनिए।

मैं कोई डेढ़ महीने से यहाँ अकबराबाद में यानी आगरे में अथवा 'अर्गलपुर' में हूँ, भूमिका-भाग का तृतीय संस्करण छपा रहा हूँ। पुस्तक छप चुकी है। सिर्फ़ विषय-सूची के दो फ़ार्म बाकी हैं। इस बार नज़रसानी में दो फ़ार्म के करीब मैटर बढ़ गया है। प्रकाशित होने पर भेजूंगा ही। आप देखकर इन्शा-अल्लाह खुश होंगे।

कुछ मित्रों का अनुरोध है कि इस पुस्तक के अन्त में कुछ प्रसिद्ध विद्वानों की सम्मतियाँ और समालोचनाओं का सारांश अवश्य दिया जाय। इसलिए आपसे

दरखास्त है कि श्री ओझाजी, हाँ, श्री ओझाजी महाराज से "संक्षिप्त सारार्थ विलास-गमाँ शुभा सम्मति मादाय" शीघ्र भेजिये । श्री ओझाजी महाराज की शुभ सम्मति से पुस्तक को चार चाँद लग जायँगे । 'ऐतिहासिकता' प्राप्त हो जायगी ।

आशा है, आप यह काम सौ काम छोड़कर भी मित्रानुग्रह-कांक्षया अवश्य करा देंगे । ऐसी दृढ़ आशा है । एक बात ।

कल नागरी-प्रचारिणी-पत्रिका के नये अंक में श्री ओझाजी महराज के इतिहास की समालोचना पढ़ी, उसी वक़्त से पुस्तक के पढ़ने के लिए बेताब हूँ । किसी विज्ञापन या सूचना में कुछ दिन पहले पढ़ा था कि इस इतिहास के पृथक् खण्ड नहीं बिकेंगे । पूरी सीरीज़ का ही ग्राहक होना होगा । मैं आजकल 'अर्थ-संकट' में हूँ । बजट में गुंजाइश नहीं है । सतसई छपाने का ख़र्च और सिर पर आ पड़ा । प्रेस का बिल चुकाने की चिन्ता है । अकबर ने इस मतलब को अपने एक शेर में बड़ी ख़ूबी से ज़ाहिर किया है । पूरा शेर इस वक़्त याद नहीं आता । पहले मिसरे के शुरू में कहा है कि कलामे अकबर पढ़ा जा रहा था । वाह, वाह के दाद का दौंगड़ा बरस रहा था । ऐन इसी वक़्त 'कुल्लियाते अकबर' की छपाई का बिल मतबे से आ गया । शायकीने कलाम समझे कि कलामे अक़बर के कुछ सुना दीजिए । इस मौक़े का समां अकबर ने एक शेर में बाँधा है । पूरा याद नहीं है, अधूरा लिखता हूँ ।

'शोरे-तहसीं बज़्म में उठ्ठा—
मगर सब हो गये ख़ामोश जब मतबे का बिल आया ।

हाँ, तो मैं कह रहा था कि प्रेस का बिल चुकाना है । इसलिए सरेदस्त इतिहास-माला का ग्राहक हो नहीं सकता और पुस्तक पढ़ने का लोभ भी संवरण नहीं हो सकता । सो इस समस्या को आप सुलझाइए । जैसे बने इतिहास की एक कापी भिजवाइये ज़रूर । यह हुई दूसरी बात । हाँ, बा० हीरालाल साहब कौन सज्जन हैं । जिन्होंने समालोचना पर एक और लेख ना० प्र० प० की इस संख्या में लिखा है । आदमी मज़ेदार मालूम होते हैं ।

अपना कुशल समाचार लिखिए । मैं अभी १०-१५ दिन पुस्तक प्रकाशित होने तक यहाँ हूँ । हाँ, एक ज़रूरी बात तो रही जाती है, श्रीवृन्दावन में होने वाले हि० सा० स० के प्रधान-पद पर ओझाजी महाराज को प्रतिष्ठित करना चाहते हैं । क्या यह सम्भव है ? यानी वह लोकानुग्रह-कांक्षया स्वीकार करने की कृपा कर सकेंगे ? कोई कहता था कि वह कारण विशेष से स्वीकार करने में असमर्थ हैं । ऐसा अनिवार्य कारण कौन-सा हो सकता है, जो इस पद की स्वीकृति में बाधक है ?

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२१६

नायक नगला
पो० ओ० चांदपुर (बिजनौर)
का० सु० ३, १८८२

श्रीमत्सु, सादर प्रणाम निवेदयति ।

मैं परसों सायंकाल घर पहुँच गया । उस दिन दिवाली की सन्ध्या को, इधर आँधी-मेह का तूफ़ान खूब आया । रोशनी कहीं न हो सकी । विधि का दौरात्म्य ।

विशेषाङ्क आपका 'घणा चोखा' निकला । लेख मार्के के हैं । विस्तृत सम्मति पीछे भेजूंगा । वह चिट्ठी भी । अभी तबीयत ठीक नहीं हुई है ।

'स्वतन्त्र' यहाँ नहीं आता, नहीं मालूम वह लेख छपा या नहीं ? छपा हो और आप उसे उद्धृत करें तो उस लेख को पहले मैं देख लूँ । तब आप उद्धृत करें । पूरा उद्धृत करें । और अशुद्धियों का परिमार्जन करके स्वतन्त्र में छपा होगा तो अवश्य अशुद्ध होगा । उस दिन जल्दी में श्री व्याख्यान-वाचस्पतिजी के दर्शन न कर सका । इस अपराध के लिए मेरी ओर से प्रणाम निवेदन पुरःसर क्षमा माँग दीजिए । श्री प० बाबूरामजी तथा श्री अजितजी को प्रणाम ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२१७

C/O बेताब प्रिंटिंग प्रेस
चाह रहट, दिल्ली
पौष सुदि ४, '७८, शनिवार

प्रिय पण्डितजी, प्रणाम ।

मैं इस बीच में एक आत्मीय की बीमारी का समाचार पाकर मकान चला गया था । १२ दिन बाद अभी परसों लौटा हूँ । आकर आपका कृपा-पत्र पाया । ब्लाक भी मिल गया । इस कृपा के लिए अनेक धन्यवाद । ब्लाक बहुत अच्छा बना है । ब्लाक मेकर से ब्लाक का 'वुड कट' लेकर भी भिजवाइये और ब्लाक का बिल भी । आशा है, कि अब तक आप देश से कलकत्ते लौट गये होंगे । मैं यहाँ होता तो उस दिन स्टेशन पर आपके दर्शन अवश्य करता । मैं १२ दिन तक अनुपस्थित रहा । इसलिए छपाई का काम बन्द रहा और पुस्तक गया-अधिवेशन तक प्रकाशित न हो सकी ।

यह मौक़ा निकल गया। ख़ैर, समालोचना पढ़ी। इस कृपा के लिए अत्यन्त अनुगृहीत एवं आभारी हूँ।

कृपा-दृष्टि रखिये। वैद्यजी वहाँ हों तो उनसे प्रणाम कहिये।

आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२१८

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चाँदपुर (बिजनौर)
मिति फाल्गुन सुदि ८, १९८२

श्रीमत्सत्रपावनतेन मूर्ध्ना भूयो भूयः प्रणम्य निवेदयति।

क्षमा कीजिये, महाराज, क्षमा, आपकी आज्ञा का पालन नहीं हो सका। जैसा कि मैंने पहले पत्र में सूचना दी थी, मैं १८ ता० को दिल्ली आने वाला था। विचार था वहीं सामने विषय को लक्ष्य करके कुछ लिखूंगा, तो मजेदार होगा। पर अचानक ऐन वक़्त पर प्रोग्राम बदल गया। मैं आता-आता रह गया। आप मुझ पर झुंझला रहे होंगे कि कमबख़्त ने अच्छा चकमा दिया। दुर्दैव बड़े-बड़ों के मनोरथ मिट्टी में मिला देता है। यह उसी की लीला है कि उस लेख की जगह यह पत्र लिख रहा हूँ। धन्यवाद पाने के स्थान में क्षमा चाह रहा हूँ। अब क्षमा कीजिये या धिक्कार दीजिये। यह आपका अधिकार है।

आपका वही
जो आज्ञा का पालन नहीं कर सका।

२१९

नायक नगला
चाँदपुर (बिजनौर)
फाल्गुन वदि २, ८३

प्रिय पण्डितजी महाराज, प्रणाम।

कृपा-पत्र मिला। अत्यन्त अनुगृहीत हुआ। कई महीने हुए मैं दिल्ली गया था, दर्शनार्थ दरे-दौलत पर हाज़िर हुआ था, आप कहीं बाहर गये हुए थे। हाज़िरी देकर लौट आया।

देखिये, आपके दर्शन कब होते हैं, और कहाँ होते हैं। भरतपुर-सम्मेलन में

पधारने की सम्भावना तो बहुत कम है। भरतपुर का सम्मेलन क्या एक साका होगा। बड़े आदमियों की एक बहुत बड़ी प्रदर्शनी होगी।

सम्पादक-सम्मेलन के प्रधान-पद पर वाजपेयीजी का बैठाया जाना सर्वथा समुचित होगा। यही होना चाहिए। आपके इस शुभ विचार से मैं सहमत हूँ। यद्यपि रावजी की घोषणानुसार मैं सम्पादक-सम्मेलन का एक 'बाग़ी' व्यक्ति हूँ। इसलिए इस सम्बन्ध में सम्मति देने का कोई अधिकार नहीं रखता। सम्मति प्रकट करनी पड़ी।

मेरा विचार इसी बीच में कुछ-कुछ दिल्ली आने का भी हो रहा है, आया और आप वहाँ हुए तो दर्शन करूँगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

१६

श्री भवानीचरणराय को लिखा गया पत्र

२२०

हिन्दी प्रेस, प्रयाग

प्रियवर, स्वस्ति ।

आपका २३-१० का पत्र यथासमय मिल गया था । उत्तर में विलम्ब इसलिए हुआ कि सम्मेलन-कार्यालय में चिट्ठियों के लिए बराबर प्रयत्न करना पड़ा फिर भी काम न बना, कोई पत्र भी वहाँ से उपलब्ध न हो सका । पुरानी चिट्ठी की कोई फाइल न मिल सकी । हाँ, एक लाभ इस खोज में यह हुआ कि विद्यापति विषयक निबन्ध की हस्तलिखित प्रति हाथ आ गई । उसे भेजता हूँ, साथ ही सम्मेलन से प्रकाशित पुस्तिका भी। 'मनोरमा' में प्रकाशित उस लेख की मूल कापी भी 'मनोरमा' के वर्त्तमान सम्पादक से प्राप्त करके भेज रहा हूँ । इस लेख की प्रकाशित (मुद्रित) कटिंग मिल सकेगी तो चेष्टा करूँगा । वर्माजी ने अपने लेख में 'माधुरी' में प्रकाशित जिस लेख का उल्लेख किया है, उसका मुझे इस समय स्मरण नहीं है, यथासमय मालूम करके सूचना दूंगा। पद्यकल्पतरु के आरम्भ में जिन हिन्दी निबन्धों का उल्लेख है उनके अतिरिक्त और कोई निबन्ध मुझे याद नहीं आ रहा है । शायद इतने ही हिन्दी 'निबन्ध' उन्होंने लिखे थे । 'माधुरी' वाले निबन्ध के सम्बन्ध में मालूम करूँगा । श्री भुवनेश्वरसिंहजी को पत्रों के लिए आप एक पत्र लिखिए, उसका कुछ उत्तर न मिले तो मुझे सूचना दीजिए । मैं लिखूंगा । इसी प्रकार 'वीणा'-सम्पादक को भी लिखिए । पैकट की पहुँच लिखिए ।

मैं अब स्वस्थ हूँ । आशा है, आप सपरिवार सानन्द हैं ।

पुनश्च :

आपने स्वर्गीय रायजी के विषय में कुछ अंग्रेज़ी-बंगला पत्रों की कटिंग्स भेजी थीं । वह वापस भेजता हूँ । आपको शायद कभी इनकी ज़रूरत पड़े ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१७

आचार्य श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी को लिखा गया पत्र

२२१

पूज्य द्विवेदीजी महाराज, प्रणमामि ।

कृपा-पत्र मिला, अनुगृहीत किया । स्वास्थ्य-भंग के समाचार से चिन्ता हुई, जाने दीजिए, समालोचना ऐसी आवश्यक नहीं है । यही क्या कम है कि आप इस निर्बलता और अस्वस्थ दशा में भी पढ़ने का कष्ट उठा रहे हैं । यही उन निबन्धों के परम सौभाग्य और उपादेयता का प्रमाण है ।

'विबुधामन्त्रणम्' बेशक उतना रोचक या समाज की दशा के अनुकूल तो नहीं है, पर प्राचीनता-प्रेमी और वर्णाश्रमधर्माभिमानी लोगों के मत का अच्छा निदर्शन है । ज़ोरदार अपील है । उसमें बाण की शैली का सफल अनुकरण है । मुझे तो वह बहुत पसन्द है । वर्णाश्रमधर्मसंघ तो आज भी उन बातों का समर्थन और प्रचार कर रहा है जो विबुधामन्त्रणम् में कही गई हैं । शास्त्रीजी सनातनधर्मी तो थे ही इसलिए वे उनके धार्मिक विचार हैं । प्राप्त पत्रम् भी पठनीय है । स्त्रियों की अच्छी वकालत है । उद्भिज परिषत् में दार्शनिक तत्व का विवेचन बड़ा सरस और सरल है । महारण्य पर्यवेक्षणम् तो बंकिम के लोकरहस्य से भी बहुत बढ़ा-चढ़ा है । इन बाक़ी निबन्धों को भी शनैः शनैः देख डालिये । कुछ न कुछ मनोरंजन होगा ही ।

आपकी इतनी क्षीणता 'सरस्वती' की सेवा के परिश्रम का फल है । आजकल के सम्पादकों के सम्पादन से जब आपके सम्पादन की तुलना करता हूँ तो अन्तरम् महदन्तरम् प्रतीत होता है । एक बार आपने स्वामी सत्यदेव के प्रसंग में कहा था कि कच्चा माल माँगकर उसे व्यवहारोपयुक्त बनाना पड़ता है । बात बिल्कुल ठीक थी । आजकल तो हिन्दी के अनेक सम्पादक कच्चे माल में भी कूड़ा-करकट मिलाकर उसे भद्दा बना देते हैं । शब्द-शुद्धि की ओर तो ध्यान नहीं देते, या ज्ञान ही नहीं रखते ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१८

राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण गुप्त को लिखा गया पत्र

२२२

महाविद्यालय, ज्वालापुर

२७-५-१२

श्रीयुत सुहृद्वर, नमस्ते।

मैं परसों वापस आया हूँ। 'सतसई' की टीका मिली। इसे देखकर तो मुझे भी ज्वर चढ़ता है।

समालोचना आपकी मार्के की निकली है। कोई उसके विरुद्ध लिखे तो देखा जायगा। कुशल समाचार लिखते रहिये

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

१६

श्री प० भीमसेन शर्मा को लिखे गये पत्र

२२३

महाविद्यालय, ज्वालापुर
७-१२-१२

नमो ब्रह्मणे।

मैं कल यहाँ आया हूँ। एक कार्ड सूचना का कल ही भेज चुका हूँ। आज नायक नगले से लौटे हुए दो पैकिट पहुँचे। २-३ फ़ार्म और शास्त्रार्थ, इस दशा में शुद्धि-पत्र तो छापना ही पड़ेगा। अस्तु, जैसा छप रहा है, ग़नीमत है। कुल शास्त्रार्थ के कै फ़ार्म होंगे। किस तारीख तक शास्त्रार्थ समाप्त हो जायगा।

कविता के लिए कल फिर सख्त तकाज़ा भेजा है शायद आ जाय।

जीवनी भी लिखने की कोशिश करूँगा। क्या कहूँ, घर इसी ख़याल से गया था कि ४-५ दिन एकान्त में निश्चिन्तता से बैठकर लिख डालूँगा। पर, वहाँ एक तो बैठना कम मिला, इधर-उधर फिरना पड़ा और इसी बीच में रायसाहब रामावतार के बारे में लम्बा-चौड़ा जवाब तलब कर बैठे, जिसके लिए मुझे लम्बी-चौड़ी अपोलोजी लिखनी पड़ी। "कभी फुर्सत में सुन लेना, बड़ी है दास्तां मेरी", इसलिए कुछ न हो सका। देखिए, अब कोशिश करूँगा। हो गया तो अहोभाग्य, नहीं चित्रमय जगत् के लिए जो लिखी थी उसे ही बढ़ाकर भेजूंगा, और भी पत्र के लिए कुछ फ़ुटकर लेख भेजूंगा।

मेरा इरादा पक्का दुगड्डे आने का था परन्तु साथ में असबाब बहुत हो गया था, इस झंझट से सीधा यहीं आना पड़ा। नहीं तो सब कुछ ठीक हो जाता। यह जगह अब शान्तिदायक नहीं रही। चित्त नहीं लगता। आपके स्वच्छन्द निवास के लिए एक बड़ी अच्छी एकान्त और सुन्दर जगह ठीक कर आया हूँ, जंगल भी है, नदी भी है। बनी-बनाई रोटी मिलने का प्रबन्ध भी है। रसपान और गन्ने चूसने का भी मज़ा है। आप निबटकर आजायँ तो चलें, आपकी पसन्द हो तो वहाँ कुटीर निर्माण करा दिया जायगा। बैठे-बैठे लेटे-लेटे वेदान्त विचारते रहा करना। मैं भी कभी-कभी आ जाया करूँगा। हो सका तो सतसई वहीं बैठकर लिख डालेंगे। अस्तु।

आपके पास कपड़ा तो थोड़ा नहीं है। आप दुलाई क्यों नहीं ले गये? सर्दी का ख़याल प्रेस की अशुद्धियों से अधिक रखियेगा। वी० पी० कहाँ से होगी, यह पीछे

निश्चय करके लिखूंगा। हाँ, बा० मैथिलीशरणजी शिकायत करते हैं और सिफ़ारिश चाहते हैं कि दुगड्डे से उनके पत्रों का उत्तर तक नहीं दिया जाता। नैथाणीजी से कह दीजिए कि ऐसे भले आदमी को दिक़ करना ठीक नहीं। श्री स्वामी ब्लाकटानन्दजी का प्रेस यहाँ न आया तो प्रेस का और 'भारतोदय' दोनों का ख़ात्मा समझिये। क्या हाल है ?

भवदीय
पदमसिंह, शर्मा

२२३

महाविद्यालय, ज्वालापुर
८-१२-२२

नमोब्रह्मणे, त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि, त्वामेव ब्रह्म वदिष्यामि।

सो महाराज ! इस प्रकार आप अपनी स्तुति सुनकर प्रसन्न हूजिए, खिन्न न हूजिए।

आपका कृपा-पत्र चौथे फ़ार्म के साथ अभी मिला, पढ़कर दुःख हुआ। मुझे कल से जुकाम और बुखार भी है। रात-भर नींद नहीं आई, "नाक से बहता है मेरी दोस्ते मन दरयाए गंग, सिर मेरा क्या आज यह कैलास पर्वत हो गया।" इसलिए आज अधिक नहीं लिख सकता। लाला द्वारकादासजी वास्तव में महापुरुष थे। उनकी मृत्यु से आर्यजाति को एक सख़्त धक्का लगा है। आर्य-गज़ट भेजता हूँ। लाला लाजपतराय ने उनके विषय में जो कुछ लिखा और कहा है, इसका दर्दभरी इबारत में तर्जुमा कर लीजिए। 'भारतोदय' में निकल जायगा, अवश्य निकलना चाहिए। एक नोट मैं भी इस विषय में लिखकर भेज दूँगा जो लाला लाजपतराय के लेख के ऊपर रहेगा। अब की बार घर के काग़ज़ों में पुराने प्रचारक का एक पर्चा मिला है जिसमें श्री प० गणपतिजी का एक शास्त्रार्थ झालरापाटन दर्ज है। पण्डितजी इसका ज़िक्र प्रायः किया करते थे, इसका अनुवाद भी कर लीजिए। काम आवेगा, इसी में दे देंगे या जीवनी में। इसी पर्चे में काँगड़ी के उत्सव के हाल में जो पण्डितजी के व्याख्यानों पर लिखा गया है, उसे भी उद्धृत कर लीजिए। प्रचारक का यह पर्चा सुरक्षित रखिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२२५

नायक नगला,
पो० ऑ० चाँदपुर, (बिजनौर)
फाल्गुन कृष्ण १४, १८८४

श्री १०८ मन्तः स्वामिपादाः साष्टांगपातं प्रणम्यते।

महाराज, क्षमा कीजिए, मैं उत्सव पर नहीं पहुँच सका। इस समय कई विघ्न ऐसे ही आ पड़े जिनका उल्लेख व्यर्थ ही लेख को बढ़ा देगा, आशा है, उत्सव सफलता से समाप्त हो गया है।

एक प्रार्थना है, प० बनारसीदासजी चतुर्वेदी कलकत्ते से 'विशाल भारत' पत्र निकाल रहे हैं। उसके लिए वह एक लेख महाविद्यालय पर मुझसे माँग रहे है। मैं भी लिखना चाहता हूँ। मैं अपने ढंग पर लिखना चाहता हूँ, उसमें बाबू सीताराम, स्वा० दर्शनानन्द, आप यानी श्री मुख्याध्यापकजी, श्री गुरुजी गणपतिजी इत्यादि का वृत्तान्त होगा। विदेहजी आप अपने समय की घटनाओं का संक्षेप में उल्लेख कर दीजिए क्योंकि सबसे पहले आप ही ने काम सँभाला था। जब आप पहुँचे क्या दशा थी, कितने छात्र थे। आपने एकाकी कितने दिनों काम किया था। उस समय संस्था रजिस्टर्ड थी या नहीं। तब संवत् क्या था आपके समय में मुख्य उल्लेख्य घटनाएँ क्या हुई फिर आचार्यजी, रावजी और संपादकजी कब पहुँचे। इत्यादि और जो बातें आपको महाविद्यालय के सम्बन्ध में याद आवें, लिखिए। गुरुकुल सिकन्दराबाद किस संवत् में खुला था, यह भी लिखिए। इसका ज़िक्र भी स्वा० दर्शनानन्द के कारनामों में आवेगा। अपनी जीवनी के सम्बन्ध में भी कुछ नोट लिखा दीजिए। उपाध्यायजी लिख देंगे, यह सब जल्दी ही भिजवा दीजिए। लेख शीघ्र ही भेजना है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२०

श्री मास्टर रामस्वरूप गर्ग को लिखा गया पत्र

२२६

c/o **आर्यमित्र, आगरा**
२१-६-१६२५

प्रियवर मास्टरजी, नमस्ते।

आपके दोनों कार्ड मिले, एक आज और एक परसों-परले रोज़। आपकी इस तवील अलालत का हाल मालूम करके मुझे अफ़सोस और तअज्जुब है। आप-सा मोहृतात मेहनती, वर्जिशी और तक़रीरपसन्द हट्टा-कट्टा हेडमास्टर इस तरह बुखार की ज़द में कैसे आया। पढ़ने से जी चुरानेवाले शरीर लड़कों की बद्दुआ का असर तो नहीं। फिर यह इतने लंघन आपने किसके मशवरे से कर डाले। अगर लंधन करने थे तो फिर डाक्टर का एहसान लेने की क्या ज़रूरत थी। आठ रोज़ तक आपने मुँह में एक दाना भी नहीं दिया तो भी बुख़ार ने नहीं छोड़ा। आख़िर इसकी वजह क्या है? क्या फ़सली बुख़ार का इस क़दर ज़ोर है।

'तुलसी के पत्ते', 'दारचीनी', 'सोंठ', 'स्याह मिरच' और अगर आपका ज़ाहृदे खुश्क इजाज़त दे तो क़दरे चाय की चाय पीजिए और पिलाइये उन सबको जिन्हें बुख़ार आता हो या आने का अन्देशा हो। मलेरिया नहीं होगा यह मुजर्रब नुस्ख़ा है। मैं वहाँ होता तो जब्रन आपको पिलाता और दो रोज़ में चंगा कर देता। उम्मीद है आप अब अच्छे हो जायेंगे और इसके ज़वाब में पढ़ूंगा आप बिल्कुल दुरुस्त हैं···।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२१

श्री वैद्य रामचन्द्र शर्मा को लिखा गया पत्र

२२७

महाविद्यालय, ज्वालापुर

७-१०-२८

प्रिय वैद्यजी, नमस्ते ।

आशा है, आप भले-चंगे हैं । मैं छुट्टियों में यहीं बैठ गया था । अभी मकान नहीं पहुँचा । अब दो-तीन दिन में जा रहा हूँ । यहाँ बैठकर मैंने दो-एक लेख लिखे हैं । एक छप गया है, जो भेजता हूँ । दिल थामकर पढ़ लीजिए और संसार की कृतघ्नता पर आँसू बहाइए । खुदपरस्त मक्कारों पर लानत भेजिए । यह संस्मरण मैंने बड़े दर्द से मजबूर होकर लिखे हैं । और शायद कुछ और भी इस पर लिखना पड़े ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

२२

श्री श्यामसुन्दरजी खत्री को लिखा गया पत्र

२२८

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चाँदपुर (बिजनौर)
२५-३-१९३०

प्रियवर श्यामसुन्दरजी, सप्रेम प्रणाम।

आपका १९-३ का कृपा-पत्र आया, समाचार जानकर प्रसन्नता हुई। भई बात यह है 'बिस्मिल हो या सय्याद', सच बात किसी को नहीं सुहाती। सब तारीफ़ सुनना चाहते हैं। मैंने बहुत टाला पर वह न माने। मैं आखिर और करता क्या। जो बात थी लिख दी। बँधी गत मुझे बजानी नहीं आती। आजकल समालोचना और भूमिका की एक ढंग की बँधी हुई इबारत मुकर्रिर हो गई है। समालोचक और भूमिका-लेखक उसी की नक़ल-सी कर देते हैं। खैर, जो हो बिस्मिलजी इससे खुश न हुए। एक लंबा पत्र लिखकर अपनी सफ़ाई पेश की, कुछ तरमीम चाही। मैंने लिख दिया अब यह नहीं हो सकता। या तो ज्यों का त्यों जाने दो या बिल्कुल ही जाने दो।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२३

प० मदनमोहनलालजी दीक्षित को लिखा गया पत्र

हिन्दी प्रेस, प्रयाग
३-११-३१

प्रिय दीक्षितजी, प्रणाम।

प० रघुनन्दनजी के कार्ड पर आपकी पंक्तियाँ पढ़ीं। सचमुच वे दो दिन बड़ी मौज में गुज़रे। जीवन में ऐसा समय कभी-कभी आता है जो कुछ सुखद स्मृति छोड़ जाता है। मैं इस बीच में कालाकांकर कवि-सम्मेलन में चला गया था। वहाँ भी ख़ूब काव्य-चर्चा रही। वहाँ से कानपुर के कविवर हितैषी साथ आ गये थे। कई दिन साथ रहकर अभी कल गये हैं।

प्राचीन पांचाल प्रदेश देखने की मेरी इच्छा बहुत दिनों से है। कभी आऊँगा। श्रीमान् दुबेजी से प्रणाम कहिये। 'पद्म-पराग' पढ़कर लिखिए कैसा है, मैं अभी कुछ दिन यहीं हूँ। एकेडेमी का लेक्चर अब जनवरी में होगा। उसे लिखकर पूरा करना है। और सब कुशल है। रघुनन्दनजी सपरिवार सानन्द हैं। आपके पत्र का उत्तर उन्होंने दे दिया है। आशा है, आप सकुशल हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२४

श्री प्रो० रामदास गौड़ को लिखे गये पत्र

२३०

महाविद्यालय, ज्वालापुर
श्रावण सुदि ८, ८२

मातृभाषा सुभक्ताय ज्ञान-विज्ञानशालिने । गौडेन्द्राय नमस्तुभ्यं चरखा, चक्र धारिणे ।

कृपा-पत्र पाकर प्रसन्नता हुई और चिन्ता मिटी । गरमी का दौरा इस वर्ष सचमुच पराकाष्ठा को पहुँच गया था—फिर आगरे का तो कहना ही क्या है ।

अयोध्या से निकलने वाला मानस-पीयूष मैंने नहीं देखा । उसमें कुछ आपने देना शुरू कर दिया है या लमगोड़ाजी ने ? इसमें सन्देह नहीं कि श्री लमगोड़ाजी रामायण के विशेषज्ञ हैं । आगरे में रामायण पर उनके भाषण सुनने का मुझे भी सौभाग्य प्राप्त हुआ है । पर वह भाष्य स्वयं नहीं लिख सकते । सुना है वह उर्दू में या अंग्रेज़ी में लिखते हैं, उसका अनुवाद दूसरे सज्जन करते हैं. ऐसा श्री प्रेमचन्दजी कहते थे । राम जाने कहाँ तक ठीक है । रामायण का भाष्य तो आप ही कर सकते हैं । नाटक के सम्बन्ध में भरत मुनि का नाट्यशास्त्र और धनञ्जय का दशरूपक ये दो ग्रन्थ संस्कृत में हैं । पहले का मूल्य तीन रुपये और दूसरे का चौदह आने है । निर्णय सागर प्रेस, बम्बई में छपे हैं । हिन्दी में हरिश्चन्द्रजी का नाटक आपके पास है ही । साहित्यालोचन में रायसाहब बाबू श्यामसुन्दरजी ने भी इधर-उधर से लेकर कुछ लिखा है । सो आपने देखा ही होगा । अंग्रेज़ी में इस विषय पर कोई उत्तम ग्रन्थ अवश्य होगा । जिसका पता आपको होगा ही ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२३१

महाविद्यालय, ज्वालापुर
ज्येष्ठ सुदि ३, १९८४

श्री गौडेन्द्राय नमः ।

मैं अभी यहीं हूँ । चैत्र के आरम्भ से । आपका १३-२-८४ का कृपा-कार्ड घर से लौटकर आज ही यहाँ मिला । मैं आपको पत्र लिखने का कई दिन से विचार कर रहा था । एक पत्र शायद यहाँ आकर भेजा भी था । नाटक घर पर रखा है । मैं

आज ही चि० रामनाथ को लिखता हूँ वह वहाँ से आपकी सेवा में रजिस्टर्ड पार्सल से पत्र पहुँचते ही भेज देगा। नाटक की सुध आपको आ गई। यह जानकर हर्ष हुआ। आप उस पर जो कुछ लिखेंगे मैं समझता हूँ, मुझ से तो अच्छा ही लिखेंगे और उसे देखकर मुझे कहना पड़ेगा कि 'मैंने यह जाना कि गोया यह भी मेरे दिल में था'। समालोचकों की कुछ न पूछिए। आपका और मेरा तो ज़िक्र ही क्या, वह तो नाट्याचार्य भरत मुनि को भी बख्शने वाले नहीं।

आजकल और क्या लिख-पढ़ रहे हैं? जबलपुर के एक सज्जन हैं (या थे)। शायद विनायक मिश्र नाम था। जिन्होंने रामचरितमानस पर टीका की है, जिसे आप सराहते थे, उन्होंने अलंकार पर एक छोटी-सी पोथी लिखी थी, जिसका नाम भूल गया हूँ। आपको याद हो तो लिखिए उसका नाम और मिलने का पता भी। हाँ, छायावाद के अन्धकार पर आपकी शुभ सम्मति क्या प्रकाश डालती है, यह देखना चाहता हूँ। छायावाद का दौरात्म्य प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। मई की 'सरस्वती' में भी श्री द्विवेदीजी ने सुकवि किंकर के छायावाद पर लेख लिखा है। आपने देखा होगा, न देखा हो तो देखिए। बहुत दिनों से आपका कोई लेख पढ़ने को नहीं मिला।

सञ्जीवन भाष्य की ओर जो आपने मार्मिक शब्दों में ध्यान दिलाया है, इसने मुझे थोड़ी देर के लिए इस समय विचित्र दशा में पहुँचा दिया है। अफ़सोस होता है कि कुछ न हुआ।

"ए बसा आरज़ू कि खाक शुदः।"

अपनी हालत को देखकर हिम्मत छूट रही है। मीर का यह शेर हस्बहाल मालूम होता है—

"है सुबह का-सा अरसा पीरी का इसमें क्या है?
अब वक़्त ही है कितना? फ़ुरसत कहाँ रही है।"

फिर भी जब तक साँस तब तक आस। वहाँ तो आजकल खूब गरमी होगी। आगरे की गरमी का वर्णन हरिशंकरजी ने एक कवित्त में किया है सुनने लायक है—

"घरतें निकसिबे कों चाहत न चित्त नेंक,
घोर घाम तप्त धाम सम सरसत है।
लूअन को लोय तेज तीर-सी लगत तीखी,
जम की बहिन-सी लुपेरी बरसत है।

नारी-नर, पंछी-पसु, पेड़न की कौन कहे,
ठौर-ठौर ठंडक के ताईं तरसत है।
छत्तन पै, पत्तन, पै, हट्टन पै, अट्टन पै,
आजकल आगरे में आग बरसत है॥"

मैं अभी दस-बीस दिन यहीं हूँ। पत्रोत्तर देने की कृपा कीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२५
प० नन्दकुमारजी को लिखे गये पत्र

२३२

नायक नगला, चाँदपुर
(बिजनौर)
फाल्गुन सुदि १०, १९८१

प्रिय शर्माजी, नमस्ते ।

मैं जन्म-शताब्दी पर मथुरा की 'हज' को चला गया था । अभी दो-एक दिन हुए लौटा हूँ । वहाँ आप बहुत याद आये । प० बनारसीदास चतुर्वेदी भी आये थे । पूछते थे, प० रुद्रदत्तजी के लेखों का संग्रह जैसे बने जल्द करा डालिये, बंगवासी-सम्पादक प० रामदत्त रायजी से आप भी कहिए मैं भी उन्हें लिखूंगा । प० जी का फोटो चौबेजी के पास है । उन्हें कहीं से मिल गया है, और भी उनके पास कुछ सामग्री है, लेख-संग्रह का काम आपके सिर है और यही सबसे महत्त्व का काम है । किसी चतुर क्लर्क को नियुक्त कर दीजिए । दाम दिला दिये जायँगे । 'पद्म-पराग' छपे तो आपकी आज्ञा का पालन किया जायगा । श्री लाला लाजपतरायजी को लिखकर उनसे अपनी उन पुस्तकों के बारे में सम्मति मँगाइये । कम से कम उनकी जीवनी के सम्बन्ध में ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२३३

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चाँदपुर, (बिजनौर)
मिति फाल्गुन कृष्ण ४, १९८२

प्रिय पण्डितजी, प्रणाम ।

माघ कृष्ण १३ का कृपा-कार्ड मिला । इस बीच में मैं १५ दिन प्रवास में रह अभी लौटा हूँ । आकर आपका पत्र पढ़ा । उत्तर में इसीलिए विलम्ब हुआ ।

प० जनार्दन भट्टजी का पता चल गया । बम्बई से उनका पत्र आगया । बात मालूम हो गई । हाँ, यह जाड़े तो गये और कुछ न हो सका । 'अब के भी दिन बहार के यों ही निकल गये ।' दिसम्बर की 'माधुरी' भी देखी और जनवरी की भी । अब तो इसी पर अमल है—'देख जो कुछ सामने आ जाय मुंह से कुछ न बोल' ।

काँगड़ी के प० ब्रह्मानन्द जी तो अब स्वामी ब्रह्मानन्द परिव्राजकाचार्य हैं। शताब्दी पर स्वामी श्रद्धानन्दजी से दीक्षा ली थी, पता नहीं कहाँ हैं, प० रुद्रदत्तजी के सम्बन्ध में उनसे मालूम तो बहुत कुछ हो सकता है। आपकी यह सूचना याद कर लूँगा। कहीं पता चल गया तो पूछूँगा। क्या वहाँ पता नहीं चल सकता, कि 'भारत-मित्र' 'बंगवासी' में वह कब थे। आप पूरा प्रयत्न करें तो मालूम हो सकता है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२३४

नायक नगला, चांदपुर (बिजनौर)
चैत्र सुदि ८, १९८२

प्रिय पण्डित नन्दकुमार देव शर्मा, नमस्ते।

चैत्र सुदि २ का कृपा-कार्ड कल मिला। मैं समझता था कि मेरा पहला कार्ड नहीं पहुँचा। भई, जैसे हो प० रुद्रदत्तजी के लेखों का संग्रह ज़रूर कर डालिए। मैंने प० रामदत्तराय जी (हि० ब० सम्पादक) को भी इस विषय में लिखा है। आशा है, उनसे भी आपको सहायता मिल सकेगी। प० रामजीलाल शर्माजी को भी मैंने लिखा था कि आपसे निवेदन करें। शायद उन्होंने कहा भी हो। हाँ, होली का हिन्दू संसार आपने देखा था? उसमें एक अद्भुत 'संन्यासि गीता', किसी की थी। आप उन संन्यासी को जानते हैं? कोई वास्तव में ऐसे व्यक्ति हैं। या वह लेखक की निरी कल्पना ही है? आप एक ऐतिहासिक पुरुष हैं। इतिहास-मूर्ति हैं। इससे शायद आपको कुछ पता हो उन अद्भुत संन्यासीजी का। आखिर आपने हिन्दु-सभा कलकत्ते में कर ही डाली। लालाजी से अपनी उन पुस्तकों पर सम्मति ज़रूर लीजिए। अलवर-नरेश को मैं पुस्तक नहीं भेज सका, उनकी उपाधियाँ याद नहीं। निरुपाधि नाम कहीं मान-हानि का कारण न बन जाय। जैसा कहिये करूँ, आजकल तो आप महासभा के कार्य में व्यस्त होंगे। मैं ४-५ दिन बाद हरद्वार जा रहा हूँ। वहाँ भी ईस्टर में कई उत्सव हैं। अबकी गर्मियों में हरद्वार आइये। आशा है, आप सपरिवार सानन्द हैं। भाई साहब का नमस्कार, बच्चों को आशीर्वाद।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२३५

शंकर-सदन, हरदुआगंज
विजयादशमी, रविवार, १९८२

प्रिय पण्डितजी, नमस्ते।

आगरे से भेजा हुआ पत्र मिला होगा। मैं और हरिशंकरजी कल सकुशल

यहाँ पहुंच गये, आप सानन्द आ सकते हैं। कोई विघ्न-बाधा नहीं।

"मुसाफ़िर रोज़ आते हैं ये रस्ता रोज़ चलता है।"

तार देने का विचार था पर आज रविवार है। खुदा के आराम करने का दिन। कल ८-१० बजे तक यह कार्ड आपको मिल जायगा। ऐसी सम्भावना है, १० बजे या दो बजे की गाड़ी से चलकर आप कल ही दिन में यहाँ पहुँच सकते हैं। हम लोग परसों तक यहाँ रहकर आपकी प्रतीक्षा करेंगे। सूचना मिल जाय तो अलीगढ़ स्टेशन पर आपकी अभ्यर्थना को उपस्थित रहें। हरदुआगंज के अड्डे पर हर वक़्त इक्के मिलते हैं। अड्डा स्टेशन के नज़दीक ही है। १०-१२ आने का पूरा इक्का हो जाता है, वैसे चार-पाँच आने सवारी लेते हैं। घन्टे-भर का रास्ता है। आइए, शंकरजीके दर्शन कर जाइए। अच्छा मौक़ा है। हरिशंकरजी नमस्ते कहते हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२६

प० नरदेव शास्त्री को लिखा गया पत्र

२३६

नायक नगला

फाल्गुन कृष्ण १०, सं० १९८४

श्री रावजी, प्रणाम

कार्ड मिला, समाचार विदित भये। 'विशाल भारत' के लिए चतुर्वेदीजी महाविद्यालय के सम्बन्ध में मुझ से मेरे संस्मरण माँग रहे हैं। आपकी कुरेद ने उन्हें उकसाया है। महाविद्यालय के विषय में अनेक मधुर संस्मरणों—कटु अनुभवों के संस्कार जो धुँधले पड़ते जा रहे थे, उन्हें उजाल-उजालकर रंग भरना पड़ेगा, तब कहीं चतुर्वेदीजी का मतालबा पूरा किया जा सकेगा। घटनाएँ तो अनेक हैं जो लिखी जा सकती हैं पर कौन घटना कब घटी, इसका लेखा नहीं, महाविद्यालय किस संवत् में किसा दिशा में खोला गया, पहले कार्यकर्ता कौन-कौन थे, फिर क्रम-विकास की अनुक्रमणिका, आचार्यजी कब निकाले गये, श्री मुख्याध्यापकजी महाविद्यालय में किस संवत् में पहुँचे, इन लोगों के तत्त्वावधान में प्रथम उत्सव किस संवत् में हुआ, हम में से कौन कब मन्त्री, मुख्याधिष्ठाता आदि बने इत्यादि विवरण, मैं वहाँ किस संवत् में पहुँचा और कब तक रहा इत्यादि बातें।

बाबू सीतारामजी के सम्बन्ध में कुछ बातें, उनका फ़ोटो, मृत्यु-तिथि संवत्। बाबू जगदम्बाप्रसादजी से पूछकर और प्राप्त करके। श्री गुरुजी महाराज किस वर्ष महाविद्यालय में पधारे, कब तक रहे।

श्री भाष्याचार्यजी किस संवत् में थे।

श्री स्वर्गीय चौ० जयकृष्णजी अमृतसरी का सहयोग कब प्राप्त हुआ।

श्री ज्योतिःस्वरूपजी का समय।

श्री वैद्यजी का जीवन-दान, ऐसी ही अन्य मुख्य-मुख्य बातें जो आपको मालूम हो सकें, हिन्ट्स-रूप में मुझे लिख भेजिये। किसी पुरानी रिपोर्ट में कुछ ऐसी बातें निकली हों तो देखिये। श्री गुरूजीका कोई अच्छा फ़ोटो वहाँ हो, उसकी भी जरूरत होगी।

बाबू सीतारामजी का फ़ोटो जन्म-मरण तिथि, इत्यादि बातें जरूर मालूम करके लिखिये ।

श्री गुरुजी, स्वामी दर्शनानन्दजी, भाष्याचार्यजी, बाबू सीतारामजी इनमें से जिनका फ़ोटो वहाँ हो वह सब 'विशाल भारत' के पते पर, ९१ अपर सरक्यूलर रोड, कलकत्ता, चौबेजी को वहीं से सीधे भेज दीजिए। बाक़ी नोट मुझे लिख भेजिए। वैदिक पाठशाला जालन्धर में किस वर्ष खुली थी, जिसमें आचार्यजी काशी से आये थे, यह सब बातें आप नोट कर भेजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२७

श्री मदनलालजी चतुर्वेदी को लिखे गये पत्र

२३७

गुरुकुल, कांगड़ी (बिजनौर)
आषाढ़ वदि ७, १६८५

प्रिय मदनलालजी, नमस्कार।

कृपा-पत्र मिला, समाचार विदित हुआ। सचमुच वाजपेयीजी की मुझ पर अनन्य कृपा है। उनकी यह कृपा ही मेरे फँसाने का कारण हो गई, फिर भी मैं हृदय से उनका कृतज्ञ हूँ। उनकी सेवा में मेरा प्रणाम पहुँचा दीजिए। उनका स्वास्थ्य अब कैसा है ? पिछले दिनों मालूम हुआ था अस्वस्थ थे। मैंने बाबू पारसनाथसिंहजी को लिखा था कि श्री वाजपेयीजी को साथ लेकर स्वास्थ्य-सम्पादनार्थ हरद्वार आ जाइये। वहा भी कुछ बीमार थे पर मेरे उस पत्र का उन्होंने कुछ उत्तर न दिया, अस्तु।

आपकी जो कविता ब्रजभाषा में पुराने ढंग की होती है वह मुझे अधिक पसन्द आती है, आप उसी ढंग पर लिखा कीजिए। सींग कटाकर बछड़ों में दाखिल न हूजिए, अपना स्टाइल न बिगाड़िये, चाहे गीत हो या कवित्त हो, ब्रजभाषा में 'पिंजरवा, दरबजवा', अच्छे नहीं मालूम होते। शुद्ध ब्रजभाषा में भी तो गीत लिखे जा सकते हैं। शंकरजी के अनेक गीत ऐसे हैं। पुराने कवियों ने भी लिखे हैं। फिर ब्रज-भाषा आपकी तो मातृभाषा है। नई जाति के कवि सब के सब विशुद्ध छायावादी बनते जा रहे हैं। दो-चार तो पुरानी चाल के प्रकाशवादी भी रहने चाहिएँ। जो कुछ भी हो कविता की भाषा होनी चाहिए। भाव चमत्कार-युक्त हों। पर समझ में आ जायँ। अज्ञेय मीमांसा न हो। जो बात किसी की समझ में ही न आवे वह लोकप्रिय कैसे होगी ? उसकी कोई दाद कैसे देगा ? आजकल के छायावाद का अधिकांश ऐसा ही होता है। कविता के दो प्रधान गुण हैं प्रसाद और चमत्कार। उर्दू वाले इसे फ़साहत और बलाग़त कहते हैं। अकबर ने कितने अच्छे ढंग से इस बात को समझाया है, आप भी समझ लीजिए।

"समझ में साफ़ आ जाये फ़साहत इसको कहते हैं।
असर हो सुनने वाले पर बलाग़त इसको कहते हैं।।"

कविता चाहे छोटी हो एक ही पंक्ति हो, पर अच्छी हो, जी में जगह कर ले, और

यह तभी होगा जब कविता परिश्रम से लिखी जायगी और दिल से लिखी जायगी। आजकल सद्यः कविता के खब्त ने और भी ग़ज़ब ढा रक्खा है। फ़साहत और बलाग़त की ज़रूरत ही नहीं समझी जाती। कविता के सम्बन्ध में यही ध्यान देने की बातें हैं। छन्द भी कंडे का होना चाहिए। आपको तो अच्छा अभ्यास है, उसे ही और दृढ़ कीजिए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२३८

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)
४-४-१९३२

प्रिय चतुर्वेदीजी, प्रणाम।

आपने अचानक ही इस मामले में पड़कर बड़ी सफ़ाई दिखलाई। यह मामला मुझे तो शुरू से ही बेकार मालूम दे रहा है। इसकी ज़रा भी ज़रूरत न थी। सफ़र सर्व-सम्मत पाठ है। राजा शिवप्रसादजी 'सितारेहिन्द' ने अपने गुटके में यही पाठ लिखा है। गुटकों के अनेक संस्करणों में ऐसा ही पाठ छपता रहा है। इस पर कभी किसी को आपत्ति नहीं हुई। आपत्ति होने की कोई बात भी नहीं, यह व्यर्थ का वितंडा है।

मैं २६-३-३२ रविवार की शाम से प्लेग में बीमार हूँ। पत्र भी चि० रामनाथ से लिखाया है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२८

श्री मोहनलाल महतो वियोगी को लिखे गये पत्र

२३६

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चांदपुर (बिजनौर)
मा० कृ० १४, ८३

प्रियवर वियोगीजी, नमस्कार।

आपका मा० कृष्ण ७/८३ का कृपा-पत्र और अमूल्य 'निर्माल्य' पाकर परम प्रसन्नता हुई। इस कृपापूर्ण स्मरण के लिए अनेक धन्यवाद।

यह देखकर अत्यन्त हर्ष हुआ कि आप जैसे चतुर-चितेरे प्रसिद्ध हैं वैसे ही कुशल कवि भी सिद्ध हो रहे हैं। आपकी चित्रकला में व्यंग्य रहता है तो कविता में भी बाँकपन है। आप कवि और चित्रकार दोनों हैं। इस विशेषता के लिए बधाई देता हूँ। निर्माल्य की कवितायें मुझे पसन्द आईं। रचना सुन्दर है। स्थान-स्थान पर प्रतिभा का परिचय मिला है। भाषा साफ़ है। भाव समझ में आते हैं।

छायावाद की कविता प्रायः पहेली के ढंग की होती हैं और इसलिए कभी-कभी नितान्त दुर्बोध, 'गूंगे की सैन' हो जाती है। पर निर्माल्य की कविताओं का अधिकांश इसका अपवाद है। आपको छायावाद के विषम मार्ग में सफलता प्राप्त हुई है। मैं छायावाद का विशेषज्ञ क्या 'विद्यार्थी' हूँ। छायावाद के बड़े-बड़े महारथियों की शुभ और सुन्दर सम्मतियों के सामने मेरी तुच्छ सम्मति का मूल्य ही क्या है? फिर भी यह आपका सौजन्य है जो मेरी सम्मति जानना चाहते हैं। जो बात समझ में आई, निवेदन कर दी—

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

पुनश्च :

निवेदन के अन्त में जो संस्कृत पद्य छपा है, वह बहुत ही भ्रष्ट हो गया है। बेतरह खटकता है। उस पर चिट लगनी चाहिए थी, उत्तरार्ध का पाठ ऐसा होना चाहिए—

'सिकतागत शर्कराकणान त्वन्विष्यन्ति परं पिपीलिकाः"

पूर्वार्ध में—'स्वचिदर्थो' की जगह 'क्वचिदर्थो' हो तो ठीक हो।

२४०

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)
फाल्गुण कृ० ११, '८४

प्रिय वियोगीजी,

आपका कृपा-पत्र मिला, सम्मति के लिए आपको बहुत प्रतीक्षा करनी पड़ी। इसका मुझे खेद है, पुस्तक को मनोयोगपूर्वक पढ़ने का मुझे अब तक अवकाश नहीं मिला था। इसलिए विलम्ब हुआ, क्षमा कीजिए।

'इकतारा' मुझे 'निर्माल्य' से भी अधिक पसन्द आया, आपकी रचना में उत्तरोत्तर चमत्कार बढ़ता जाता है। 'इकतारे' की कई कविताएँ तो बहुत ही सुन्दर हैं। यथा 'समय' 'रजकण' 'चित्रपट', 'आँसू', कवि, मोहन और राम। छायावादियों में आपके लिखने का ढंग अभिनन्दनीय है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२६

श्री कुँवर सुरेशसिंहजि को लिखा गया पत्र

२४१

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)
श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी, संवत् १६८८

प्रिय कुंवर साहब, नमस्ते।

मैं प्रयाग से अभी कल लौटकर यहाँ घर पर आया हूँ। आपका २१-८-३१ का कृपा-पत्र यहाँ आने पर मिला।

श्री सूरदासजी के पदों का संकलन जैसे-जैसे छपता जाय मेरे पास भेजते जाइए। सब छप जाने पर प्रस्तावना के रूप में मैं कुछ लिखूंगा। मैं अभी परसों फिर बाहर काशी जा रहा हूँ। और सम्भवतः एक महीने तक वहीं रहूँगा। वहाँ पहुँचने पर आपको पत्र लिखूंगा। पदों के छपे हुए फ़ार्म वहीं भेजिएगा।

श्री सूरदासजी का कोई अच्छा चित्र मेरे देखने में नहीं आया। नागरी प्रचारिणी सभा के चित्र-संग्रह में शायद हो।

आशा है, आप सानन्द हैं।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३०

प० शालग्रामजी शास्त्री को लिखा गया पत्र

२४२

काव्य-कुटीर, नायक नगला
चांदपुर (बिजनौर)
मार्गशीर्ष कृ० १३, १९८०

श्रीमत्सु कविराजेषु, सस्नेह सबहुमानंचप्रणम्य निवेदनम् ।

आखिर आप बेचारे 'पन्थजी' पर 'हन्टर पाणि', हो ही पड़े, बरस ही पड़े । महाकवि भास के नाम पर ग़रीब पन्थजी का काम तमाम कर ही डाला । 'माधुरी' के मधुर प्याले में गरम मसाले और नमक की पुड़िया घोल ही तो दी । भार्गवजी का सुरुचि-संचारू व्रत भंग कर ही डाला । उन्होंने कई बार गर्व के साथ अपनी 'विशेष' विशेषताओं का उल्लेख करते हुए लिखा था कि 'माधुरी' समालोचना-मार्ग को सुरुचि-सम्पन्न बनावेगी । 'सतसई-संहार' की शैली की जहरीली समालोचनाओं का साहित्य की वाटिका से एक दम बहिष्कार करके दम लेगी । श्रीमान् ने कोठे वाली को ज़ीने पर नहीं, सहन में ला पटका । बधाई है, कविराजजी की बहादुरी को ।

मैं बहुत दिनों से बराबर बीमार हूँ । इससे बहुत कम लिखता-पढ़ता हूँ । कल जो 'माधुरी' आई तो मैं बुखार में पड़ा था । चि० काशीनाथ को 'माधुरी' देकर कहा कि कोई अच्छा-सा लेख पढ़कर सुनाओ । उसने पत्रिका के पन्ने पलटने शुरू किये, इधर मैं बुखार की पीनक में आ गया । कुछ देर बाद देखा वह पढ़ते-पढ़ते हँस रहा है । पूछा, क्या बात है ? बोला, शास्त्रीजी का लेख पढ़ रहा हूँ । कैसा लिखा है ? बहुत ही अच्छा । रात को ज्वर का वेग कम होने पर मैंने स्वयं पढ़ा । कमज़ोरी थी पर तबीयत नहीं मानी । एक बार सरसरी तौर पर सब पढ़ गया । फिर एक-एक कर पढ़ा । एक बजे तक यही करता रहा । कर्णधार का अर्थ कान पकड़ने वाला (पंजाबी महाविरे में कान से पकड़ने वाला) पढ़कर बेअख़्तयार हँसी आ गई । उपाधि का तौक़ लटकाना '५७ के ग़दर में उपाधि का लूटना, काना कौआ आंख को अन्दर की ओर करके, यह तो सब ठीक है, पर आँखों में उँगली डालकर आँखें बन्द करके यह आँख की जगह आँखें, शायद सम्पादकों का संशोधन है । यह इन लोगों में प्रधान रोग है, लेख में कुछ-न-कुछ इसलाह ज़रूर दे डालते हैं ।

'·· पन्तजी तो साहित्य के तमाम दोषों से मुस्तसना हैं। इसकी जगह पन्थजी साहित्य-पथ की दफ़ा ३४ से मुस्तसना हैं। यानी बे रोक-टोक चाहे जहाँ मल-मूत्र विसर्जन कर सकते हैं। दफ़ा ३४ में कानूनन उनका चालान नहीं हो सकता।' हो तो कैसा! ख़ैर, यह तो एक लतीफ़ा है। बात यह है पन्थजी सताये बहुत गये। पर पंचराम से अधिक पन्थजी की मरम्मत हो गई। इससे 'माधुरी' वालों को भी बेहद रंज हुआ होगा। कहाँ बेचारी दुधमुँही 'माधुरी' कहाँ यह 'बनानेवाली' 'ज़हरीली' समालोचना का गरम मसाला, आपने भी जादू कर दिखाया।

श्री शंकराचार्यजी को आठवीं सदी से ऊपर पहुँचाने में आपने अच्छी युक्ति दी। पर हर्षवर्धन तो केवल हिन्दू सम्राट् नहीं थे। उनका झुकाव तो बौद्धों की ओर अधिक था। ऐतिहासिक लोग तो ऐसा ही कहते हैं। हर्षवर्धन धर्म के मामले में गांधीजी थे

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

३१

श्री व्रजमोहन वर्मा को लिखे गये पत्र

२४३

C/O हिन्दी प्रेस, प्रयाग
६, ८, ३०

प्रिय वर्मा जी, नमस्कार।

आपका २३-८ का कृपा-पत्र मुझे शाम यहाँ मिला। मैं १२-८ से यहीं हूँ।

आप हास्य रस की कविताओं का संग्रह करना चाहते हैं। अच्छी बात है। हिन्दी में ऐसा एक संग्रह बहुत दिन पहले 'भड़ौआ संग्रह' के नाम से (नवलकिशोर प्रेस से) नकछेदी तिवारी ने प्रकाशित किया था। बाद को उसका नाम बदलकर और बढ़ाकर काशी से प्रकाशित किया गया था। उसमें हास्य रस की पुरानी कविताओं का अच्छा संग्रह है। काशी में किसी बुक्सेलर से मिल जायगा। बा० हरिश्चन्द्र भारतेन्दु ने एक छोटी-सी पुस्तक 'परिहासनी' नाम से निकाली थी। उसमें भी उसकी कुछ कविताएँ मार्के की हैं। यह पुस्तक खड्गविलास प्रेस बाँकीपुर में बहुत पहले छपी थी, शायद अब भी मिलती हो। प० रुद्रदत्तजी ने समय-समय पर पद्य में 'पच' लिखे थे। 'भारतमित्र' के पुराने फ़ाइलों में मिल सकेंगे। इस वक़्त तो इस बारे में यही दो-एक बातें याद आ रही हैं। हिन्दी में आजकल तो कोई भी हास्य रस की अच्छी कविता नहीं लिखता। जो लिखते भी हैं, वह बेचारे हास्य रस के सिर पर मिर्ज़ापुरी लष्टिका का प्रहार करते हैं, जिसे देखकर हँसने की जगह रोना आता है। गद्य में अलबत्ता अन्नपूर्णानन्दजी अच्छा लिखने लगे हैं। 'विशाल भारत' सर्वप्रिय हो रहा है। इस दौर में कोई भी सहृदय ऐसा नहीं मिला जिसने 'विशाल भारत' की प्रशंसा न की हो। पत्रों के प्रसंग में मैं बराबर उसकी चर्चा चलाता रहता हूँ। 'विशाल भारत' बन्द न होना चाहिए। उसका प्रचार बढ़ रहा है। वि० भा० के स्टैम्प सौ डेढ़ सौ आप घर के पते पर भेज दीजिए। आपने घर के पते पर जो भेजे थे, उनका इस्तैमाल शुरू हो गया है।

हि० सा० स० की दशा वास्तव में शोचनीय है। कलकत्ते में उसका अधिवेशन सफलता से न हुआ तो बधिया बिलकुल बैठ जायगी। सम्मेलन के लिए उद्योग होना चाहिए। चतुर्वेदीजी लगन से प्रोपैगंडा करेंगे तो अधिवेशन सफल हो जायगा।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२४४

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
चाँदपुर (बिजनौर)
१३, ५, ३१

प्रिय वर्माजी, नमस्ते ।

कृपा-पत्र शाम को मिला । लेख पढ़ा, पूर्णसिंह के आत्म-चरित ने लेख को पूरा कर दिया । आपकी यह समस्या-पूर्ति बढ़िया रही । धन्यवाद । श्री काशीनाथजी वाले लेख भी भेजिए ।

चतुर्वेदीजी का कार्ड आपके पत्र के साथ ही मिला, जो उन्होंने इलाहाबाद स्टेशन से लिखा है । पर उसमें वह विवाह की तारीख़ लिखना भूल गये । यह समस्या भी आपके पत्र ही से हल हुई । आपने १३-५ लिखी है, जो आज ही है । मलेपुर के पते पर उन्हें पत्र लिख रहा हूँ । मैं आजकल बहुत ही अस्वस्थ हूँ । गरमी में इतना लम्बा सफ़र करने की हिम्मत नहीं होती । इच्छा रहते भी सम्मेलन में नहीं आ सकूँगा । श्री वर्माजी की मृत्यु सचमुच बहुत ही दुःखदाई हुई । क्या किया जाय, ईश्वरेच्छा ! आशा है, आप प्रसन्न हैं ।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२४५

चाँदपुर
२३, ६, ३१

प्रियवर वर्माजी, नमस्कार ।

आपका १२-६ का कृपा-पत्र कल मिला । पत्र पढ़कर प्रसन्नता हुई । सम्मेलन आदि के झंझट में पत्रोत्तर का अवकाश नहीं मिला तो बात क्षन्तव्य ही है । स्वर्गीय सतीशचन्द्र रायजी का पत्र वास्तव में महत्त्वपूर्ण है । गणेशजी के चित्र की बड़ी सुन्दर समालोचना की है । यह पत्र तो छपना चाहिए था । उनका चित्र और चरित्र 'विशाल भारत' में छपने आ रहा है । उसी प्रसंग में इसे भी उद्धृत कर दीजिए । स्वर्गीय रायजी बड़े ही सहृदय विद्वान् थे । उन्होंने सतसई की जैसी मार्मिक समालोचना एक पत्र में मुझे लिखी थी वैसी हिन्दी के किसी धुरन्धर विद्वान् ने भी नहीं लिखी ।

सम्मेलन की कार्रवाई के किसी प्रकरण में मुन्शी अजमेरीजी का 'जिक्र खैर' किसी पत्र में नहीं पढ़ा । मालूम होता है उन्हें सम्मेलन में कुछ पढ़ने का—अपने करतब दिखाने का मौक़ा नहीं दिया गया । आप लोगों ने प्राइवेट तौर पर उनसे कुछ सुना ?

उनसे बंगाली भाषाभाषियों को भी कुछ सुनवाया जाता तो कैसा होता। हिन्दी वालों को प्रोपैगंडा करना नहीं आता ! किसी गुण व्यक्ति का सार्वजनिक रूप में उपयोग करना वह जानते ही नहीं । मुन्शी अजमेरीजी भिन्न भाषा-भाषियों पर हिन्दी का सिक्का बैठाने के लिए बहुत ही मौजूं हैं। पर इधर किसी का ध्यान ही नहीं जाता। वह कुछ रसिक रईसों में मनोरंजन का साधन बने हुए हैं । उन्हें रिझाकर अपना काम निकालते हैं।

'विजय' में आपके कोई-कोई चुटकुले खूब होते हैं । सम्मेलन की रिपोर्ट तो आपने ऐसी अच्छी लिखी कि कमाल कर दिया । मालूम नहीं रत्नाकरजी ने और दुलर्गव ने भी उसे देखा या नहीं ।

श्री श्यामसुन्दरजी से और आज़ादजी से नमस्कार कहिए। श्यामसुन्दरजी की कविताओं का संग्रह छपा या नहीं।

जून का 'विशाल भारत' कल मिल गया। प्रारम्भ में जो इतनी लम्बी कविता दी गई है क्या कोई लेख न था। हिन्दी प्रेस प्रयाग में प० हृषीकेश भट्टाचार्यजी का ब्लाक एक रीडर में देने के लिए मेरे लिखने पर गया था वहाँ से वापस न हुआ तो तकाजा करके मँगा लीजिए, वर्ना वहाँ से न मिलेगा। सम्मेलन की चित्र-प्रदर्शनी में नाहरजी ने मेरा एक फोटो मँगवाया था वह अभी वापस नहीं आया । प्रदर्शनी के प्रबन्ध में आपका भी हाथ था ? वह फोटो वहाँ से माँगकर देखिए। यदि उससे अच्छा ब्लाक बन सके तो देखकर और पूछकर ब्लाक का इस्टीमेट लिखिए। बहुत से लोग फोटो के लिए लिखते रहते हैं । वह सबसे आखिरी फोटो है । उसका अच्छा साफ़ ब्लाक बन जायगा तो कुछ फोटो छपवा लूंगा। आशा है, आप प्रसन्न हैं।

चतुर्वेदीजी के पत्र का उत्तर कल दे चुका हूँ। उसी में श्री सतीशचन्द्र रायजी के सुपुत्र श्री भवानीचरण राय एम० ए० के भी दो पत्र भेजे हैं । भवानीचरणजी भी अपने पिताजी के समान ही सहृदय व्यक्ति प्रतीत होते हैं ।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

३२

श्री प० नाथूराम शङ्कर शर्मा 'शङ्कर' को लिखे गये पत्र[1]

२४६

आर्यसमाज-मन्दिर
अहार (बुलन्दशहर)
२-३-१४

माननीय कविजी महाराज, प्रणाम।

··· आजकल 'विहारी सतसई' की टीका में लगा हूँ। टीका का कुछ नमूना भेजता हूँ। देखिए, कुछ है भी या निरी बावले की बड़ ही है। सचमुच टीका लिखना और खासकर कविता का बड़ा कठिन काम है। चाहता था कि इसे दो-तीन महीने में समाप्त कर दूंगा, पर आज मालूम हुआ कि ऐसा नहीं हो सकेगा। अब तक एक दोहे रोज का हिसाव बैठा है। **'हिनोज दिल्ली दूरअस्त।'** बेगार टालने को तबियत नहीं चाहती, और पीसे को पीसना क्या? पहले टीकाकारों की अपेक्षा कुछ भी नूतनता रहे, तब तो ठीक, नहीं तो टीका की आवश्यकता क्या? और जिस पर बीसियों टीकाएँ हों, उसमें कोई नई बात निकालना आसान काम नहीं। खैर, जो कुछ हो। अब तो प्रारम्भ कर दिया है। सौ-दो सौ दोहों पर टीका हो ले तो लेकर आपकी सेवा में आऊँगा और सलाह तथा इसलाह लूंगा। इस नमूने को देखकर राय दीजिये कि ऐसा ही चलता रहे, या उसमें कुछ परिवर्तन की आवश्यकता है।

इस टीका में इतना फैलाव नहीं है परन्तु कुछ न कुछ नई बात निकालने की ज़रूर कोशिश की गई है। पुराने टीकाकारों से कहीं-कहीं छेड़-छाड़ भी हो गई है। लल्लूलालजी से खासकर। **'कहत न देवर की कुबत'** को ध्यान से देखिए। कोई अण्डबण्ड बात तो नहीं लिख गया हूँ। किसी हिन्दी कवि ने भाभी की गणना स्वकीया

---

१. कविवर शङ्करजी का प० पद्मसिंह शर्मा से घनिष्ठ सम्बन्ध था। शर्माजी शङ्करजी को उत्कृष्ट कोटि का कवि मानते थे। दोनों में पत्र-व्यवहार भी खूब होता था। शङ्करजी के पास शर्माजी की सैकड़ों चिट्ठियाँ थीं, खेद है कि वे सुरक्षित न रह सकीं। बड़ी कठिनाई से कुछ पत्र मिले हैं, जो यहाँ दिये जाते हैं। इस पुस्तक के कई फर्मे छप जाने पर ये चिट्ठियाँ उपलब्ध हुईं, अतः उपयुक्त स्थान पर न दी जा सकीं। —सम्पादक

नायिका में की हो तो कृपाकर अवश्य पता दीजिये । लल्लूलालजी ने भाभी के साथ देवर की दुर्व्यवहार-चेष्टा को 'स्वकीयाऽसुर विवाह-वर्णन' हैडिंग दिया है। क्या यह ठीक है, या उस पर मेरी जिरह ठीक है? इसका फ़ैसला निष्पक्ष होकर दीजिये। 'रसाभास' पर जो कुछ लिखा गया है, उसे भी देखिए।

हिन्दी में नायिका-भेद और रस-वर्णन विषयक कौनसा ग्रन्थ सर्वोत्तम है।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

२४७

नायक नगला
१५-१-१७

श्रीयुत् परम माननीय कविजी महाराज, प्रणाम ।

अभी मैं, लखनऊ में, प० ब्रजनारायण 'चकबस्त' से मिला था । पूछने लगे, हिन्दी में अच्छे कवि आजकल कौन हैं? काँग्रेस में गाने और सुनाने के लिए कुछ भजन-कविताएँ आदि······से मँगाई गई थीं। जो एक कन्या-पाठशाला की लड़कियों द्वारा प्रतिदिन सुनाई जाती थीं । उनके बारे में चकबस्तजी कहने लगे कि मामूली तुकबन्दियाँ थीं। उनमें कविता का चमत्कार नहीं था । आपका परिचय देने पर बोले—उनकी कविताओं का संग्रह छपा है? 'अनुराग-रत्न' और 'शङ्कर-सरोज' नाम लिया गया तो कहा कि देखेंगे। फिर पूछा कि पुराने ढंग की शृंगारपरक कविता भी शङ्करजी ने की है? मैंने कहा—वह उन्होंने जला दी ! यह सुनकर चकबस्त बड़ा अफ़सोस करने लगे। कहा—शंकरजी से कहिए, ऐसा जुल्म न करें। वह बूढ़े हो गये तो क्या हुआ हम लोग तो उसके क़द्रदान नौजवान हैं । मैंने कहा, वह तो जो होना था हो चुका। बचे-खुचे जो उस विषय के पद्य हैं, उनसे ही उस रंग का पता चल जायगा। कहा कि ज़रूर भेजिए। मैंने वादा किया कि भेजूंगा।

इस बार यहाँ आकर मैंने 'शिवसिंह-सरोज' और 'काव्य-प्रभाकर' में हिन्दी कविताओं का संग्रह बड़े ध्यान से, समालोचनात्मक दृष्टि डालकर पढ़ा और अभी पढ़ रहा हूँ। अपूर्व आनन्द आ रहा है। किताबों को रँग रहा हूँ। नोट कर रहा हूँ। जी में आता है कि इन कविता-संग्रह की गुदड़ियों से अच्छे-अच्छे लाल निकालकर एक नया कण्ठा बनाऊँ। ख़ैर, यह तो एक संकल्प मात्र है, शायद कभी पूरा हो जाय। एक इरादा है जो बहुत दिनों से है, और इस बार और पक्का हो गया है, जिसे जल्दी पूरा करना चाहता हूँ। यदि आप कुछ कष्ट स्वीकार करके थोड़ी-सी सहायता दें तो

यह संकल्प अच्छी तरह पूरा हो जाय। और एक ऐसा काम हो जाय कि 'बामदो शायद।' इरादा यह है कि आपकी कविता पर एक विस्तृत समालोचनात्मक और तुलनात्मक निबन्ध लिखूं और ऐसा लिखूं कि उससे अच्छा और न लिख सकूं। बस, कलम तोड़ दूं और दवात फोड़ दूं। हाय, आज 'कलित कलेवर'[1] होता तो यह काम कैसा होता। यह बात जब याद आती है, और जब कोई कविता-ग्रन्थ देखता हूं तो ज़रूर याद आती है, और बार-बार रह-रहकर याद आती है तो कलेजे पर सांप लोट जाता है। सहृदयता का हृदय फटने लगता है।

खैर, जो होना था सो हो चुका, अब जो कुछ है उसी से काम लेना होगा। सबसे पहले आपकी सारी कविताओं का संग्रह किया जाय। किसी अंग की कमी न रह जाय। पुराने महारथियों से मुक़ाबला करना है। सब साधन ठीक होना चाहिए। इसमें प्रयत्न और सावधानता की बड़ी ज़रूरत है। मैंने तुलनात्मक विषयों पर नोट किये हैं। पुराने कवियों के जो अच्छे-अच्छे पद्य हैं, वे मुक़ाबले के लिए चुने हैं। आपकी पुरानी कविताएँ जो उस समय जमा की थीं, उनकी नक़ल पं० राधावल्लभजी (शङ्करजी के अत्यन्त प्रिय शिष्य जिन्हें वे पुत्रवत् मानते थे) के पास हैं। कृपाकर उन्हें आप एक बार देख जाइए। जहाँ सुधारना हो वहाँ सुधार दीजिए।

सो महाराज, कुछ समय के लिए सब चिन्ताएँ छोड़कर इस कविता-संग्रह की ओर ध्यान दीजिए। प्रार्थना स्वीकार कीजिए। बहुत हो चुकी। यदि यह काम इस समय न हुआ तो फिर कभी न होगा। मैंने इस बार इस काम के लिए बहुत कुछ सोचा-विचारा है। कहीं आपकी उदासीनता से मेरा यह संकल्प शेखचिल्ली का मनसूबा होकर न रह जाय। दया कीजिए, ऐसा न होने दीजिए। इस रङ्क-रोदन पर करुणा के कान दीजिये। सुनी-अनसुनी न कर जाइए।

सेवक
पद्मसिंह शर्मा

१. शङ्करजी ने शृंगार रस की कविताओं का एक अति उत्कृष्ट नख-सिख लिखा था। इस पुस्तक का नाम था—'कलित कलेवर'। 'कलित कलेवर' की कविताओं को पढ़कर सहृदय पाठक मुग्ध हो जाते थे। यह पुस्तक प्रकाशित होने वाली थी कि शङ्करजी ने अपनी धुन में उसे एक दिन रात को फाड़ फेंका। बोले—यह सब यौवन की उमंग है। बुढ़ापे में ऐसी बातें प्रकाशित करना-कराना शोभनीय नहीं। उसी 'कलित कलेवर' के नष्ट हो जाने पर शर्माजी ने इस पत्र में इतना अफ़सोस ज़ाहिर किया है।—सम्पादक।

२४८

नायक नगला
१७-१-१७

श्री परम माननीय कविजी महाराज, प्रणाम ।

साहित्याचार्य प० शालग्रामजी शास्त्री को मैंने आपका किया अनुवाद 'हीजड़ा के जाये तेरी चेरी बन जाऊँगी' भेजा था । यह अनुवाद-पद्य, मूल श्लोक के साथ भेजा था । उस पर शास्त्रीजी ने मार्के की समालोचना की है । लिखा है कि अनुवाद इतना सुन्दर है कि उसकी प्रशंसा के लिए शब्द नहीं मिलते। अनुवाद पद्य का उत्तरार्द्ध तो मूल से भी अधिक चमत्कारक है, और स्वतन्त्र भावपूर्ण है। मूल श्लोक में 'प्रमदा' पद अनुरूप नहीं है । अनुवाद में 'अबला' बहुत मुधर है । इसमें अनुवाद का यह अंश 'चटपटानुवाद' या स्वतन्त्रानुवाद है । 'हीजड़ा' का 'जाया' होता ही नहीं, इसलिए 'हीजडा के जाये' का पर्यवसन 'हरामी' में होगा । ऐसी बात अन्य के मुख से नहीं कढ़ सकती । इससे कवि के हृदय में उसी 'विरहिणी' का 'आवेश' हुआ दीखता है । इसलिए यह अंश आवेशानुवाद है अथवा तन्मयानुवाद ।

विनीत
पद्मसिंह शर्मा

२४६

ज्ञानमण्डल, काशी
७-५-११

श्री कविजी महाराज, प्रणाम ।

⋰ गांधीजी का गन्ध-प्रसारण सर्वत्र है । पर, उसे ग्रहण करने वाले विरले ही हैं । ईश्वर किसी की क्यों रक्षा करे, जब उसे कोई मानता ही नहीं । अकबर ने खूब कहा है—

"जब मैं कहता हूँ कि या अल्लाह मेरा हाल देख,
हुक्म होता है कि अपना नामए अयमाल देख ।"

इस 'मिथ्या' संसार में 'सत्याग्रह' की कहीं चलती है !

"चीखे-चिल्लाए, कूदे, उछले, टहले,
हिर-फिर के वहीं रहे जहाँ थे पहले,
हालत तो वही है, बल्कि उससे बदतर,
यों मुँह से जो जिसके दिल में आए कहले ।"

—अकबर

नास्तिकता की हद हो गई. 'स्वभाग्य-निर्णय' का अधिकार भी 'मजबूर बन्दे' अपने ही हाथ में लेना चाहते हैं। मानो 'खुदावन्द' कोई चीज़ ही नहीं। आस्तिक आदमी को यही कहकर सब्र करना चाहिए—

"ये उम्र कब तक वफ़ा करेगी,
जमाना कब तक जफ़ा करेगा।
मुझे क़यामत की हैं उमीदें,
जो कुछ करेगा खुदा करेगा।"

दास
पद्मसिंह शर्मा

२५०

नायक नगला
२१-१-२०

श्री कविजी के चरणों में प्रणाम।

आपके दर्शनों के लिए मैं जितना उत्कण्ठित हूँ, बस मैं ही जानता हूँ। मेरे किन्हीं दुष्कर्मों का फल है कि दर्शन-लाभ से वंचित् हूँ। कोशिश में हूँ कि बहुत शीघ्र उपस्थित हूँ।

आप 'पद्य-पारिजात' अवश्य-प्रवश्य लिखें। ख़ास चीज होगी। बड़ी जरूरत है ऐसी पुस्तक की। पर कहीं आप लिखें भी। कविता की क़द्र होती है—पर "होती है सच की क़द्र" बेक़द्रियों के बाद।' आप अपना काम कर छोड़िये। **'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन'**। 'पद्य-पारिजात' प्रारम्भ कर दीजिये। उसके मन भावन परम पावन परिमल से रसिक भृंग कृतार्थ हो जायँगे। मस्त होकर गुँजारने लगेंगे।

विनीत
पद्मसिंह शर्मा

२५१

दिल्ली
३०-१-२३

श्री कविजी महाराज, प्रणाम।

श्री रत्नाकरजी (श्री जगन्नाथदास रत्नाकर) आपसे मिलने के लिए वहाँ आना चाहते हैं। आने वाले आदित्यवार को या उससे एक-दो दिन बाद यहाँ से चलेंगे। मैं भी साथ आऊँगा। प० उदित मिश्र का भी इरादा है। चलते वक़्त तार से सूचना देंगे। आशा है, आपके दर्शन करके कृतार्थ होने का अवसर सफल होगा।

सेवक
पद्मसिंह शर्मा

२५२

दिल्ली
१२-२-२३

श्री कविजी के चरणों में प्रणाम ।

रत्नाकरजी कल लखनऊ चले गये । आपको बार-बार स्मरण करते थे । प्रणाम कह गये हैं । आपसे मिलकर बहुत प्रभावित हुए । सतसई भाष्य का अन्तिम फर्मा छप गया, अब उसकी भूमिका एक फार्म के क़रीब बाक़ी है । आप अपनी 'तक़रीज़' भेज देते तो अच्छा था । साथ ही छपा देता ।

विनीत
पद्मसिंह शर्मा

२५३

नायक नगला
१४-४-२०

माननीय कविजी महाराज, प्रणाम ।

··· · मण्डी वाली की (धनोरा मण्डी से निकलनेवाली 'मनोरमा' नामक मासिक पत्रिका) बदतमीज़ी और बेअदबी हद से बढ़ गई है । इसके मुँह लगना और भी बुरा है । फिर भी 'प्रतिभा' (मासिक पत्रिका) ने उसकी गोशमाली करना मुनासिब समझा । मैं समझता हूँ, अब आगे यह मामला न बढ़ेगा । 'समालोचक' की भी यही राय मालूम होती है । मैंने 'प्रतिभा'-सम्पादक को भी यही राय दी है । अपनी-अपनी राय है । किन्हीं की राय है कि गधा लात मारे तो बचकर एक ओर खड़ा हो जाना चाहिए । उत्तर में लात मारना ठीक नहीं । दूसरे लोग भी हैं कि अगर लत्तू गधा लात चलावे तो लाठी मारकर उसका टंगड़ तोड़ देना चाहिए । मेरी राय इन दोनों से अलग है । यानी लत्तू गधे को धँगना देकर छोड़ना चाहिए । इस सम्बन्ध में मैं आपका मत भी जानना चाहता हूँ ।

दास
पद्मसिंह शर्मा

२५४

C/O बेताब प्रिंटिंग वर्क्स,
चाह रहट, दिल्ली
१६-११-२२

पूज्य कविजी, प्रणाम।

······कल प० बनारसीदास चतुर्वेदी के अकस्मात् दर्शन करके बड़ा हर्ष हुआ। वे यहाँ माननीय श्रीनिवास शास्त्री से 'इण्टरव्यू' करने आये हैं। बम्बई से ही उनके साथ हैं, उन्हीं के पास डाक्टर सप्रू के यहाँ ठहरे हैं। बड़े ही सरल सज्जन हैं। उन्हें देखकर और उनकी ब्रजभाषा सुनकर स्वर्गीय सत्यनारायण की मूर्ति आँखों में फिर गई। अभी दो-एक दिन रहेंगे।

सेवक
पद्मसिंह शर्मा

२५५

C/O बेताब प्रिंटिंग वर्क्स
चाह रहट, दिल्ली
२१-१०-२२

श्रीमाननीय कविजी के चरणों में प्रणाम।

एक मासिक पत्र का प्रस्ताव मैं भी बेताबजी से कई दिनों से कर रहा था।[1] आपने उसकी पुष्टि करके औचित्य की मुहर लगाई। पत्र का नाम मैंने 'देहली-दीपक' सोचा है। 'देहली-दीपक' संस्कृत में एक प्रसिद्ध न्याय है। जो बात अन्तरंग और बहिरंग बातों पर समान रूप से प्रकाश डालती है, ऐसे प्रसंग पर इसका प्रयोग होता है, इस कारण साहित्य की अन्तरंग-बहिरंग दशा की समालोचना की सूचना इससे ध्वनित हो सकती है। इसमें श्लेष भी है। एक नाम समालोचक भी सूझा था। कविराज भी अच्छा है।

यह पत्र तभी निकल सकता है जब आप हरिशङ्करजी को यहाँ रहने की आज्ञा दे दें। सम्पादक हों हरिशङ्करजी और बेताबजी। आप और मैं सहायक हों। बस, काम चल जायगा। हरिशङ्करजी यहाँ आ जायँ तो डिक्लेरेशन के लिए दरख्वास्त दे दी जाय। उनके आने से और भी कई स्कीम ठीक हो जायँ।

विनीत
पद्मसिंह शर्मा

१. सुप्रसिद्ध नाटककार प० नारायणप्रसाद बेताब ने देहली में अपना बेताब प्रिंटिंग प्रेस खोला था, उससे वे एक साहित्यिक मासिक पत्र प्रकाशित करना चाहते थे, उसी का इस पत्र में संकेत है।—सम्पादक।

२५६

C/O बेताब प्रिंटिंग वर्क्स
चाह रहट, दिल्ली
१२-१-२३

श्री कविजी महाराज के चरणों में प्रणाम।

मु० सूर्यनारायण मिहर को 'बिहारी-सतसई' पढ़कर हिन्दी कविता का शौक़ हुआ है। उसमें आपके दो-चार पद्य देखकर उन्हें आपकी अन्य कविता पढ़ने की उत्कण्ठा है। इसलिए 'अनुराग-रत्न', 'वायस-विजय', 'गर्भरण्डा-रहस्य', 'शङ्कर-सरोज' आदि सब कविता-पुस्तकें उनके लिए भेज दीजिए। मैं स्वयं उन्हें भेंट कर दूँगा।...

विनीत
पद्मसिंह शर्मा

२५७

पूज्यपाद श्री कविजी के चरणों में प्रणाम।

आपकी कविताओं का सुन्दर, सचित्र बढ़िया संस्करण मुज़फ्फरपुर से एक सहृदय सज्जन निकालना चाहते हैं, बहुत आग्रह से कहा है, वह आपके दर्शनार्थ मेरे साथ हरदुआगंज आना चाहते हैं। कविताओं का संग्रह अवश्य छप जाना चाहिए। उसका सम्पादन मैं करूँगा। हिन्दी के नये कवियों की शिक्षा के लिए आप एक पुस्तक लिख दें तो अच्छा है। एक काम की चीज़ होगी।

आप आज्ञा करते हैं कि 'भारतोदय'-सम्पादन कीजिये। पर 'भारतोदय' कहाँ है? किसका सम्पादन करूँ? बुरे की जान का या लम्बी दाढ़ी का। 'भारतोदय' गया और हमेशा के लिए गया। गुरुडम के ग्राह के मुँह में खाक पड़े। गुरुडम के दीर्घ-काय देवता पर बिजली गिरे। **'तहे दिल से हम कोसते हैं मगर कि गुरुडम के राक्षस पै बिजली गिरे।'**

दास
पद्मसिंह शर्मा

२५८

नायक नगला
चैत्र कृ० ३०, १९८१

श्री कविजी के चरणों में प्रणाम।

प० बनारसीदास चतुर्वेदी को मैंने लिखा था कि हरदुआगंज कब आइएगा। उनका उत्तर आया है कि ठीक नहीं कह सकता, पर आऊँगा ज़रूर। गांधी-आश्रम से

उन्होंने इस्तीफ़ा दे दिया है। अब इधर ही कहीं आकर बैठेंगे। मैं उन्हें हरदुआगंज यथासम्भव शीघ्र बुलाने की चेष्टा कर रहा हूँ। पर, अबकी बार वहाँ आकर हम लोग जीवनी लिखाने के लिए आपको मजबूर करेंगे, आप टाल न सकेंगे।

विनीत
पद्मसिंह शर्मा

२५६

आगरा
अनन्त चतुर्दशी, १९८२

श्री परम माननीय कविजी के चरणों में प्रणाम।

प० बनारसीदास चतुर्वेदी को साथ लेकर हम लोग शीघ्र चार-पाँच दिन बाद हरदुआगंज आने वाले हैं। पुस्तक छप चुकी है। सिर्फ़ 'सम्मतिसार' का फार्म बाकी है। सम्मतियों में आपकी वह पद्यात्मक सम्मति भी देनी है, जो दूसरे भाग में (बिहारी सतसई भाष्य के) रत्नाकरजी की सम्मति के साथ छपी थी। सम्मति में एक संशोधन कराना उचित प्रतीत हुआ—

"पाकर इष्टादर्श भाष्य को, वाचकवृन्द प्रसन्न हुआ,
माना गौरव 'रत्नाकर' ने, रञ्जन-रत्न प्रदान किया।

इस पद्य में 'रत्नाकर' की जगह कोई और पाठ रखिए, क्योंकि इस बार अन्य अनेक विद्वानों की सम्मतियाँ भी दी जा रही हैं। इस कारण केवल 'रत्नाकर' का उल्लेख उचित न होगा। अन्य सम्मतिदाताओं को शायद खटके। अतः 'रत्नाकर' की जगह कोई और उचित पाठ बनाइए। इसके अतिरिक्त एकाध पद नया बन जाय जो भूमिका-भाग—तुलनात्मक समालोचना पर—सम्मति प्रकट करने वाला हो तो और भी अच्छा है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२६०

नायक नगला
१-१२-२५

श्री पूज्य कविजी के चरणों में प्रणाम।

२५-११-२५ का कृपा-कार्ड पाकर कृतार्थ हुआ। अवकाश मिलते ही सेवा में उपस्थित हूँगा। यह मैं अपने दुरदृष्ट का परिणाम समझता हूँ कि इच्छा रहते भी

आपके चरणों में, कुछ दिन रहने का अवसर नहीं मिल रहा। अपने जीवन के उन घण्टों को मैं पुण्य पर्व का समय समझता हूँ जो आपके सत्संग में बीतें। मनुष्य जो चाहता है, वह नहीं होता, यही तो बन्धन है।

बराबर प्रार्थना करते-करते संकोच होता है, पर प्रार्थना करनी ही पड़ती है कि अपनी कविताओं का संग्रह करा डालिए। प्रिय सतीशंकर(शंकरजी के कनिष्ठ पुत्र) ही कर डालें। बड़ा ज़रूरी काम है। पर इस ओर कोई ध्यान नहीं दे रहा। आप तो 'लोकानुग्रहकांक्षया शंकर-सूक्ति-संग्रह' की चिन्ता कीजिए। यही वह काम है जो आपके जीवन में ज़रूरी और करने योग्य है। बाक़ी सब कुछ होता रहेगा।

विनीत सेवक
पद्मसिंह शर्मा

२६१

काव्य-कुटीर, नायक नगला
श्रावण वदि ६, १९८३

पूज्य श्री कविजी के चरणों में प्रणाम।

२, ६, ७ का कृपा-पत्र पाकर अनुगृहीत हुआ। आपके दर्शनों की उत्कण्ठा सदा ही बनी रहती है। जब अदृष्ट अनुकूल होता है, तभी मनोरथ सफल होता है।

आपकी मूर्ति हृदय में प्रतिष्ठित है, भूलना कैसे ? आपको भूलना अपने को भूलना है, जो हो नहीं सकता। आपको तो महाराज संसार भी नहीं भूलेगा। आप तो 'यादगारे ज़माना' हैं और अमर हैं। उन रससिद्ध कवियों में हैं जिनके विषय में योगिराज भर्तृहरि ने कहा है—

"जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः
नास्ति येषां यशः काये जरा मरणजं भयम्।"

एक उर्दू कवि ने सिद्ध पुरुषों की ओर से क्या कहा है—

"मौत यह मेरी नहीं, मेरी अजल की मौत है
क्यों डरूँ इससे कि मरकर फिर नहीं मरना मुझे।"

दास
पद्मसिंह शर्मा

२६२

काव्य-कुटीर, नायक नगला
अ० सु० ११, १९८३

श्री कविजी महाराज के चरणों में साष्टांग प्रणाम ।

·· ···आपकी सेवा में पहुँचना और आपके दर्शन करना मैं अपने जीवन का फल और पुण्यों का उदय समझता हूँ। दुर्दैव ही इसमें बाधक होता है, जिस पर बस नहीं चलता ।[1]

संसार का इतिहास साक्षी है कि सत्पुरुषों पर सदा विपत्तियाँ आती हैं। यही कारण आपके दुःखित रहने का भी है। फिर आप तो कवि हैं। अकबर ने बिल्कुल ठीक और पते की कही है—

"शिकम होता तो मैं इस अहद में फूला-फला होता,
सरापा दिल बना हूँ इस सबब से कुश्तए ग़म हूँ।"

आप इस उक्ति का पूरा उदाहरण हैं। अपने स्वरूप का ध्यान कीजिए और धैर्य धारण कीजिए। आप महापुरुष हैं, देवता हैं। अधीर होना आपको शोभा नहीं देता, आप अमर हैं। आपकी कविता आपका यश फैलाने को पर्याप्त है। मुझे अपना अनन्य भक्त समझकर दया-दृष्टि रखिए।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

२६३

ज्वालापुर महाविद्यालय
आषाढ़ कृ० १०, ८४

पूज्यपाद श्री कविजी के चरणों में प्रणाम ।

ऐसा कोई दिन ही जाता होगा कि आपकी याद न आती हो। ध्यान द्वारा आपका दर्शन न हो जाता हो। कुम्भ के दिनों में तो प्रतिदिन आपका पुण्य कीर्तन होता था। स्वामी नृसिंहदेवजी 'शंकर-सूक्तियों' का पारायण कलकण्ठ से करते थे और श्रोता गद्गद् होते थे। श्री मालवीयजी महाराज (महामना प० मदनमोहन मालवीय) को

१. नौ महीने में दो पुत्रों की मृत्यु के कारण शंकरजी के चित्त का उद्विग्न और दुखी होना स्वाभाविक था, उस समय शर्माजी ने यह पत्र लिखा था। वे समझाने-बुझाने और सहानुभूति के लिए कई बार कविजी के पास उनकी जन्म-भूमि हरदुआगंज आए भी थे।—सम्पादक।

भी कविता सुनवाई थीं। बहुत प्रसन्न हुए थे। उड़िया स्वामी एक बहुत पहुँचे हुए सहृदय विद्वान् साधु हैं। उन्हें भी 'अनुराग रत्न' की कविता सुनवाई थीं। वह आपकी कविता के प्रेमी हैं।

स्वर्गीय सत्यनारायणजी की जीवनी आपने पढ़ली। बस लेखक का श्रम सफल हो गया। जीवनी चतुर्वेदीजी (प० बनारसीदास चतुर्वेदी) ने बड़े परिश्रम से लिखी है। आपकी जीवनी तो आपके जीवन में ही लिखी जानी चाहिए। पर हम लोगों के प्रमाद से विलम्ब हो रहा है। ईश्वर से प्रार्थना है कि हम लोगों के सिर पर आपका साया अभी बहुत दिनों बना रहे।

सेवक
पद्मसिंह शर्मा

२६४

काव्य-कुटीर, नायक नगला,
श्री स्वा० श्रद्धानन्दजी का
जलाञ्जलि-दिवस
पौष सुदि ६, रविवार

श्री चरणेषु प्रणम्य निवेदयति।

श्री स्वा० श्रद्धानन्दजी शहीद हो गये। मीर का शेर याद आता है—

मर्गे-मजनूं से अक्ल गुम है मीर—
क्या दिवाने ने मौत पाई है !

श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी भाग्यशाली थे। अपने उद्देश्य में सोलह आना सफल हो गये। शुद्धि-आन्दोलन के बुझते हुए कुण्ड को अपनी पूर्णाहुति से प्रज्वलित कर गये। विपरीत फल देखकर दुष्ट आततायी अपनी काली करतूत पर पछताते होंगे। इस घटना पर कोई कविता आप अवश्य लिखें। कविता कलम-तोड़ होनी चाहिए।

इण्डियन प्रेस से 'पल्लव' नाम की पुस्तक निकली है। उसकी भूमिका देखिए। प्राचीन कवियों की बड़ी छीछालेदर की है। धृष्टता की पराकाष्ठा है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

२६५

काव्य-कुटीर, नायक नगला
मा० कृ० ६, ८४

श्री कविजी के चरणों में प्रणाम।

......तुलसीदासजी की कवितावली के एक सवैये में 'मात भरी सहरी सकल

सुत बारे बारे' आया है। वहाँ 'सहरी' का क्या अर्थ है। दीनजी ने 'पत्तल-भरी मछली' अर्थ किया है। पर यह अर्थ वैष्णव तुलसीदासजी को अभीष्ट नहीं हो सकता। यह शब्द कहीं और भी आया है। इस पर विवाद चल रहा है। आप इसका क्या अर्थ करते हैं? कृपाकर शीघ्र उत्तर दीजिए।

सेवक
पद्मसिंह शर्मा

२६६

नायक नगला
१५, ४, २३

श्री कविजी के चरणों में प्रणाम।

सम्मेलन से लौटकर आपका कृपा-पत्र पढ़ा। यह जो कुछ हुआ 'शंकर' भगवान् की कृपा से हुआ। इसकी आशा न थी। मैं इस योग्य तो न था। मुकाबले में बड़े-बड़े महारथी थे। यहाँ इसकी खबर भी न थी। परवा भी न थी कि क्या हो रहा है। पाठकजी, गौड़जी, वियोगी हरिजी की कद्रदानी समझिए। न मालूम किस बात पर रीझ गये। द्विवेदीजी, 'भारत-भारती' के लिए ज़ोर लगा रहे थे और एक दूसरे सज्जन 'प्रिय-प्रवास' के पक्ष में थे। वाजपेयीजी ('स्वतंत्र'-सम्पादक) अलबत्ता 'सतसई' के पक्ष में थे। दुबारा निर्णायक-समिति पाठकजी आदि की बनी। वह 'सतसई' के लिए सहमत हुई।[1]

दास
पदमसिंह शर्मा

२६७

गुरुकुल, काँगड़ी
२६-५-२८

परम पूज्य कविजी महाराज के चरणों में प्रणाम।

हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के सभापति का पाश मेरे गले में पड़ ही गया। देह-धरे का दण्ड भुगतना ही पड़ेगा। गले पड़ा ढोल बजाना ही पड़ेगा। आशीर्वाद दीजिए, इस संकट से सही सलामत निकल आऊँ, जान बच जाय।

---

१. आचार्य श्री पद्मसिंह शर्मा द्वारा लिखी 'बिहारी सतसई' की भूमिका' पर सर्व-प्रथम 'श्री मंगलाप्रसाद-पारितोषिक' प्रदान किया गया था, उसी का उक्त पत्र में उल्लेख है। —सम्पादक

कवि वियोगी हरिजी की 'वीर सतसई' वास्तव में अच्छी है। निर्णायकों में मैं भी था। आपके पास शीघ्र ही उसकी कापी भिजवाऊँगा। वियोगी हरिजी आपको बहुत मानते हैं। उन्होंने मुझे पहले एक बार लिखा था कि 'वीर सतसई' का कुछ अंश शंकरजी को सुनाकर सम्मति लीजिये। मैं उधर न आ सका, न आपको सुना सका। अब भिजवाऊँगा।

विनीत
पद्मसिंह शर्मा

एक ख़ास बात—

····· पर···के लेख के विरुद्ध जो मुक़दमा चल रहा है, उसमें एक सवाल बेढंगे तौर से आ पड़ा है। लेख में लिखा है कि देवियों पर हाथ डालने से जैसे लंका और हस्तिनापुर का नाश हो गया, ऐसे ही···का नाश हो जायगा। लेख का तात्पर्य स्त्रियों पर हाथ डालने से उनको पीटकर अपमानित करने से था। परन्तु वादी का कहना है कि इस वाक्य के द्वारा मुझ पर औरतों के साथ बदचलनी का इलज़ाम लगाया गया है। इसलिए आप किसी हिन्दी या उर्दू ग्रन्थ से कोई प्रमाण ऐसा दीजिये जिससे स्त्रियों पर हाथ डालने का अभिप्राय उनको पीटना—अपमानित करना—होता हो। ऐसा प्रमाण मिल सके तो ज़रूर तलाश कीजिए।

विनीत
पद्मसिंह शर्मा

२६८

गुरुकुल, काँगड़ी
७-६-२८

श्री पूज्य कविजी के चरणों में साष्टांग प्रणाम।

······मेरा तो रोम-रोम आपकी कविता का अनन्य भक्त है। मैं तो आपको न सिर्फ़ वर्तमान् हिन्दी कवियों में ही सर्वश्रेष्ठ महाकवि मानता हूँ, बल्कि अनेक अंशों में प्राचीन कवियों से भी अच्छा समझता हूँ। मैंने अपने इस हार्दिक भाव को कितनी ही बार प्रकट किया है। आपने कुछ दिनों से जो 'भणन्त' के ढंग की कविता लिखनी शुरू की है, उसे लोग पसन्द नहीं करते। पसन्द न करने वालों में आपके भक्त ही अधिक हैं। 'भणन्त' को लेकर जब कोई आक्षेप करता है तो हमें बुरा मालूम होता

है। 'भणन्त' में कविता की दृष्टि से कोई दोष है, यह अभिप्राय नहीं। आपकी लेखनी से जो कुछ भी निकलता है वह साँचे में ढला होता है, इससे तो किसी को इनकार ही नहीं। पर इस रंग-ढंग को लोग पसन्द नहीं करते। भावुक भक्त आपसे बहुत ऊँची आशा रखते हैं। जो लोकमत है वही मैंने निवेदन किया।[1]

क्षमा-प्रार्थी
पद्मसिंह शर्मा

१. स्व० शङ्करजी ने कुछ कविताएँ ऐसी लिखी थीं जिनमें 'भड़ौए' या 'भणन्त' की भाषा में स्पष्ट और तीखी आलोचनाएँ थीं; साहित्यिक व्यंग्य नहीं थे, इसी ओर शर्माजी का संकेत है।—सम्पादक

परिशिष्ट

१

आचार्य प० पद्मसिंह शर्मा

पण्डित पद्मसिंह शर्मा का विद्वत्तापूर्ण साहित्य आज भी सब लोग बड़ी रुचि से पढ़ते हैं और आगे भी इसी प्रकार पढ़ा जाता रहेगा। हमें दुःख तो इस बात का है कि आधुनिक हिन्दी के इतिहास-लेखकों ने उनके साथ प्रायः न्याय नहीं किया। एक इतिहास-लेखक ने तो यह फ़तवा दिया है, **"उनकी भाषा उछलती-कूदती, महफ़िली ढंग की होती थी। वे साहित्य के पारखी न थे। समालोचक तो वे थे ही नहीं।"** हमें आश्चर्य तो यह है कि शर्माजी के सम्बन्ध में ऐसी ऊल-जलूल सम्मति देने वाले वे इतिहास-लेखक हैं जिन्होंने कदाचित् उनकी लिखी एक भी पुस्तक अच्छी तरह नहीं पढ़ी। हमने स्वयं एक विद्वान् इतिहास-लेखक से जानना चाहा, **'महाशय आपने शर्माजी के सम्बन्ध में जो पंक्तियाँ लिखी हैं, उनका आधार क्या है?'** वे बोले, **"पुस्तक तो कोई नहीं पढ़ी। अमुक इतिहास-लेखक ने उनके सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है, वही हमने दस-पाँच शब्द अदल-बदलकर लिख दिया है।"** आप कोई हिन्दी-साहित्य-इतिहास-पुस्तक उठा लीजिये। सब में शर्माजी के सम्बन्ध में प्रायः एक-सी ही सम्मति लिखी पायेंगे। कुछ शब्दों का हेर-फेर अवश्य होगा। यह है हमारे हिन्दी-साहित्य के इतिहास की लेखन-प्रणाली और ऐसी है हमारी राष्ट्र-भाषा की अनुसंधान-शैली! हमने एक बार हिन्दी के एम० ए० के कुछ विद्यार्थियों के सामने श्री पद्मसिंह शर्माजी की विद्वत्ता और लेखन-शैली की प्रशंसा कर उनके विशाल व्यक्तित्व का वर्णन किया। विद्यार्थी बड़े प्रभावित हुए। परन्तु एक सप्ताह भी न हुआ था कि उन्होंने दो-तीन इतिहास हमारे सामने रखते हुए कहा, **"पण्डितजी, आपने तो शर्माजी की उस दिन बड़ी प्रशंसा की थी, परन्तु इन पुस्तकों में तो उनकी भाषा को 'उछलती-कूदती' और 'महफ़िली ढंग की' बताया गया है। उन्हें साहित्य का आलोचक और पारखी भी नहीं माना।"** हमने वे स्थल पढ़े तो लेखकों की बुद्धि पर क्रोध आया और तरस भी। तरस इसलिए कि दस-बीस दिनों में कोर्स के लिए किताबें लिखकर अपना पारिश्रमिक सीधा करने वालों से और आशा भी क्या की जा सकती है। एक दिन तो हमारे आश्चर्य और दुःख की सीमा ही न रही जब एक प्रसिद्ध कालेज के एक

हिन्दी-अध्यापक ने भी प० पद्मसिंह शर्मा विषयक अपनी अनभिज्ञता बताई और बहुत समझाने-बुझाने और याद दिलाने पर भी वे इतना ही कह सके "...**हाँ, हाँ, पद्मसिंहजी थे। वे उर्दू-वुर्दू भी जानते थे।**" यह है हमारे अध्यापकों की मनोवृत्ति और अध्ययन-शीलता, जो साहित्य-महारथी प० पद्मसिंह शर्मा तक को नहीं पहचानने देती, उस संस्कृत, हिन्दी, फ़ारसी और उर्दू के दिग्गज विद्वान् को मामूली उर्दू-वुर्दू जानने वाला कहकर सन्तोष करती है !

प० पद्मसिंह शर्मा संस्कृत-साहित्य के धुरन्धर विद्वान्, उर्दू-फ़ारसी के ऊँचे आलिम और हिन्दी के नवयुग-निर्माता थे। उनकी संस्कृतज्ञता के सम्बन्ध में काशी के महान् पण्डितों से पूछिए। फ़ारसी-उर्दू की जानकारी का हाल 'हाली', 'अकबर', 'चकबस्त' और 'इकबाल' बतायेंगे, जो उनकी इल्मियत से अवाक् रह गये थे। उर्दू-साहित्य को नये साँचे में ढालने वाले प्रोफ़ेसर मोहम्मद हुसेन आज़ाद भी उनकी लियाक़त के क़ायल थे। शर्माजी अपनी एक अद्भुत लेखन-शैली लेकर अवतरित हुए थे, जो उन्हीं के साथ चली गई। 'बिहारी-सतसई' में प्राणों का संचार करने वाले शर्माजी ही थे। उन्होंने ही सबसे प्रथम हिन्दी में तुलनात्मक आलोचना-पद्धति की नींव डाली। एक बार बड़ा मज़ा रहा। शर्माजी दिल्ली में उर्दू के महान् साहित्यकार और कवि श्री सूरजनरायन 'महर' से मिलने गये। परिचय के दौरान में परिचय कराने वाले मित्र ने यह भी कह दिया कि शर्माजी ने 'बिहारी-सतसई' पर बड़ा सुन्दर भाष्य लिखा है। 'बिहारी-सतसई' का नाम सुनते ही 'महर' साहब आवेश में आकर बोले, "**उस गन्दी, भद्दी और फुहश किताब पर जो छूने के काबिल भी नहीं है।**" शर्माजी ने सतसई के सम्बन्ध में ये बेजोड़ वाक्य बड़े धैर्य से सुने और सहन किये। फिर साधारण बातचीत होती रही। उर्दू साहित्य का ज़िक्र छिड़ा।

सत्यनारायण के मन्दिर में, जहाँ शर्माजी ठहरे हुए थे और सतसई-भाष्य का द्वितीय संस्करण छपा रहे थे, आकर शर्माजी ने अपनी लिखी बिहारी-सतसई की भूमिका 'महर' साहब के पास भेजी और उस पर लिख दिया, "**अगर इस किताब के कुछ सफ़े जनाब पढ़ेंगे तो ममनून हूँगा।**" 'महर' साहब के पास भूमिका-भाग पहुँच गया। एक दिन आश्चर्य की सीमा न रही जब वे अपनी लकुटी टेकते-टेकते सत्यनारायण के मन्दिर में पहुँचे और बड़ी विनम्रता से बोले—"**मैं आपकी सारी किताब एक साँस में पढ़ गया। मैंने उस दिन 'सतसई' को गन्दी और 'फुहश' बताया था, आज अपनी उस बेअदबी, गुस्ताख़ी और बदलियाकती के लिए माफ़ी माँगने आया हूँ। मुझे अफ़सोस है, अब तक मैंने आपकी यह पुस्तक नहीं पढ़ी थी। मैं तो आपकी इल्मियत और इतनी बढ़िया स्टाइल के लिए दाद और मुबारकबाद देने आया हूँ।**"

'महर' साहब उस दिन से शर्माजी के अनन्य भक्त बन गये और जिस सतसई को उन्होंने फ़ुहश और गन्दी किताब बताया था, उसी पर बड़ी सुन्दर सम्मति लिखी, जो द्वितीय संस्करण में छपी है।

चकबस्त साहब और महाकवि अकबर ने एक बार पण्डितजी से कहा था **'आप-जैसा इल्मदोस्त हमें दूसरा नहीं मिला।'** हाली साहब की भी यही राय थी। हिन्दुस्तानी एकेडेमी में जब शर्माजी ने अपना निबन्ध पढ़ा तब उस मीटिंग के सभापति जस्टिस सुलेमान ने शर्माजी की लेखन-शैली और विद्वत्ता की भरपेट दाद दी थी। आचार्य द्विवेदीजी शर्माजी की लेखनी के बड़े प्रशंसक थे। हिन्दी की ही भाँति शर्माजी की संस्कृत और उर्दू लिखने की भी बड़ी प्रौढ़ और आकर्षक शैली थी। 'ज़माना' के सम्पादक मुंशी दयानारायण निगम, मुंशी प्रेमचन्द, ख्वाजा हसन निज़ामी आदि शर्माजी की उर्दू लेखन-शैली के बड़े भारी मद्दाह थे। आपकी संस्कृत लेखन-शैली भी बड़ी प्रभावपूर्ण और अद्भुत थी। एक दार्शनिक ग्रन्थ पर शर्माजी की लिखी एक संस्कृत भूमिका को पढ़कर स्वयं उनके संस्कृत-गुरु महान् विद्वान् श्री प० काशीनाथ शास्त्री ने कहा था, **'ऐसी सुन्दर और सरल संस्कृत लिखना पद्मसिंह का ही काम है। मैं स्वयं उस शैली पर नहीं लिख सकता।'** प० पद्मसिंह शर्मा काव्य-साहित्य के साधारण विद्वान् न थे। संस्कृत, फ़ारसी, हिन्दी और उर्दू का ऐसा कोई काव्य-ग्रन्थ न था जिसका उन्होंने अध्ययन न किया था और जिसे वे दूसरों को न पढ़ा सकते थे। पण्डितजी से बड़े-बड़े आचार्य और विद्वान् साहित्य पढ़ने जाते थे। उनका पुस्तकालय विविध भाषाओं के ग्रन्थों का भण्डार है। वे रात-रात-भर पढ़ते और लिखते थे। चिट्ठियाँ लिखने में तो वे हिन्दी में अद्वितीय थे, इस दिशा में उन तक कोई नहीं पहुँच सका। वे नवयुवक लेखकों और कवियों को प्रोत्साहन भी दिल खोलकर देते थे। किसी की कोई रचना पसन्द आई और तुरन्त पत्र लिखकर उसे दाद दी, फिर वह रचना किसी छोटे-से-छोटे विद्यार्थी की ही क्यों न हो! वे ऐसे लेखकों और कवियों को दाद देने प्रायः उनके घर पर भी पहुँचते थे। कहाँ तक लिखें प० पद्मसिंहजी असली अर्थ में साहित्याचार्य और वास्तव में साहित्य-महारथी थे। वे नये युग के प्रवर्त्तक और अभिनव हिन्दी के निर्माताओं में से थे। उनके एक-एक गुण पर पृथक्-पृथक् निबन्ध लिखने की आवश्यकता है। जिस महान् साहित्यकार का इतना अधिक महत्त्व है, उसके सम्बन्ध में हिन्दी के इतिहासकार कितने कंजूस और संकीर्ण हैं, यह बात उनकी लिखी सम्मतियों से प्रकट है। क्या यह पक्षपातपूर्ण प्रवृत्ति हिन्दी को कभी ऊँचा उठने देगी? और क्या यह नकलची इतिहास-लेखक सचमुच इतिहासकार कहे जाने योग्य हैं?

आचार्य श्री प० पद्मसिंह शर्मा के सम्बन्ध में जो कुछ ऊपर लिखा गया है, उसका उद्देश्य उनकी प्रशंसा करना नहीं है। कवि या साहित्यकार की प्रशंसा तो उसकी रचना से ही होती है। फिर स्वर्गीय आत्माओं के लिए प्रशंसा या अप्रशंसा कोई अर्थ नहीं रखती। इन पंक्तियों के लिखने से हमारा प्रयोजन यह है कि जिन साहित्यकारों की सहृदय काव्य-मर्मज्ञों और विद्वानों में इतनी श्रद्धा और प्रतिष्ठा है, उनके सम्बन्ध में हमारे इतिहास-लेखक कितने संकीर्ण हैं। इतिहासकार का कर्त्तव्य महान् है। उसे न्याय-मूर्ति की तरह सत्य घटना का ही उल्लेख करना चाहिए, परन्तु यहाँ तो अजीब हालत है। अपने मित्र, भक्त, श्रद्धेय, शिष्य और साथियों की तो ये नामधारी इतिहास-लेखक प्रशंसा करते-करते नहीं अघाते, परन्तु जो प्रशंसा के सचमुच पात्र हैं, उनकी जान-बूझकर उपेक्षा की जाती है या बेढंगे तौर से उनका उल्लेख होता है।

असल में बात यह है कि प्रारम्भ में जिन दो-तीन विद्वानों ने आधुनिक हिन्दी-साहित्य की रूप-रेखा लिखी उन्होंने बड़ा श्लाघ्य काम किया। परन्तु यह काम बहुत जल्दी में हुआ। फिर उस पर विचार या अनुसन्धान करने के लिए सम्भवतः उन लेखक महानुभावों को समय ही न मिला। नकलची इतिहास-लेखकों ने उन्हीं के आधार पर बिना अधिक छान-बीन किये मक्खी-पर-मक्खी मारना शुरू कर दिया। अपने जान-पहचान के जो इष्ट-मित्र या भक्त-शिष्य मिले उनको भी टाँक दिया और पन्द्रह-बीस दिन में एक वृहद् इतिहास-ग्रन्थ तैयार करके बेचारे प्रकाशक के मत्थे मढ़ दिया। कुछ टके मिल गये और वे इतिहास-लेखक की श्रेणी में भी जा बैठे। चुपड़ी और दो-दो। ऐसे और भी साहित्यकार हैं जिनकी इतिहास-लेखकों ने उपेक्षा और अवहेलना की है। हम इसे इतिहासकारों का अन्याय कहते हैं। हिन्दी में आधुनिक युग के एक सर्वांग सम्पन्न इतिहास की आवश्यकता है, जिसमें साहित्यकारों का पूरा स्वरूप दिखाया जाय और अच्छे-बुरे या साधारण होने का निर्णय स्वयं पाठकों पर छोड़ दिया जाय। रीडरबाज़ी के नाम पर इतिहास-लेखकों द्वारा जो अनर्थ हो रहा है, उसका प्रभाव भावी सन्तान पर अच्छा नहीं पड़ेगा। कुछ दिनों बाद ये इतिहास 'यार-दोस्तों' के स्मृति-पत्र मात्र बन जायँगे और वास्तविकता से कोसों दूर होंगे।

—श्रीराम शर्मा

२
शर्माजी

"शर्माजी जितने बड़े साहित्य-सेवी थे, उससे कहीं बड़े मनुष्य थे। आपसे मिलकर कभी जी नहीं भरता था। नये लेखकों को आप वह प्रोत्साहन देते थे, जो माता अपने लटपते बालक को देती है। मेरे ऊपर तो उनकी असीम कृपा थी। 'सेवा-सदन' उपन्यास-क्षेत्र में मेरा पहला प्रयास था। शर्माजी ने जिस तरह दिल खोलकर दाद दी, वह मैं भूल नहीं सकता। उस समय उनकी कठोर आलोचना ने मेरा अन्त कर दिया होता। उसके बाद जब-जब मुझे उनसे मिलने का सुअवसर मिला, इस तरह टूटकर गले लगाते थे कि चित्त उनके सौजन्य पर पुलकित हो उठता था। सरल जीवन और ऊँचे विचार की ऐसी मिसाल मुश्किल से मिलेगी। ······आप में नवीन और प्राचीन का अभूतपूर्व मेल हो गया था। क्या संस्कृत, क्या हिन्दी, क्या उर्दू, क्या फ़ारसी—आप इन सभी साहित्यों के ज्ञाता थे। अकबर मरहूम के तो आप आशिक ही कहे जा सकते हैं। मैंने आपकी ज़बान से अकबर की सैकड़ों सूक्तियाँ सुनी हैं। आप उन पर मस्त हो जाते थे। हिन्दी में आप एक खास शैली के जन्मदाता हैं—जिसमें चुलबुलापन है, शोख़ी है, प्रवाह है और उसके साथ ही गाम्भीर्य भी। उनका पाण्डित्य उनके काबू में है। वह उस पर शहसवार की भाँति सवार होते हैं। उसकी लगाम ढीली नहीं करते, उसे बहकने नहीं देते। ······कौन जानता था कि हिन्दी-साहित्य का वह सूर्य अपने साहित्य-जीवन के मध्याह्न में यों अस्त हो जायगा।"

—प्रेमचन्द

३
पण्डित साहब

"मुझको आज तक इसकी दाद नहीं मिली थी। दाद एक तरफ़, एक साहब ने मुझसे फ़रमाया था कि 'मैं इस क़िते के मानी नहीं समझा।' वह साहब बहुत ज़ी-इल्म (विद्वान्) और खुद साहिबे-सखुन (कवि) थे, मैं ख़ामोश हो रहा। खुदा ने आपके लिए यह बात रक्खी थी कि इसका मतलब समझिये और दाद दीजिये। असल यह है कि आप साहिबे-दिल हैं। आपने अपनी जबान और मजहब में फिलसफ़ा पढ़ा है और मज़ाके-तसव्वफ़ और हक़परस्ती आप में पैदा हो गई है। खुदा जाने किसने-किसने किन-किन मवाके (अवसर) पर किन अशआर की दाद दी, लेकिन यह तफ़सीली नज़र इस वज्द और लज्जत के साथ ग़ालिबन किसी ने नहीं की······

"आपकी क़ाबलियत और सुख़नफ़हमी ने मुझको आपका आशिक बना दिया है, मेरे लिए दुआ फरमाया कीजिए, अब बजुज यादे-खुदा और जिक्रे आख़रत के कुछ जी नहीं चाहता, लेकिन इस रंग के सच्चे साथी नहीं मिलते, आप बहुत दूर हैं।"

—अकबर इलाहाबादी

श्रद्धेय

परम पूजनीय श्रद्धेयवर

प्रणतयः सादरम् सस्नेहम् !

कृपा-पत्र पाकर अत्यन्त अनुगृहीत हुआ । आपने जो मुझे लोकोत्तर विरुदावलियों से विभूषित किया है यह केवल आपकी कृपा और दाक्षिण्य का अविकल प्रमाण है । मैं तो स्वयं अपने को अत्यन्त अल्पज्ञ जानकर आपकी सहायता का सदैव अभिलाषी हूँ । बात असल यह है कि मुझे इतने शब्दों से भूषित कर आप सहायता देने के परिश्रम से अलग नहीं हो सकते । 'सरस्वती' में जो लेख देने की आज्ञा की गई, सो अनुल्लंघनीय न होने पर भी लेख के असामर्थ्योपहत होने से विलम्बसाध्य होगी । 'सतसई-संहार' लिखकर आपने 'सरस्वती' के पाठकों का जो आशीर्वाद ग्रहण किया है सो उसकी पुष्टि मेरे-से अल्पज्ञ के लेख से कैसे हो सकती है । प्रथम तो ऐसा विषय नहीं सूझता जिस पर हिन्दी-रसिकों का अनुराग हो, द्वितीयतः हिन्दी लेख में भी सामर्थ्य नहीं । आप कुछ विषय निर्देश करें तो कुछ यत्न हो । 'समाज-संशोधन' वाला लेख आपको इतना पसन्द होगा, यह मुझे कभी धारणा नहीं थी । यदि उधर 'भारतोदय' कृतार्थ हुआ तो इधर मैं भी कृतार्थ हुआ । हिन्दी लेखन जन्म सफल हुआ । आशा है, अपने समुचित उपदेशों से आप मुझे सदा कृतार्थ करते रहेंगे ।

७, १ वेचू चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता
तारीख १४, शु० पौष १९६७

आपका परम सेवक
राजेन्द्र